कक्षा XI

भाग I

जीव विज्ञान

कक्षा XI के लिए पाठ्यपुस्तक

भाग I

मिता मजूमदार   देवज्योति दास   एच.वाई. मोहन राम

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

जनवरी 1990
माघ 1911

PD 5T–NSY

प्रकाशन सहयोग

सी. एन. राव, **अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग**

प्रभाकर द्विवेदी, **मुख्य सम्पादक**
दिनेश सक्सेना, **सम्पादक**
नरेश यादव, **सम्पादन सहायक**

यू. प्रभाकर राव, **मुख्य उत्पादन अधिकारी**
सुरेन्द्र कांत शर्मा, **उत्पादन अधिकारी**
चंद्र प्रकाश टंडन, **कला अधिकारी**
टी. टी. श्रीनिवासन, **सहायक उत्पादन अधिकारी**
कर्ण कुमार चड्ढा, **वरिष्ठ कलाकार**

आवरण : चन्द्र प्रकाश टंडन

मुख पृष्ठ : अमेजन लिली को दर्शाते हुए एक उष्णकटिबंधीय संरक्षण स्थल
अंतिम पृष्ठ : खिला हुआ *टैकोमेल्ला अर्जेंटिया*
पारदर्शियाँ : **एच. वाई. मोहनराम**

मूल्य: रू० 19.00

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा अनुराग एन्टरप्राइजेज [illegible] ओखला II नई दिल्ली में फोटो कम्पोज होकर जे के ऑफसैट प्रिन्टर्स, जामा मस्जिद, दिल्ली 110 006 द्वारा मुद्रित।

प्रस्तावना

कुछ समय से विज्ञान की शाखा जीव विज्ञान की सामग्री तथा उसके पढ़ाने की विधि में बहुत से सुधार हुए हैं। पिछले तीन दशकों में इसके ज्ञान में बहुत वृद्धि हुई है जिससे जीवन के विज्ञान का बहुत विकास हुआ है। आधुनिक जीव विज्ञान में सबसे अधिक विकास कृषि, औषधि, बायोटैक्नोलोजी, बायोमैडिकल इंजीनियरिंग, पर्यावरण जीव विज्ञान तथा आनुवंशिकी इंजीनियरिंग के क्षेत्र में हुआ है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में भी इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि विद्यालयी शिक्षा के सभी स्तरों पर विज्ञान की शाखा जीव विज्ञान में गुणात्मक सुधार लाए जाएँ। इस नीति की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यह परम आवश्यक है कि जीव विज्ञान जो हमारी दिनचर्या का एक मुख्य अंग बन गया है, में जनता की भावनाओं तथा समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप सुधार किया जाए। कक्षा 11 की प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक जीव विज्ञान इसी शिक्षा नीति के अन्तर्गत लिखी गई है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने 1986 में प्रोफेसर सी.एन.आर. राव., निदेशक, इन्डियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस, बंगलौर, की अध्यक्षता में उच्चतर प्राथमिक कक्षा से लेकर उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं तक विज्ञान एवं गणित की पुस्तकें लिखने के लिए एक सलाहकार समिति का गठन किया था। प्रोफेसर एच.वाई. मोहन राम, वनस्पति विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, की अध्यक्षता में जीव विज्ञान की पुस्तक लिखने वाले लेखकों की एक समिति बनी जिन्होंने उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के लिए पुस्तक लिखी। अनुसंधान संस्थाओं के विख्यात वैज्ञानिक, विश्वविद्यालयों के विद्वान शिक्षक, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. के वरिष्ठ जीव विज्ञान क्षेत्र के शिक्षाशास्त्री, तथा विद्यालय के शिक्षक इस समिति के सदस्य थे।

इस पुस्तक को लिखने में समिति के अध्यक्ष प्रो. एच.वाई. मोहन राम, तथा सदस्यों ने सतत् प्रयत्न किया है। मैं उन सबका हार्दिक धन्यवाद करता हूँ। इस पुस्तक की पांडुलिपि का पुनरावलोकन एक राष्ट्रीय गोष्ठी में किया गया था जिसमें बहुत से शिक्षकों ने भाग लिया था मैं उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

मैं प्रोफेसर बी. गांगुली, विभागाध्यक्ष, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., का भी धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने बंगलौर तथा दिल्ली में गोष्ठी आयोजन के लिए समिति की पूरी सहायता की। मैं श्री सी.एन. राव, विभागाध्यक्ष, प्रकाशन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. तथा उनके सहयोगियों का भी धन्यवाद करता हूं जिन्होंने पुस्तक को इतना अच्छा रूप दिया। अन्त में मैं प्रोफेसर जे. मित्रा, समिति के संयोजक, का भी धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में सतत् प्रयत्न किया है।

श्रीमती मधुरवीना ने इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद किया है। प्रस्तुत अनुदित संस्करण की पांडुलिपि का

पुनर्वीक्षण एक कार्यशाला में किया गया था। परिषद् अनुवादक तथा सभी प्रतिभागियों की आभारी है। इस पुस्तक के हिन्दी संस्करण की पांडुलिपि तैयार करने, सम्पादन करने तथा उसके कार्य के समन्वयन का श्रेय विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के श्री कृष्ण भगवान गुप्त को है।

इस पुस्तक के सुधार के लिए सुझाव आमंत्रित हैं।

पी.एल. मल्होत्रा
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्

आमुख

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने सभी स्तरों पर विज्ञान के महत्व पर बल दिया है। माध्यमिक शिक्षा के नए पाठ्यक्रम में कक्षा 10 तक विज्ञान को एक माना गया है। इस कक्षा में विज्ञान की मुख्य धारणाओं को पढ़ने के बाद विद्यार्थी कक्षा 11 में आएँगे जिन्हें विज्ञान को अलग-अलग क्षेत्रों जैसे भौतिकी, रासायन शास्त्र, जीव विज्ञान तथा गणित से अवगत कराया जाएगा।

जीव विज्ञान की विकास समिति के सदस्यों को सलाह दी गई थी कि जीव विज्ञान की पुस्तक ऐसी बनाएँ जिससे विद्यार्थियों में पूछ-ताछ सृजनात्मक, लक्ष्यात्मक प्रश्न करने की हिम्मत, सौंदर्य प्रशंसा तथा पर्यावरण के प्रति सजग रहने की आदत बन सके। भारत में अधिकांश विद्यार्थी कुछ ही कक्षाओं तक विज्ञान पढ़ते हैं और जो विज्ञान को आगे पढ़ना चाहते हैं उनकी संख्या बहुत ही कम है।

ऐसी पुस्तक तैयार करना जिसमें जीव विज्ञान का मुख्य ज्ञान हो, रुचि जागृत हो, समस्या निवारण तथा निर्णय करने की योग्यताएँ विकसित करनी हों, सरल कार्य नहीं है।

हाल ही में जीव विज्ञान के स्वभाव में बहुत से परिवर्तन आए हैं। जीव विज्ञान अब विवरणात्मक विषय नहीं है। बहुत से भौतिक यंत्रों तथा रासायनिक विधियों के कारण जीव विज्ञान अब विश्लेषणात्मक हो गया है। बहुत अधिक अनुसंधान होने के कारण आण्विक जीव विज्ञान क्षेत्र में हमारा ज्ञान बहुत अधिक बढ़ गया है। इस ज्ञान से अब हम कोशिका का रचनात्मक संगठन तथा उसकी क्रियाओं को आण्विक स्तर पर भलिभाँति समझने लगे हैं। डी.एन.ए. रिकम्बीनेन्ट विधि द्वारा जीवों में आनुवंशिक परिवर्तन किए जाते हैं जिससे कि वे हमारे लिए उपयोगी हो सकें।

रोगों का पता लगाने की विधियों में भी सुधार हुए हैं, जिस कारण उनको रोगों का भी शीघ्र पता लग जाता है। जीवन की उत्पत्ति तथा विकास, जीन, प्रोटीन, झिल्लियों तथा न्यूरॉन की कार्य शैली और विभिन्नता, जनन, व्यवहार तथा अनुकूलन को समझने के लिए वैज्ञानिकों में एक नया उत्साह है।

पिछले कुछ दशकों में बहुत परिवर्तन हुए हैं। मनुष्य ने अपने पर्यावरण को बदला है और किसी अन्य जीव ने पहले ऐसा कभी नहीं किया था। जनसंख्या में वृद्धि हुई है। संसाधनों की कमी हुई है। पृथ्वी की हरियाली नष्ट हुई है। बहुत से जीव लुप्त हो गए हैं। सूखा, बाढ़, अकाल, तथा अन्य विपत्तियों ने संसार के बहुत से भागों को प्रभावित किया है। ध्रुवीय क्षेत्रों पर ओजोन की परत में हानि हुई है। वातावरण में कार्बन डाइआक्साइड तथा अन्य प्रदूषकों की मात्रा बढ़ी है। मिट्टी तथा पानी में विषैले रसायन एकत्र हो गए हैं। संसार के बदलते मौसम, तथा वर्षा के पैटर्न भी विचारणीय हैं। नाभिकीय प्रदूषण भी बहुत गम्भीर है।

आने वाले वर्षों में जीव विज्ञान को संसार के लिए खाद्य सामग्री, पीने योग्य पानी, आश्रय तथा स्वास्थ्य के लिए नई-नई विधियाँ खोजनी पड़ेंगी। भुखमरी, गरीबी तथा बीमारियों से बचाने तथा प्रदूषण को नष्ट करने एवं प्राकृतिक सजीव संसाधनों तथा क्षेत्रों को बनाए रखने, पारितंत्र के अपघटन को बचाने तथा लोगों के जीवन में सुधार लाने तथा जैविक संरक्षण करने में जीव विज्ञान की भूमिका प्रमुख है। सारांश में जीव विज्ञानी के सामने ये सब एक चुनौती है।

समिति ने प्रस्तुत जीव विज्ञान की पुस्तक लोगों की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए लिखी है। जीवन की इकाई को जीवों की विविधता तथा उनकी पारिस्थितिकी एवं विकासीय सार्थकता से जोड़ने का प्रयत्न किया गया है।

इस पुस्तक को लिखने के लिए बहुत से लेखकों का योगदान लिया गया है इसलिए लिखने की विधि में अन्तर होना स्वाभाविक है। जीव विज्ञान की धारणाओं के स्पष्टीकरण का विशेष ध्यान रखा गया है। विषय तथा प्रशिक्षण की सार्थकता को कोई हानि पहुँचाए बिना तकनीकी शब्दों का उपयोग कम के कम किया गया है। जिज्ञासा तथा विचारों को जागृत करने के लिए पाठों में जीव विज्ञान की दिलचस्प सूचनाएं बाक्स में दी गई हैं। बॉक्स में दी गई सूचनाएँ पाठ्य सामग्री के अंग नहीं हैं इसलिए इन्हें परीक्षा में न पूछा जाए। पुस्तक में बहुत से चित्र, फ़ोटो तथा तालिकाएँ भी दी गई हैं। पाठ के अन्त में विद्यार्थियों के लिए कुछ प्रश्न दिए गए हैं। प्रत्येक इकाई के बाद और अधिक पढ़ने के लिए उपयोगी पुस्तकों की एक सूची भी दी गई है। इस पुस्तक के पढ़ने के बाद पाठकों की विभिन्न प्रतिक्रियाएँ होंगी। इस राष्ट्रीय योगदान में इस पुस्तक के सुधार हेतु सुझाव आमंत्रित हैं।

इस पुस्तक को पूरा करने में बहुत से लोगों ने विभिन्न प्रकार से सहायता की है। स्थानाभाव के कारण उन सबका धन्यवाद करना कठिन है। समिति के सदस्यों तथा लेखकों, जो बुद्धिजीवी, समर्पित तथा विश्लेषक थे, के साथ कार्य करने में मुझे अपार हर्ष हुआ है। मैं सदस्यों तथा लेखकों का जिन्होंने मित्रता की भावना लिए परिश्रम से कार्य किया तथा मुझमें विश्वास किया, धन्यवाद करता हूँ।

मैं डा.पी.एल. मल्होत्रा, निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी. का भी धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को पूरा करने में सभी चरणों में पूरा सहयोग दिया। मैं प्रोफेसर सी.एन.आर. राव, निदेशक, इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस, बंगलौर, का भी धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने मुझे तथा जीव विज्ञान पुस्तक समिति के अन्य सदस्यों को यह महत्वपूर्ण तथा चुनौतीपूर्ण कार्य सौंपा।

मैं प्रोफेसर बी. गांगुली, विभागाध्यक्ष, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. का भी आभारी हूँ जिन्होंने योजना के सभी स्तरों तथा कार्य को कार्यान्वित करने में सहयोग दिया। मैं प्रोफेसर जे. मित्रा, प्रो. डी. लाहिड़ी, डा. शकुंतला भट्टाचार्य (सभी एन.सी.ई.आर.टी. से), डा. सुमन बग्गा, डा. मनासी राम, कु. अमीता बाविसकर तथा डा. बी. थेलमा का ऋणी हूँ जिन्होंने अध्याय की सामग्री का विवेचन किया, पांडुलिपि के कुछ अंशों को पढ़ा और उपयोगी सुझाव दिए। मैं डा. बी. हरीगोपाल, डा.एम.एन.बी. नायर, प्रो. एम.आर.बी. राव तथा कु. अरूणा शर्मा की भी भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ जिन्होंने विभिन्न प्रकार से सहायता की। श्री एस.के. मजूमदार, श्री सुनील दत्त, श्री शानमुगा सुन्दरम् तथा श्रीमती प्रेमलता गुसैन ने इस पुस्तक के चित्र बनाए हैं। श्रीमती सुन्दरी जी. आयर ने इस पुस्तक के उत्पादन में सहायता की है। मैं उनका भी आभारी हूँ।

वनस्पति विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली 110 007

एच. वाई मोहन राम
अध्यक्ष
जीव विज्ञान पाठ्यपुस्तक विकास समिति

जीव विज्ञान पाठ्यपुस्तक विकास समिति
कक्षा XI

प्रो. एच. वाई. मोहन राम (चेयरमैन)
वनस्पति शास्त्र विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

प्रो. वी.एस. रामादास
डीन, फैकल्टी ऑफ साइंस तथा
चेयरमैन, वनस्पति शास्त्र विभाग
एस.वी. विश्वविद्यालय
तिरुपति

प्रो. एच. शरत चन्द्र
माइक्रोवायोलोजी तथा सेल वायोलोजी,
लैबोरेट्री, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस
बंगलौर

डा. सुमन बग्गा
लैक्चरार
डिपार्टमैन्ट ऑफ एजूकेशन
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

डा. एस. महादेवन
एसोसिएट प्रोफेसर
डिपार्टमैन्ट ऑफ बायोकैमिस्ट्री
इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस
बंगलौर

प्रो. जी. पदमानाभन
डिपार्टमैन्ट ऑफ बायोकैमिस्ट्री
इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस
बंगलौर

श्री देवज्योति दास
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
डिपार्टमैन्ट ऑफ फीजियोलोजी
प्रेज़ीडेन्सी कॉलेज
कलकत्ता

प्रो. एम.के. चन्द्राशेखरन
अध्यक्ष, डिपार्टमैन्ट ऑफ एनिमल विहेवियर
मदुरै, कामराज यूनिवर्सिटी
मदुरै

श्रीमती भारती सरकार
लैक्चरार (जूलौजी)
मैत्रीय कॉलेज
नई दिल्ली

श्रीमती मीता मजूमदार
पी.जी.टी. (बायोलोजी)
दिल्ली पब्लिक स्कूल
मथुरा रोड, नई दिल्ली

श्री जफर फुटेहाली
17/1, विक्टोरिया रोड
बैंगलौर

प्रो. बी. गांगुली
विभागाध्यक्ष, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग
एन.सी.ई.आर.टी.
नई दिल्ली

कृतज्ञताज्ञापन

जीव विज्ञान की पाठ्यपुस्तक की विकास समिति ने पुस्तक की पांडुलिपि के मसौदे के विषय विशेषज्ञों तथा ऐसे विषय शिक्षकों के साथ विवेचना करना मूल्यवान समझा। इस कार्य को पूरा करने के लिए एक राष्ट्रीय स्तर पर पुनरावलोकन कार्यशाला का आयोजन एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, के तत्वावधान में 21 सितम्बर 1987 से 25 सितम्बर 1987 तक किया गया था। इस कार्यशाला में प्राप्त प्रतिक्रियाओं के आधार पर पाठों में बहुत से परिवर्तन किए गए।

राष्ट्रीय पुनरावलोकन कार्यशाला में निम्नलिखित प्रतिभागियों ने भाग लिया:

प्रो. आर.एन. कपिल, वनस्पति विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय; प्रो. मनोहर लाल, वनस्पति विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय; डा. डी. कुल्हाडा, प्रोफेसर वनस्पति, स्टेट इस्टीच्यूट ऑफ साइंस एजूकेशन, जबलपुर (एम.पी.); श्रीमती इन्दर मोहनी चुग, पी.जी.टी. (बायोलोजी), गवर्नमेन्ट गर्ल्स सीनियर सेकंडरी स्कूल, एन्ड्रयूज़गंज, नई दिल्ली; डा. जी. राजेन्द्रुदु, लेक्चरार बोटनी, श्री वैंकेटेशवरा यूनीवर्सिटी, तिरुपति; श्री एस.पी. सक्सैना, जूनियर कौंसिलर, स्टेट कौंसिल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च एन्ड ट्रेनिंग, नई दिल्ली; श्री जे.एस. मावलंकर, सहायक शिक्षक, सेठ एन.टी.एम. हाई स्कूल, सुरेन्द्र नगर, गुजरात; श्री सुरेश चन्द्र शर्मा, पी.जी.टी. (बायोलोजी), ग.व.सी.से. स्कूल, सैक्टर VI, आर.के.पुरम, नई दिल्ली; श्रीमती वासंता पद्मनाभन, पी.जी.टी. (बायोलोजी), केन्द्रीय विद्यालय, एफ.आर.आई., देहरादून; (यू.पी.); श्री एस.डी. रुकमन्नाद, लेक्चरार, स्टेट कौंसिल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग, जहांगीराबाद, भोपाल (एम.पी.); श्रीमती एस.पी. शर्मा, पी.जी.टी. (बायोलोजी) केन्द्रीय विद्यालय, जे.एन.यू. कैम्पस, नई दिल्ली; कु. लता खन्ना, पी.जी.टी. (बायोलोजी), केन्द्रीय विद्यालय, लारेन्स रोड, दिल्ली; श्री दामोदर तिवारी, पी.जी.टी. (बायोलोजी), ग.व.सी.से. स्कूल, नेताजी नगर, नई दिल्ली; श्रीमती सुषमा मिश्री, रिसर्च आफिसर (जूलोजी), स्टेट इस्टीच्यूट ऑफ एजूकेशन, जम्मू, (जे.एन्ड के. स्टेट); श्री अब. हमीद तेली, लेक्चरार (बोटनी), ग.हा.से. स्कूल, जिला कुपवारा, हन्डवारा, कश्मीर (जे. एन्ड के. स्टेट); श्री अब्दुल एहाद दर, लेक्चरार (जूलोजी), ग.हा.से. स्कूल (बा.) हन्डवारा, जिला कुपवारा, कश्मीर, (जे. एन्ड के. स्टेट); श्री वाई.पी. पुरंग, डिप्टी डाइरेक्टर ऑफ एजूकेशन, डाइरेक्ट्रेट ऑफ एजूकेशन, दिल्ली एडमिनिस्ट्रेशन,दिल्ली; कु. अरुणा शर्मा, पी.जी.टी. (बायोलोजी), दिल्ली पब्लिक स्कूल, आर.के.पुरम, नई दिल्ली तथा श्रीमती एस. वर्मा, सीनियर पी.जी.टी. (बायोलोजी), केन्द्रीय विद्यालय, एन्ड्रयूज़ गंज, नई दिल्ली। मैं इन प्रतिभागियों का धन्यवाद करता हूँ।

समिति अन्य बहुत से शिक्षकों तथा विषय विशेषज्ञों की भी ऋणी है जिन्होंने अपने विश्लेषणात्मक सुझाव दिए। ये सुझाव पाठों को सुधारने में बहुत सहायक सिद्ध हुए। मैं निम्नलिखित का भी आभारी हूँ जिन्होंने विभिन्न प्रकार से सहायता की है।

प्रो. सी.एम.एस. दास, डा. एम.एन.बी. नायर, डा. जे.आर. भट, डा. पी. एस. श्रीवास्तव, डा. के.आर. शिवरना (इलैक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ), डा. बी.एस. वेन्केटाचला, निदेशक, बीरबल साहनी इंस्टीच्यूट ऑफ पेलियो बोटनी, लखनऊ (जियोलोजिकल क्लॉक तथा सायनोबैक्टीरियम के जीवाश्म के चित्र); डा. एस.एम. नायर, निदेशक, नेशनल म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, नई दिल्ली (किन्गफिशर का चित्र जिसे श्री हनुमन्ता राव ने लिया था); प्रेज़ीडेन्ट

इंडियन नेशनल एकेडेमी ऑफ साइंस, नई दिल्ली; निदेशक, इन्डियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस, बंगलौर।

विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग ने 16 जनवरी 1989 से 21 जनवरी 1989 तक अनुदित संस्करण की पांडुलिपि के पुनरावलोकन के लिए एक राष्ट्रीय स्तर की कार्यशाला का आयोजन किया था। इस कार्यशाला में विभिन्न प्रदेशों से विषय को पढ़ाने वाले शिक्षकों को आमंत्रित किया गया था। उन्होंने अनुवाद की समस्त सामग्री का पुनः निरीक्षण किया और आवश्यक परिवर्तन किए जिससे कि पुस्तक का हिन्दी रूपान्तर सभी प्रदेशों में अच्छी तरह समझा जा सके। सभी प्रतिभागियों (जिनकी एक सूची नीचे दी गई है) ने बड़ी लगन से कार्य को पूरा किया। मैं सभी प्रतिभागियों का धन्यवाद करता हूँ।

1. डा. भूपिन्दर सिंह
   पी.जी.टी. (जीव विज्ञान)
   गवर्नमेन्ट बायज़ सीनियर सेकंडरी स्कूल
   अशोक नगर, नई दिल्ली-110 027
2. श्री बलबीर शर्मा
   लेक्चरार (जीव विज्ञान)
   साइंस यूनिट, एस.सी.ई.आर.टी.
   गुड़गाँव, हरियाणा
3. डा. नन्ना लाल व्यास
   लेक्चरार (जीव विज्ञान)
   गवर्नमेन्ट गर्ल्स सीनियर सेकंडरी स्कूल
   प्रतापगढ़, जिला चित्तोड़गढ़ (राजस्थान)
4. डा. (कु.) डी. कुल्हाडा
   प्रोफेसर (बोटनी)
   स्टेट इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस एजूकेशन
   जबलपुर (मध्य प्रदेश)
5. श्री राजकुमार शर्मा
   लेक्चरार (जीव विज्ञान)
   गवर्नमेन्ट न्यू सीनियर सेकंडरी स्कूल, अलवर (राजस्थान)

अन्त में मैं कुमारी स्मृति सूद, जूनियर प्रोजेक्ट फैलो, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में लगातार सहायता की है।

एच.वाई. मोहन राम
अध्यक्ष
जीव विज्ञान पाठ्यपुस्तक
विकास समिति

विषय सूची

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

रंगीन फोटोग्राफ

पृष्ठ संख्या 1 किलकिला (Kingfisher)
(सौजन्यः नेशनल म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, नई दिल्ली
फोटोग्राफः श्री हनुमन्ता राव)

पृष्ठ संख्या 9 पैसियन फूल की सुन्दरता तथा सममिति (summetry)
(फोटोग्राफः प्रो. एच.वाई. मोहनराम)

पृष्ठ संख्या 18 पौधे कच्ची सामग्री के रूप में कारखानों को सेल्यूलोज तथा बहुत से अन्य उत्पाद देते हैं।
(फोटोग्राफः प्रो. एच. वाई मोहनराम)

पृष्ठ संख्या 42 बहुत समय से प्रचलित भूगर्भीय घड़ी
(सौजन्यः डा. बी.एस. वैंकेटाइचल, डायरेक्टर, बीरबल साहनी इन्स्टीच्यूट
ऑफ पेलियोबोटेनी, लखनऊ)

पृष्ठ संख्या 54 प्रकाश सूक्ष्मदर्शी के नीचे मूलाग्र की विभाजित कोशिकाएँ तथा अन्तराल अवस्थाएँ
(सौजन्यः डा. बी. थैलमा)

पृष्ठ संख्या 99 मनुष्य के शरीर में कोशिका द्वारा लाल रुधिर कोशिकाओं का प्रवाह। इन रुधिर कोशिकाओं के चारों ओर स्थित पतली झिल्ली गैसों का आदान प्रदान करती हैं। *(सौजन्यः* जीव विज्ञान प्रयोगशाला, *गणित एवं विज्ञान शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी.)*

पृष्ठ संख्या 136 एक कोशिकीय जीव—युग्लीना। फ्लूरोसैन्स माइक्रोस्कोप से दिखाई देने वाले चमकदार केन्द्रक को देखो।
(सौजन्यः डा. एस. चटर्जी)

अध्याय 1
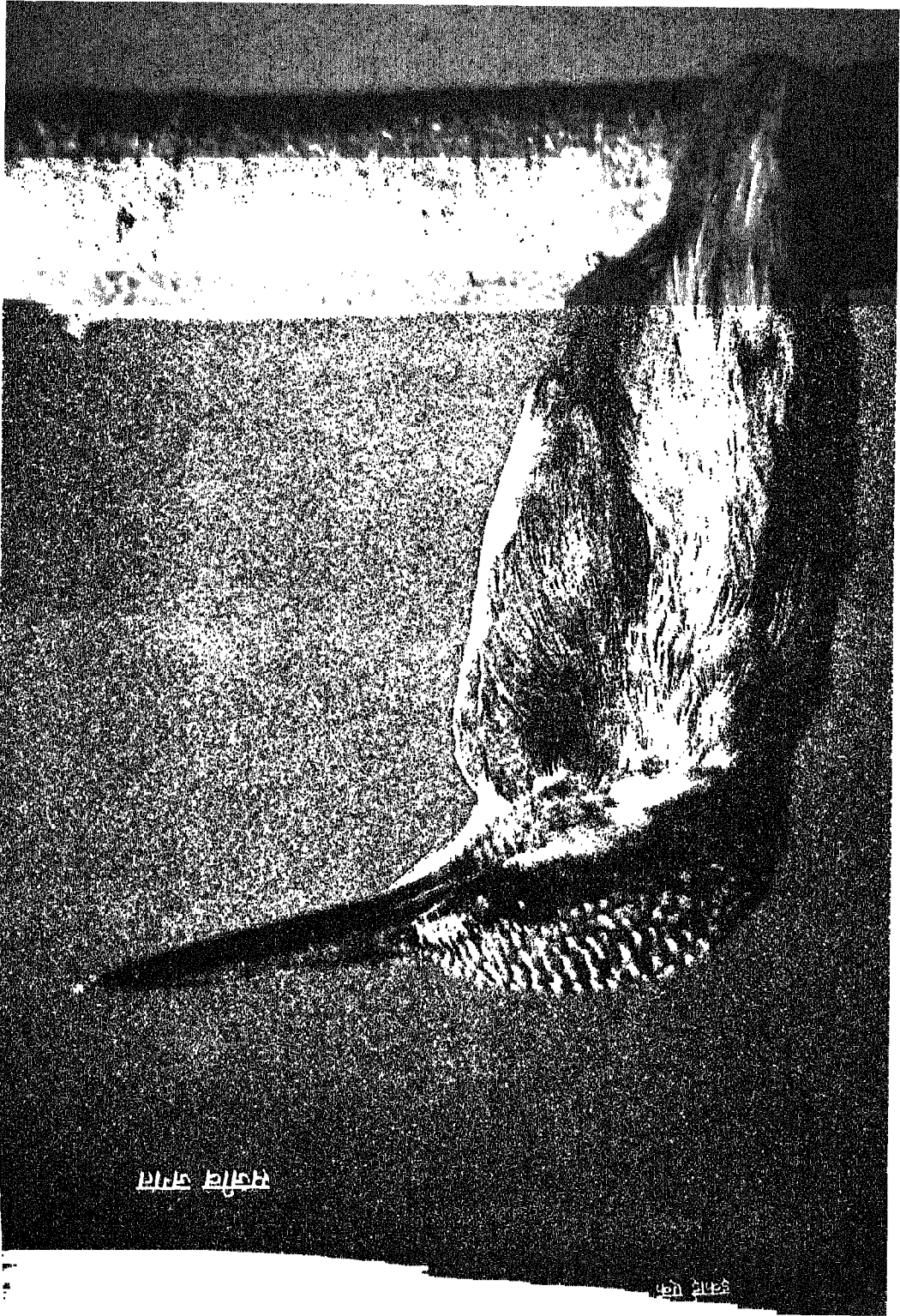
जीव विज्ञान की प्रकृति तथा क्षेत्र

जीव विज्ञान सजीवों का विज्ञान है (ग्रीक भाषा में *बायोस का अर्थ* जीवन तथा *लोगोस* का अध्ययन)। यह परिभाषा बहुत सरल प्रतीत होती है लेकिन वास्तव में बहुत ही जटिल है। इसका अध्ययन हम बाद में करेंगे।

जीवविज्ञान का उदय मनुष्य की सजीवों के प्रति जिज्ञासा तथा उत्तरजीविता की आवश्यकता के कारण हुआ होगा। जीवविज्ञान का ज्ञानक्रम लम्बे समय तक वैज्ञानिक तथा वैज्ञानिकों के समूहों द्वारा आविष्कार करने का फल है।

जीव वैज्ञानिक क्या अध्ययन करते हैं?

जीव वैज्ञानिक कैसे कार्य करते हैं और वे क्या अध्ययन करते हैं? वे अपने चारों ओर पाई जाने वाली वस्तुओं का नामकरण, उनका विवरण और वर्गीकरण करते हैं। यहाँ तक कि आदि मानव भी इन्हीं क्रियाकलापों को जाने अनजाने में करता रहा होगा। उसका अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता था कि वह अपनी उपयोगी तथा अनुपयोगी वस्तुओं को पहचान सके। जीव वैज्ञानिक लगातार नए-नए जीवों की खोज करते रहे हैं तथा उन्हें वैज्ञानिक नाम देकर वर्गीकृत करते रहे है।आप आश्चर्य करेंगे कि क्रिया कलाप महत्वपूर्ण क्यों है? क्या आप जानते हैं : जन्तुओं की लगभग 12,00,000 स्पीशीज हैं जो पौधों की लगभग 500,000 स्पीशीज पर निर्भर करती हैं? इस संख्या मे प्रतिवर्ष 15,000 नई प्रकार की स्पीशीज की वृद्धि हो जाती है। जिन जन्तुओं तथा पौधों की स्पीशीज का अभी पता लगाना है वे अमेरिका, एशिया तथा अफ्रीका के उष्णकटिबंधीय जंगलों में छिपी हुई हैं। प्रत्येक स्पीशीज अपने ढंग में निराली है, चाहे वह हमारे लिए आर्थिक महत्व की है या नहीं। जीवविज्ञान की वह शाखा जो किसी स्पीशीज की पहचान, नाम तथा वर्गीकरण से सम्बन्ध रखती है *वर्गिकी* कहलाती है। वर्गिकी चिरस्थापित विज्ञान है और जीवों के नामकरण करने के लिए *अन्तर्देशीय नियम* बने हुए हैं।

किसी जीव का सही वर्णन करने के लिए प्रशिक्षण तथा ऐसी शब्दावली की आवश्यकता होती है जो जीवविज्ञान के लिए अद्‌भुत है। आकार तथा बाह्य रचना के अध्ययन को *आकारिकी* कहते हैं। भीतरी रचना का बाह्य रचना से अति सम्बन्ध होता है। संरचनाएँ जो बाहर से समान प्रतीत होती हैं, भीतरी रचना में बिल्कुल भिन्न हो सकती हैं। ऐसे भी बहुत से उदाहरण हैं (जैसे लंगूर तथा मनुष्य) जिनमें भीतरी रचना समान होती है लेकिन बाहरी रचना

भिन्न होती है। पौधों तथा जन्तुओं की भीतरी रचना के अध्ययन को *शारीरिकी* कहते हैं। मानव शारीरिकी बहुत ही विशिष्ट है। आज हमारे पास मानव शारीरिकी के विषय में बहुत ही अधिक सूचनाएँ हैं। हम ऊतक की विस्तृत संरचना विभिन्न प्रकार के प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से देख सकते हैं। इसके लिए एक विस्तृत प्रक्रम जैसे स्पेशीमैन का स्थिरीकरण, निर्जलीकरण, अंतः स्थित करना, काटना तथा अभिरति करना और फिर आरोपित करना है। ये सब अध्ययन *ऊतकी विज्ञान* के अंतर्गत आते हैं।

सभी जीव कोशिकाओं से बने होते हैं। कोशिका की संरचना, कार्य, जनन तथा जीवन चक्र, जीव के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कोशिका के इस अध्ययन को *कोशिका विज्ञान* (Cell Biology) कहते हैं। कोशिका की सूक्ष्म संरचनाओं को समझने में इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का बहुत ही अधिक योगदान रहा है। कोशिकीय स्तर पर जीवों में बहुत ही समानता होती है।

जैव अणु का भौतिक-रासायनिक संगठन, जीवविज्ञान का अत्यधिक आधुनिक तथा उत्तेजक क्षेत्र है। उदाहरण के लिए न्यूक्लीक एसिड की रचना, प्रोटीन के घटक तथा उनके संश्लेषण की प्रक्रिया। अब यह विश्वास किया जाता है कि कोशिका का कार्य अणु के स्वभाव तथा उसकी पारस्परिक क्रियाओं पर निर्भर करता है। इस प्रकार के अध्ययन को *अणु या अणु जैविकी जीवविज्ञान* कहते हैं।

जैव-प्रक्रियाएँ जीव में घटने वाली क्रियाओं का परिणाम हैं। जीवन से संबंधित प्रक्रियाओं तथा कार्यों (जैसे श्वसन तथा पाचन) के अध्ययन को *शरीर क्रिया विज्ञान* कहते हैं।

लगभग सभी बहुकोशिकीय जीव अपना जीवन एक एकल कोशिका युग्मनज से आरम्भ करते हैं। इस प्रारम्भिक कोशिका में समन्वयित तथा क्रमबद्ध विभाजन होने से भ्रूण बन जाता है। प्रारम्भिक भ्रूण आकारविहीन होता है और यह व्यस्क से बिल्कुल भिन्न होता है। भ्रूण से व्यस्क बनने में विभिन्नता तथा वृद्धि की बहुत सी क्रमबद्ध एवं समन्वयित प्रक्रियाएँ होती हैं। अंडे के निषेचन से लेकर भ्रूण के परिवर्धन तक की क्रमबद्ध घटनाओं के अध्ययन को *भ्रूण विज्ञान* कहते हैं। आजकल बहुत सी विधियों द्वारा मानव के भ्रूण का अध्ययन करना सम्भव हो गया है। यहाँ तक कि गर्भावस्था में ही बच्चे के लिंग तथा जन्म के विकारों का पता किया जा सकता है।

कोई भी जीव पृथक रहकर जीवित नहीं रह सकता है। वे एक साथ रहते हैं और वे दूसरे जीवों तथा निर्जीव पदार्थों जैसे हवा, पानी तथा मिट्टी के साथ पारस्परिक क्रियाएँ भी करते हैं। जीवविज्ञान की ऐसी शाखा को जो जीव तथा उसके वातावरण के सम्बन्ध का अध्ययन कराए, उसे *पारिस्थितिकी* कहते हैं।

सभी जीवों में डी.एन.ए. आनुवंशिकी पदार्थ है। आपने जीन के विषय में सुना होगा जो रासायनिक रूप से डी.एन.ए. है। कौन से जीव हैं और वे कैसे कार्य करते हैं? यह जीन तथा उनकी वातावरण से पारस्परिक क्रिया पर निर्भर करता है। किसी स्पीशीज में स्थायीकरण अथवा परिवर्तन जीन के कारण होता है। जिज्ञासावश, कुछ जीवों जैसे तिलचट्टा तथा गिन्गो वृक्ष में लाखों वर्षों में कुछ परिवर्तन आ गए हैं। किसी स्पीशीज में आनुवंशिकी परिवर्तन होने के कारण उनका वर्गिक स्थान भी बदल गया है। जीवविज्ञान की जो शाखा पित्रागति तथा विभिन्नता का अध्ययन करवाए उसे *आनुवंशिकी* कहते हैं। आनुवंशिक का उपयोग उन्नत प्रकार की फसल तथा जानवर प्राप्त करने तथा सूक्ष्म जीवों में परिवर्तन करने के लिए किया जाता है। आनुवंशिक के नियम तथा जीव की उत्तरजीविता तथा लाभ में भी आनुवंशिकी सहायता करती है।

जीवविज्ञान की एक मूलभूत शाखा है *विकास* (Evolution)। यह पौधों तथा जन्तुओं की समष्टि में वातावरण के प्रति लगातार होने वाले आनुवंशिक अनुकूलन का अध्ययन कराता है।

जीवविज्ञानी आदिकाल में पाए जाने वाले जीवों की उत्पत्ति, वृद्धि तथा रचना का अध्ययन करते हैं जो आदिकाल में जीवाश्म के रूप में संरक्षित हो गए थे। जीवविज्ञान की इस शाखा को *पुरा जीव-विज्ञान* कहते हैं। (ग्रीक भाषा में पैलिओ का अर्थ है पुराना) *पुरा वनस्पति विज्ञान* पौधों के जीवाश्म का तथा पुरा जन्तु विज्ञान जीवाश्म प्राणियों का अध्ययन है। मनुष्य अब अंतरिक्ष में स्थित जीवन

के प्रकारों के अध्ययन में जानकारी प्राप्त करना चाहता है। वैज्ञानिक पूछताछ की इस शाखा को *एक्सोबायोलोजी* कहते हैं।

जीवविज्ञान तथा उसका अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध

विज्ञान की सभी शाखाएँ आपस में एक-दूसरे से सम्बन्ध रखती हैं। आजकल जीवविज्ञान के अध्ययन में सभी विषयों का ज्ञान आवश्यक है। आजकल जीवविज्ञान के बड़े क्षेत्र का अध्ययन करने के लिए 'बायोलोजी'' के स्थान पर ''लाइफ साइंस'' का नाम दिया गया है। लाइफ साइंस के अध्ययन में अन्य मूल विज्ञान, भौतिकी तथा रसायन विज्ञान, का ज्ञान भी आवश्यक है। इसका कारण यह है कि :

1. सजीव कार्बनिक तथा अकार्बनिक यौगिकों से बने होते हैं।
2. अकार्बनिक यौगिक पानी में आयन बनाते हैं और जैवप्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।
3. अम्ल-क्षार का संतुलन जीवों में pH को बनाए रखता है।
4. विसरण तथा परासरण विधि द्वारा अणु कोशिका से अन्दर तथा बाहर आते-जाते हैं।
5. द्रवों के संसजी तथा असंजी बलों की घटना के कारण पृष्ठ तनाव तथा केशिकत्व होता है जो कुछ जैव प्रक्रियाओं में सहायक होते हैं।
6. ऊर्जा का स्थानान्तरण तथा परिवर्तन सजीव कोशिकाओं के लिए बहुत आवश्यक है।
7. प्रकाश पौधों तथा जन्तुओं में निश्चित पैटर्न बनाता है।

भौतिक तथा रसायन शास्त्र में ऐसी तकनीकी तथा विश्लेषणी उपकरण हैं जिनका उपयोग ''लाइफ साइंस'' के अनुसंधान में किया गया है। नीचे दिए गए विवरण से पता लगता है कि किस प्रकार हमें कोशिका का आधुनिकतम ज्ञान हुआ है।

1. *इलैक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी :* यह एक ऐसा उपकरण है जिसमें इलैक्ट्रॉन की किरणों द्वारा हम किसी भी कोशिका को 100,000 गुना बड़ा देख सकते हैं। इससे हमें कोशिका तथा इसके अंगकों की सूक्ष्म रचना का पता लगा है (चित्र 1.1)।

2. *रेडियो आइसोटोप :* C^{14}, H^{3}, I^{131}, P^{32}, जैसे रेडियोधर्मी आइसोटोपों के उपयोग से हमें कोशिका में होने वाली रासायनिक प्रक्रियाओं के मार्ग का पता लगा है।

3. प्रभाजन : यह प्रक्रमों का सम्मिश्रण है जिसमें
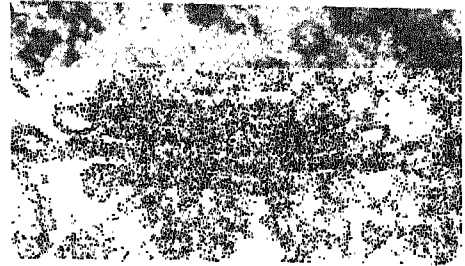
चित्र 1.1 (ऊपर) एक युवा वैज्ञानिक द्वारा ट्रांसमिशन इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग
(नीचे) इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से देखने पर गाल्जीकाय

किसी ऊतक या कोशिका को तोड़ा जाता है और कोशिका के विभिन्न घटकों (अंगक तथा गुरु अणुओं) को अपकेन्द्री विधि द्वारा अलग कर लिया जाता है और तब उनका विश्लेषण करते हैं।

आप इसके विषय में अधिक जानकारी बाद में प्राप्त करेंगे।

भौतिक विज्ञान में चुम्बकत्व, ऊष्मागतिकी

गुरुत्वाकर्षण आदि जैसे नियम होते हैं। जीवविज्ञान अपवादों का विज्ञान है। इसका कारण यह है कि यह सजीवों का अध्ययन करता है जिसमें बहुत सी विविधताएँ होती हैं और जिनमें लगातार परिवर्तन होते रहते हैं।

कुछ अपवाद के उदाहरण

1. स्तनधारियों के परिपक्व लाल रक्ताणु में केन्द्रक नहीं होता लेकिन ऊँट इसका अपवाद है।
2. अधिकांश मूल धनात्मक गुरुत्वानुवर्ती हैं लेकिन मैंग्रोव (दलदली) पौधों की मूल गुरुत्वाकर्षण के विपरीत रहती है।
3. अमेरिकी सालामन्डर की जलीय लार्वा अवस्था अपने लार्वा की स्थिति में ही जनन कर सकती है।
4. अमरबेल एक परजीवी पौधा है। इसे द्विबीजपत्री वर्ग में रखा गया है लेकिन इसमें कोई भी बीजपत्र नहीं होता।
5. डी० एन० ए० आनुवंशिकी पदार्थ है लेकिन कुछ विषाणु जैसे तम्बाकू के मोजैक वाइरस में यह पदार्थ नहीं होता।

जीवविज्ञान के विद्यार्थियों को अपवादों को मानना चाहिए। कुछ अपवादों का वर्णन दिया गया है लेकिन अभी तक अन्य अपवादों के कारणों का पता नहीं है। किसी भी प्राकृतिक विज्ञान की अपेक्षा जीवविज्ञान में अज्ञात प्रक्रियाएँ अधिक होती हैं।

सजीव के सामान्य गुण

सभी सजीवों में सर्वमान्य गुण बताना बड़ा कठिन है। लेकिन फिर भी सभी सजीवों में कुछ सामान्य गुण तथा सम्बन्ध होते हैं। हम अपने चारों ओर बहुत विभिन्नता देखते हैं, लेकिन कोई भी जीव एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न नहीं होता। उनमें परस्पर सम्बन्ध होता है। सभी सजीवों में वृद्धि होती है, उपापचयी क्रियाएँ होती हैं, संवेदना के प्रति उत्तरदायी होते हैं और प्रजनन करते हैं। 'पूर्व-अस्तित्व जीवन से ही जीवन आता है' और यह आनुवंशिक निरन्तरता जीवविज्ञान का एक भौतिक नियम है। सभी सजीवों में वृद्धि तथा विकास होता है। सजीवों के बाहरी वातावरण तथा भीतरी तन्त्रों में निरन्तर सम्बन्ध बना रहता है। सजीव भी कालान्तर में बदल जाते हैं जिससे कि संतति का आकार तथा शरीर क्रिया पूर्वजों से भिन्न होती है। बहुत से परिवर्तन उनको अपने वातावरण के अनुकूल बना देते हैं।

जीवविज्ञान का अध्ययन क्यों?

जीवविज्ञान का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। हम अभी सीखने की ही अवस्था में हैं जबकि वैज्ञानिक खोजें बहुत शीघ्रता से हो रही हैं। गत बीसवीं शताब्दी की अपेक्षा हमने अपना ज्ञान गत बीस वर्षों में अधिक बढ़ाया है। नीचे कुछ ऐसे कारण दिए गए हैं जिनसे पता लगता है कि हमें जीवविज्ञान क्यों पढ़ना चाहिए?

1. जीवविज्ञान हमें स्वयं को समझने में सहायता करता है। आपको अपने तथा अपने आस-पास में पाए जाने वाले संसार के विषय में प्रश्न उत्पन्न होते होंगे। उदाहरण के लिए —

(क) जीवित रहने का क्या अर्थ है?

(ख) हमारी ऊँचाई, सिर का आकार, आँखों का रंग, नाक के कोण को कौन से कारक नियंत्रित करते हैं? (चित्र 1.2)

(ग) हमारी उत्पत्ति का इतिहास क्या है? मनुष्य किस प्रकार अपने वातावरण को बदलने में सक्षम हुआ और उसने किस प्रकार संसाधनों का उपयोग करना सीखा जो अन्य जीव नहीं कर सके?

(घ) 'निद्रा' क्या है? जब हम निद्रावस्था में हों तब हमारे शरीर की क्रियाओं को कौन नियंत्रित करता है?

(ङ) दर्द का वैज्ञानिक वृत्तांत क्या है?

(च) जब हम मर जाते हैं तब हमारे शरीर के अणुओं का क्या होता है?

(छ) याददाश्त कैसे संचित होती है और इसे पुनः कैसे याद किया जाता है?

(ज) क्या हम अपने जैसे ही कई हजार जीव उत्पन्न कर सकते हैं?
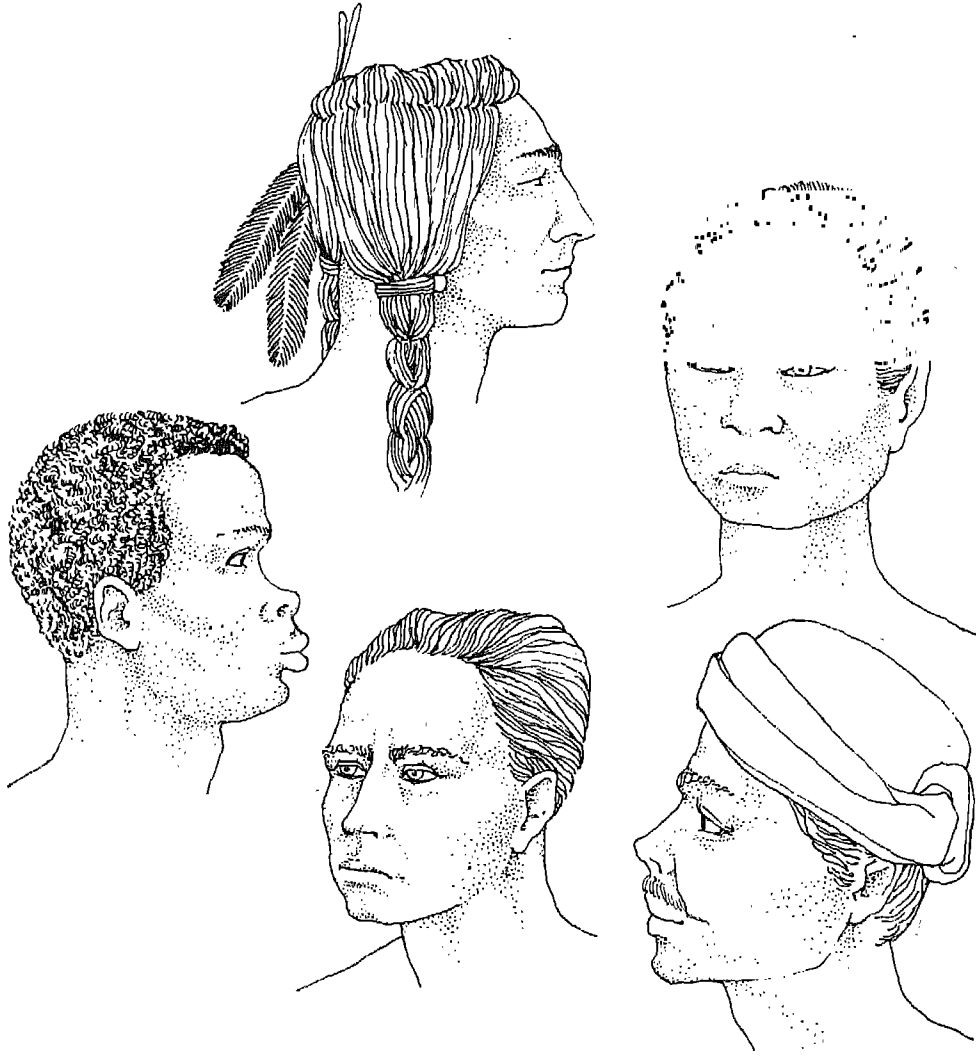
चित्र 1.2 मनुष्य के सिर तथा चेहरे में विभिन्नता

हमारे मस्तिष्क में प्रतिदिन असंख्य ऐसे प्रश्न उठते हैं। ऐसे ही प्रश्न आपके पूर्वजों ने भी पूछे होंगे। जीवविज्ञान इनमें से कुछ प्रश्नों का उत्तर दे सकता है और कुछ के ऐसे उत्तर सुझा सकता है जिनका अभी समझना हमारे लिए कठिन है।

2. जीवविज्ञान प्राप्त संसाधनों को उपयोगी बना सकता है जिससे हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

यह परम आवश्यक है कि हमें फसलों तथा पशुओं को उत्पन्न करने का, उन्हें बीमारियों तथा पीड़कों से बचाने का तथा उनसे उपयोगी भोजन प्राप्त करने का वैज्ञानिक ज्ञान हो। हम आश्रय, कपड़े, ऊर्जा, औषधियों आदि के लिए पौधों तथा सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करते हैं। दवाइयों, सर्जरी तथा सूक्ष्म जीवविज्ञान के ज्ञान में वृद्धि होने के कारण हम रोगों को नियंत्रित तथा निदान कर पाए हैं जिससे कि रहने का स्तर ऊँचा हो गया है।

3. जीवविज्ञान का एक मुख्य अंग है समस्याओं का समाधान करना। मलेरिया उन्मूलन इसका ज्वलंत उदाहरण है। जीवविज्ञानी, चिकित्सक, रसायनशास्त्री, औषधि निर्माता, शिक्षक, इंजीनियर, तथा स्वास्थ्य अधिकारी सभी ने मलेरिया उन्मूलन के लिए अपने-अपने ज्ञान को एकत्र किया है। इससे पता लगता है कि आविष्कार में अन्य विषयों के ज्ञान का लाभ लेना पड़ता है। इसलिए जीवविज्ञान सबके लिए आवश्यक है।
4. जीवविज्ञान हमें बताता है कि हम इस जीवित उपग्रह का एक छोटा-सा भाग हैं और हमारा यह उत्तरदायित्व है कि हम इसकी रक्षा करें और अन्य सभी जीवों का सम्मान करें।
5. जीवविज्ञान से पता लगता है कि हम अभी तक यह नहीं समझ पाए हैं कि पारिस्थितिक तंत्र में जीवों में पारस्परिक सम्बन्ध क्या है और हमें उनके विघ्न डालने से पहले सावधान रहना चाहिए।
6. जीवविज्ञान हमें पर्यावरण विनाश के विषय में भी सावधान करता है। पर्यावरण प्रदूषण हमारे ही क्रियाकलापों जैसे कीटनाशी तथा उर्वरकों का बेतहाशा उपयोग करना, जंगलों का विनाश करना तथा प्रदूषकों का निष्कासन आदि से होता है।
7. अपने विषय में ही ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रकृति का अध्ययन करना बहुत अच्छा अनुभव है। प्रकृति के अधिक निकट होने के कारण, एक जीवविज्ञानी लाखों वर्षों में हुए विकास से प्राप्त विभिन्न सजीवों को अपने चारों ओर देख सकता है। प्रकृति हमें सौन्दर्य का दर्शन कराती है जैसे तितलियों, पक्षियों तथा फूलों के विभिन्न रंग, विभिन्न प्रकार की आकृति, पैटर्न तथा शंख तथा कोरल की सममिति तथा उष्णकटिबंधीय नम जंगलों में विशालकाय वृक्ष तथा विसर्पी लताएँ, मरुस्थल में कँटीली नागफनी। कवि तथा कलाकारों ने सदैव प्रकृति के सौन्दर्य की प्रशंसा की है। ज्ञान तथा समझ में वृद्धि होने से हम प्रकृति के सौन्दर्य को और अधिक अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं। (चित्र 1.3 A, B, तथा C)
8. जीवविज्ञान से हमें पता लगता है कि विज्ञान का व्यवहार कैसे करें, कैसे प्रश्न करें और प्रयोगों तथा तर्कों द्वारा उसका सही उत्तर पता करें।

विज्ञान क्या है और वैज्ञानिक विधि क्या है?

विज्ञान सोचे-विचारे क्रम में एकत्र किए गए ज्ञान तथा उसके निष्कर्ष का अध्ययन है। नियम तथा सिद्धांत जब बनते हैं तब वैज्ञानिक पृथक-पृथक सच्चाइयों का पैटर्न अथवा उसका सम्बन्ध देखता है। जीवविज्ञान इन्हीं चीजों का सम्बन्ध सजीव जगत में देखता है।

वैज्ञानिक विधि

प्रकृति के नए-नए तथ्यों को जानने की विभिन्न विधियाँ हैं। यह सर्वमान्य है कि विज्ञान उत्पादक प्रकार की विधि, जिसे वैज्ञानिक विधि कहते हैं, पर आधारित है। यह विधि यथार्थ अवलोकन, प्रागुक्ता, परीक्षण, तुलनात्मक तथा सत्यापित जिसमें गलती सुधार की भी गुजाइश होती है, पर अधिक जोर देती है। वैज्ञानिक विधि में निम्नलिखित सोपान होते हैं:

(क) *अवलोकन*: बहुत सी पूछ-ताछ अवलोकन से प्रारम्भ होती हैं। अवलोकन प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष हो सकता है। हम प्रत्यक्ष रूप से चुम्बकीय अथवा गुरुत्वाकर्षण बल को नहीं देख सकते लेकिन हम उनके प्रभावों को किसी यंत्र से या उसके बिना भी देख सकते हैं। अवलोकन करना देखने से अधिक होता है। हम संसार को आँखों से देखते हैं लेकिन सूँघना, सुनना, छूना तथा स्वाद भी हमारी बहुत सहायता करते हैं। सूक्ष्मदर्शी, बायनोकूलर, टेलीलैन्स कुछ ऐसे उपकरण हैं जिनसे हमारे अवलोकन की शक्ति बढ़ गई है। अवलोकन पुनः किया जा सकता है। आलोचनात्मक अवलोकन के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

(ख) *समस्या की परिभाषा*: इसकी अगली पीढ़ी है समस्या को परिभाषित करना। इसमें अवलोकन के विषय पर प्रश्न किए जाते हैं। विज्ञान 'क्या' तथा 'कैसे' का उत्तर देता है। 'क्यों' का प्रश्न सबसे कठिन होता है।
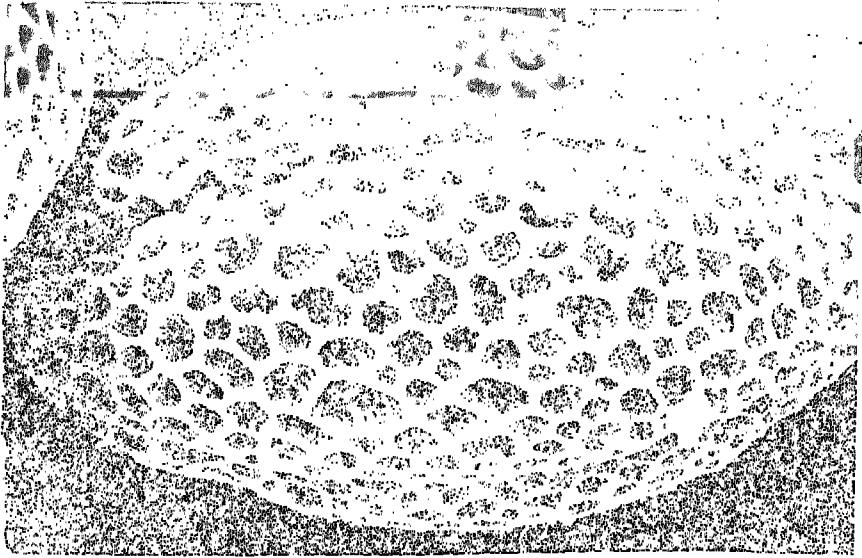
चित्र 1.3 A स्केनिंग इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से देखने पर परागकण के सतह का पैटर्न
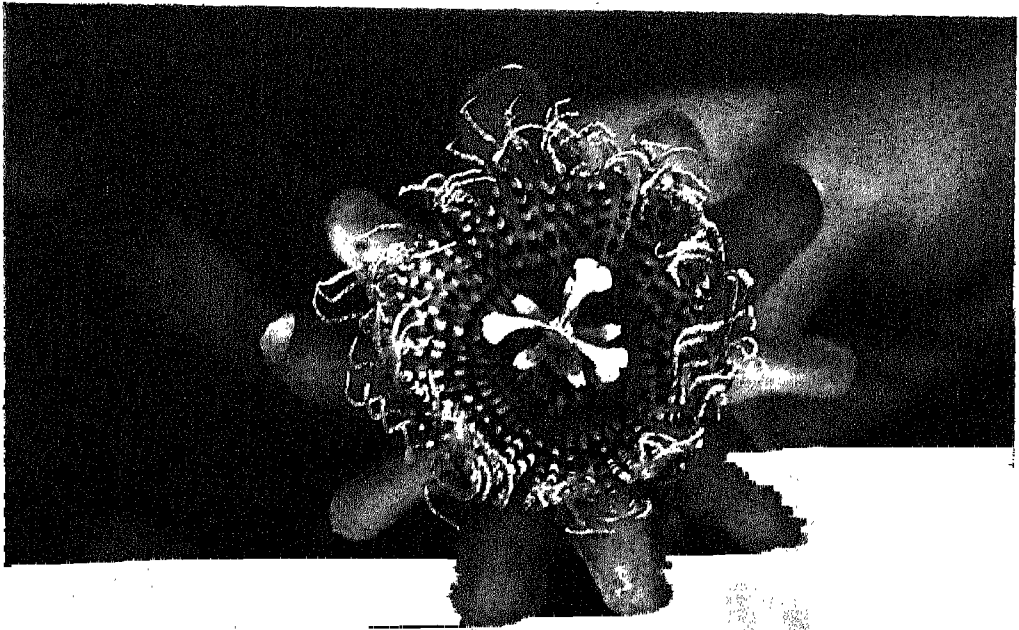
चित्र 1.3 B पैशन फूल का रंग तथा सममित
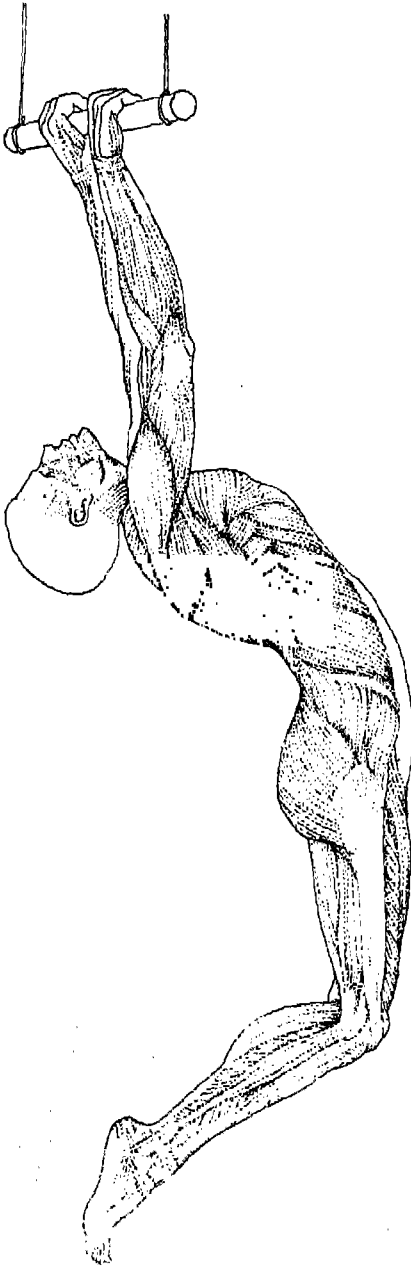
चित्र 1.3C कार्य करते हुए मानव पेशी

कुछ पौधों में फूलों के खिलने को दिन की लम्बाई तथा रात का तापक्रम नियमित करता है। कुछ बहुवर्षी पौधों में 12 से 120 वर्ष बाद एक बार ही फूल खिलते हैं। ऐसे पौधों में फल-फूल लगना विघटनकारी प्रक्रम है क्योंकि सारी आबादी समाप्त हो जाती है और बीज से नया पौधा बनता है। ऐसे पौधों को मोनोकार्पिक कहते हैं अर्थात् एक ही बार फूल खिलना और उनके फूल खिलने को ग्रिगेरियस फूल खिलना कहते हैं। भारत के उत्तर-पूर्व भाग में 'मोतक' (मेलोकना बैम्बुसोइड्स)तथा 'रोथिंग' (बैम्बुसा टुल्डा) में 48 वर्ष में एक बार फूल आते हैं। फूल खिलने से चूहों के कई स्पीशीज की संख्या बढ़ जाती है। चूहे बाँस के दाने खाते हैं और जब वे समाप्त हो जाते हैं तब वे पास में स्थित धान तथा मक्का की खड़ी फसलों को खाना आरम्भ कर देते हैं। जिससे इन खेतों की पैदावार की बहुत हानि होती है। इसके कारण अकाल पड़ जाता है जिससे इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का जीवन प्रभावित होता है। हम न तो ग्रिगेरियस फूल खिलने का, न ही चूहों की आबादी बढ़ने के संकेत और न ही बाँस समाप्त होने के मूलभूत आधार को जानते हैं।

(ग) *परिकल्पना* : इस विधि में हम किसी प्रश्न के सम्भावित उत्तर का अनुमान लगाते हैं और फिर उसका जाने माने सच से सम्बन्ध देखते हैं। किसी परिकल्पना में प्रायः अन्तर सम्बन्धी कथनों अथवा कल्पनाओं का एक समूह होता है जो समस्या का सम्भावित हल बताता है। परिकल्पना करना आसान नहीं है। नीचे दी' गई परिस्थिति पर विचार कीजिए:

आप देखते हैं कि खिड़की के पास रखा पौधा प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। आपके प्रश्न के लिए, "पौधे को प्रकाश की ओर कौन मोड़ता है?" इसका तुरन्त उत्तर जो वैज्ञानिक सा जान पड़ता है, वह है : "क्योंकि

पौधे की वृद्धि के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है''। इस प्रकार के उत्तर से यह पता चलता है कि पौधे को ''पता है कि उसे प्रकाश की आवश्यकता होती है''। प्राकृतिक प्रक्रियाओं के विषय में ऐसी परिकल्पना को 'उद्देश्यवादी' कहते हैं। उद्देश्यवादी वर्णन केवल एक प्रकार का वर्णन है जिसे वैज्ञानिक नहीं मानते, क्योंकि उससे पुष्टि नहीं होती। एक अन्य परिकल्पना यह है कि तना प्रकाश की अपेक्षा छाया की ओर अधिक वृद्धि करता है। जिसके कारण तना खिड़की के बाहर प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। हम इसे प्रयोग द्वारा सिद्ध कर सकते हैं। इसलिए इस तरह के वर्णन वैज्ञानिक मानते हैं। इससे और आगे प्रश्न उठते हैं, असमान वृद्धि किस कारण होती है? इस परिकल्पना का वर्णन करने के लिए एक अन्य परीक्षात्मक प्रयोग कर सकते हैं। इस परिकल्पना के परीक्षण के लिए और प्रयोगों की भी आवश्यकता है। इस प्रकार विज्ञान के ज्ञान में वृद्धि होती है।

(घ) *परीक्षण अथवा प्रयोग* : कोई परिकल्पना सही है या गलत है, इसको जानने के लिए परीक्षण की आवश्यकता होती है। हमेशा ही कोई उचित परीक्षण या प्रयोग करना आसान नहीं है। जब कोई प्रयोग असफल हो जाता है तब इसके कारणों का विश्लेषण करना पड़ता है और प्रयोग की पुनः योजना बनानी पड़ती है। आदर्श प्रयोग के लिए उचित डिजाइन बनाना पड़ता है जिसमें नियन्त्रण, उचित सामग्री तथा सही क्रियाकलाप होते हैं। अवलोकन, विश्लेषण, आंकड़ों का विश्लेषण तथा परिणाम, उचित सावधानियाँ, ये सभी प्रयोग प्रक्रिया के अंग हैं। आपको अपने विद्यालय की प्रयोगशाला में प्रयोग करने के बहुत से अवसर मिलेंगे।

नियंत्रण क्यों?

प्रयोग का एक मुख्य कारक नियंत्रण है। मान लीजिए हमें यह दिखाना है कि अंकुरित बीज श्वसन के समय कार्बन डाइआक्साइड छोड़ते हैं। इस प्रयोग को करने के लिए हम प्रायः अंकुरित बीजों को एक फ्लास्क में रख देते हैं और इस फ्लास्क को एक नली की सहायता से एक परखनली से जोड़ देते हैं जिसमें चूने का पानी भरा हुआ होता है। अंकुरित बीजों द्वारा छोड़ी गई कार्बन डाइआक्साइड चूने के पानी को दूधिया कर देती है। एक नियंत्रित प्रयोग में भी इसी प्रकार का उपकरण होता है लेकिन उसमें अंकुरित बीज नहीं होते और उसकी जगह सूखे बीज फ्लास्क में रख दिए जाते हैं। इन बीजों से इतनी कम कार्बन डाइआक्साइड निकलेगी कि चूने का पानी दूधिया नहीं होगा। इससे हमें पता लगेगा कि अंकुरित बीज कार्बन डाइआक्साइड छोड़ते हैं जबकि बिना अंकुरित किए बीज कार्बन डाइआक्साइड नहीं छोड़ते। इस प्रकार हम देखते हैं कि नियंत्रित प्रयोग करने से किसी प्रयोग की पुष्टि होती है। यह याद रखना महत्त्वपूर्ण है कि प्रयोग पर आधारित परिकल्पना से किसी नियन्त्रित प्रयोग के बिना पुष्टि नहीं होती।

कुछ वैज्ञानिक अध्ययन ऐसे हैं जिनमें नियंत्रण सम्भव नहीं है। उदाहरण के लिए — हम उस समय नियंत्रण नहीं कर सकते जब हम किसी ग्रह की गति का अवलोकन कर रहे हों। कुछ सच्चाइयों का निर्धारण उसका बार-बार अवलोकन करने से होता है। हम जानते हैं कि सूर्य पूर्व से उदय होता है क्योंकि कितनी ही सदियों से किसी ने भी इसके अतिरिक्त कुछ नहीं देखा है। इसलिए बार-बार अवलोकन द्वारा स्थापित सच्चाई के लिए पुनः पुष्टिकरण की आवश्यकता नहीं होती।

(ङ) *सिद्धांत* : प्रयोगों के आधार पर जिससे पुनः किए जाने वाले परिणाम मिलते हैं अथवा बहुत से जैवी आंकड़ों के विश्लेषण द्वारा प्राप्त समझदारी से हम कोई धारणा बना सकते हैं। लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक प्रयोग से धारणा बने।

सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए बहुत समय लगता है। कुछ आविष्कार बहुत पहले हो गये थे। लेकिन उनको सिद्धान्त बनाने के लिए और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी। उदाहरण के लिए — सन् 1665 में राबर्ट हुक ने
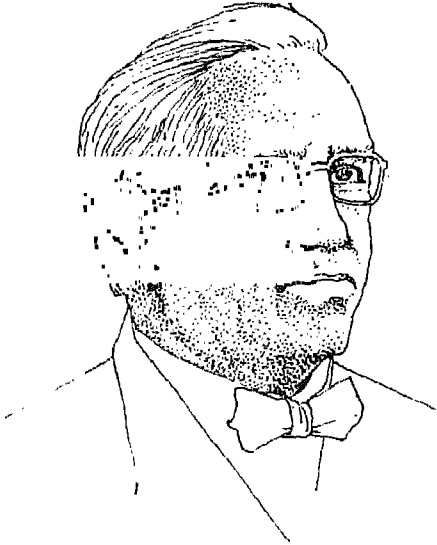
चित्र 1.4 पैन्सिलिन के आविष्कर्ता — एलैक्ज़ेन्डर फ्लेमिंग

एलैक्जेन्डर फ्लेमिंग (1881-1955) स्टैफाइलो कोक्स नामक जीवाणु, जिसके कारण गले में संक्रमण हो जाता है, का अध्ययन कर रहे थे। वह इस जीवाणु की एगार माध्यम में पैट्रीडिश में वृद्धि कर रहे थे। ये सामान्य अवलोकन है कि इस प्रकार के संवर्धन माध्यमों पर अन्य सूक्ष्म जीव भी उग आते हैं। फ्लेमिंग ने नीले हरे कवक 'पैन्सिलियम नोटेटम' को संवर्धन में देखा। प्राय : संदूषित संवर्धनों को फेंक दिया जाता है लेकिन फ्लेमिंग ने इस विशेष प्लेट को रख लिया। इस प्लेट में अन्य प्लेटों में उगी हुई संरचनाओं से कुछ भिन्नता थी, क्योंकि इस प्लेट में जीवाणुओं की वृद्धि नहीं थी। इससे यह स्पष्ट होता था कि प्लेट में मोल्ड के आस पास जो साफ क्षेत्र बन गया था,उसमें जीवाणु की वृद्धि नहीं हुई थी। अन्य जीवाणु विशेषज्ञों ने भी देखा कि मोल्ड जीवाणु की वृद्धि नहीं होने देते। लेकिन फ्लेमिंग ने इस पदार्थ का नाम पैन्सिलिन रखा (1928-1929)। उन्होंने बताया कि "पैन्सिलिन एक एन्टीसैप्टिक दवा हो सकती है, जो पैन्सिलिन संवेदी जीवाणुओं को नष्ट करने में सक्षम है।" उसके बाद परीक्षणों से पता चला कि पैन्सिलिन मनुष्य के लिए विषैली नहीं होती। इस प्रकार पैन्सिलिन एक उपयोगी एन्टी बॉयोटिक बन गई। द्वितीय विश्व युद्ध के समय पैन्सिलिन ने घायल हुए सैनिकों में संक्रमण रोकने के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कोशिका का आविष्कार किया था लेकिन कोशिका सिद्धान्त सन् 1838-1839 में श्लीडेन तथा श्वान ने बनाया।

सिद्धान्तों में परिवर्तन हो सकता है

इसका कारण यह है कि नई-नई जानकारियों का प्राप्त होना अथवा अन्य विश्लेषणों का होना। डार्विन के प्राकृतिक वर्णात्मक सिद्धान्त में कुछ परिवर्तन किया गया क्योंकि अब तक जीवविज्ञान के अन्य क्षेत्रों में काफी ज्ञान हो चुका था। उद्‌भव पर भी अब अन्य सिद्धान्त है जैसे किमुरा का सिद्धांत।

वैज्ञानिक विधि में एक दिलचस्प प्रक्रिया है *सिरेन्डीपिटी*। इसमें बड़े अद्‌भुत आविष्कार बिना सोचे समझे हो जाते हैं। जैसे सन् 1928 में एलैक्ज़ेन्डर फ्लेमिंग ने अचानक संक्रात्मक पैट्रीडिश देखी जिससे उसे प्रतिजैविक बनाने का अवसर मिला और जिससे सूक्ष्म जीवों द्वारा होने वाली कई बीमारियों का उपचार हो सका। यद्यपि सिरेन्डीपिटी अवसरवादी खोज है, हम देखते हैं जैसा पाश्चर ने बहुत सालों पहले देखा था कि "अवसर प्रशिक्षित मस्तिष्क की सहायता करता है।"

विज्ञान में अचानक दिमाग में विचार आते हैं। अतः स्फुरण तथा कन्जक्चर भी विज्ञान के अध्ययन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

विज्ञान की विधि जीवन का एक अंग है

विज्ञान की विधियाँ प्रयोगशालाओं तक ही सीमित

नहीं होतीं, बल्कि उस तरीके से कार्य करती हैं जिस प्रकार के हम कार्य करते हैं। हम अपनी दिनचर्या में जाने-अनजाने में विज्ञान का उपयोग करते हैं। उदाहरण के लिए जैसे खाना खाने से पहले हाथ धोना, बासी खाना न खाना, नीम की पत्तियाँ अथवा नैफ्थलीन की गोलियाँ डालकर ऊनी कपड़ों को रखना, रसोई में जाने से पहले जूते बाहर उतारना, दूध उबालना तथा अचार में नमक तथा तेल का उपयोग करना आदि। ऐसे रीतिरिवाज़ों का कुछ वैज्ञानिक आधार होता है।

हमारा व्यवसाय किसी भी प्रकार का हो लेकिन यह अति आवश्यक है कि हम अपनी विज्ञान की रुचि का विकास करें और उसे बनाए रखें। यह रुचि मानव मूल्यों को बनाए रखती है। इससे जिज्ञासा, विश्लेषण, अवलोकन, समस्या की बारीकी में जाना, निडरता, अंधविश्वास से छुटकारा, और किसी विचार में परिवर्तन लाने आदि में सहमत हो जाए तो उसे परिवर्तन करने के लिए तैयार रहना आता है। इन सबको मिलाजुलाकर वैज्ञानिक रुझान कहते हैं। वैज्ञानिक विधियों में परिवर्तन हो सकता है लेकिन मूल दृष्टिकोण में नहीं।

वैज्ञानिक विधियों के उपयोग से जीवविज्ञान की बहुत सी समस्याओं का समाधान हुआ है, और भविष्य में भी होता रहेगा।

आधुनिक युग में जीवविज्ञान के ज्ञान में बहुत वृद्धि हुई है। इस वृद्धि का कारण है नई-नई तकनीक अपनाना तथा उपकरणों में सुधार लाना। यद्यपि वैज्ञानिक विधि मानव का क्रियाकलाप है, वैज्ञानिक असफल हो जाते हैं और वे प्रायः गलतियाँ करते हैं लेकिन विज्ञान की विधियों के उचित उपयोग से गलतियाँ ठीक कर ली जाती हैं।

विज्ञान के ज्ञान की वृद्धि

विज्ञान का ज्ञान सदियों से बहुत से लोगों के प्रयत्नों का परिणाम है। आप आज उनमें से बहुतों को वैज्ञानिक नहीं मान सकते हैं। हमारी आज की सुख सुविधाएँ उन्हीं आविष्कारों का परिणाम हैं जिन आविष्कर्ताओं के विषय में हम कुछ नहीं जानते हैं। उदाहरण के लिए आग के उपयोग की खोज, पहिए तथा कृषि का आविष्कार किसने किया था? ये वे आविष्कर्ता थे जिन्होंने विज्ञान की पृष्ठभूमि तैयार की थी।

हमें यह याद रखना चाहिए कि विज्ञान प्रत्येक प्राकृतिक प्रक्रिया को समझने अथवा उसे विश्लेषण करने का दावा नहीं करता है। विज्ञान के ऐसे बहुत से क्षेत्र हैं जिनमें हमारा ज्ञान बहुत ही कम है। वैज्ञानिक ऐसा विश्वास करते हैं कि अन्ततः सच्चाई अथवा समग्र ज्ञान जैसी कोई चीज नहीं है। विज्ञान का यह उद्देश्य भी नहीं है।

यह पुस्तक किसके विषय में है?

इस पुस्तक में दिया गया जीवविज्ञान का ज्ञान बहुत ही कम है। लेकिन आपको प्रश्न करने चाहिए और प्रश्नों के उत्तर देने चाहिए। इस पुस्तक की प्रथम इकाई में वैज्ञानिक दृष्टि मे सजीव जगत के विषय में बताया गया है और कुछ जीवविज्ञान की धारणाओं को बताया गया है। इस पुस्तक की अन्य इकाइयों में जीवन की विविधता में एकता, जीवन तथा उसके पर्यावरण में सम्बन्ध, तथा पादपजीवन की बहुकोशिकीय रीति का वर्णन किया गया है। अगले वर्ष आप जन्तु जीवन की बहुकोशिकीय रीति, जीवन की तारतम्यता, जीवन की उत्पत्ति तथा उद्भव के विषय में पढ़ेंगे। सबसे अन्त में एक पूरी इकाई में जीवविज्ञान के उपयोग के विषय में बताया गया है। इसमें जीवविज्ञान के विद्यार्थियों के लिए बहुत से व्यवसायिक अवसरों के विषय में बताया गया है।

जीव वैज्ञानिकों के लिए व्यवसाय में बहुत अवसर आते हैं

नीचे कुछ जीवविज्ञान से सम्बन्धित क्षेत्र दिए गए हैं। यदि आपको जीवविज्ञान का अच्छा ज्ञान है तो यह आपको इन क्षेत्रों में से कोई भी क्षेत्र चुनने में सहायता देगा। यह सूची केवल उदाहरण के लिए है लेकिन पूरी नहीं है।

मानव विज्ञान	यह विज्ञान मनुष्य तथा मानव से सम्बन्धित है। इसमें मनुष्य के भौतिक तथा मस्तिष्क के विषय में अध्ययन किया जाता है। वर्तमान तथा भूत में प्रदर्शित होने वाली सामाजिक दशाओं तथा उसके सांस्कृतिक विकास का भी अध्ययन किया जाता है।
शस्य विज्ञान	फार्म का प्रबन्ध तथा फसल उत्पादन का विज्ञान।
मृदा विज्ञान	मृदा का अध्ययन जिसमें मिट्टी की रचना, प्रकार होते हैं।
रोग विज्ञान	इसमें रोग की प्रकृति, उसके कारण, लक्षण तथा प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।
प्रजनन	वर्णात्मक संकरण द्वारा उन्नत किस्में तैयार करना।
पशु विज्ञान	यह पालतू पशुओं के रोग तथा उनके स्वास्थ्य से संबंधित होता है।
कीट विज्ञान	जन्तु विज्ञान की एक शाखा है जो कीटों की रचना, स्वभाव तथा वर्गीकरण का अध्ययन करता है।
मत्स्य पालन	इस व्यवसाय में नदी, झील, समुद्र से मछली अथवा अन्य उत्पादों को पकड़ा जाता है।
कुक्कुट विज्ञान	यह पालतू मुर्गी जैसे चूजे, हंस, बत्तख का विज्ञान है।
रेशम कीट पालन	कच्ची रेशम के उत्पादन के लिए रेशम के कीड़ों का जनन आदि करना।
मधुमक्खी पालन	वाणिज्य के लिए मधुमक्खियों को पालना।
वन विद्या	वनों का विकास एवं परिरक्षण करने का विज्ञान।
दुग्धशाला तकनीकी	दुग्ध उत्पादों को बनाने में विज्ञान का उपयोग।
सूक्ष्म जैविकी	सूक्ष्मदर्शी जीवों की रचना, कार्य, उपयोग आदि का विज्ञान।
भेषज गुण विज्ञान	दवा निर्माण के ज्ञान का विज्ञान।
मनोविज्ञान	यह मनुष्य के मस्तिष्क, व्यवहार से संबंधित होता है।
फार्मेसी	चिकित्सकों द्वारा लिखी गई दवाओं तथा नुस्खों का बनाना।
विधि विज्ञान	फौजदारी तथा दीवानी, कानूनों के प्रश्नों के लिए विज्ञान का उपयोग (अँगुलियों के निशान, रुधिर वर्ग, नशीली दवाओं का सेवन)।
औषधि विज्ञान	दवाओं द्वारा रोगी का निदान करने का विज्ञान।
शल्य विज्ञान	यह औषधि विज्ञान की एक शाखा है जिसमें रोगों की चिकित्सा के लिए ऑपरेशन किया जाता है।
मानव जनन जीवविज्ञान	मानव जनन को समझने तथा नियंत्रित करने का विज्ञान।

पोषण	मनुष्य तथा अन्य जीवों के पोषण का अध्ययन।
भौतिक चिकित्सा	मालिश तथा व्यायाम द्वारा ऐसे रोगों की चिकित्सा करना जिसमें शरीर का कोई अंग कमजोर अथवा दोषयुक्त हो गया हो।
व्यवसायिक चिकित्सा	शारीरिक व्यायाम तथा हल्के कार्य अथवा व्यवसायिक प्रशिक्षण द्वारा विकलांगों तथा उल्लोधों की चिकित्सा करने की विधि।
आनुवंशिकी इन्जीनियरिंग	आनुवंशिक गुणों के मिलाने से नये जीव के बनाने की आनुवंशिक विधि।
बायोमेडिकल इन्जीनियरिंग	मनुष्य के लिए कृत्रिम अंग बनाना, उन्हें लगाना, कृत्रिम अंग, हृदय, फेफड़े आदि।
खाद्य तकनीकी	भोजन का सुधार तथा परिरक्षण करना।

सारांश

जीवविज्ञान, सजीवों का एक विज्ञान है जिसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। जिज्ञासा तथा मनुष्य को जानने की इच्छा ऐसे प्रमुख कारक हैं जिनके कारण जीवविज्ञान के ज्ञान में इन सालों में वृद्धि हुई है। जीवविज्ञानी जीव के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करता है।

मनुष्य का एक मूल गुण यह रहा है कि वह सजीवों का वर्णन और उनका वर्गीकरण करता है। जीवविज्ञानी इस क्रियाकलाप में लगे रहते हैं क्योंकि प्रतिवर्ष कई हजार जीव सूची में जुड़ जाते हैं जिनका अभी नामकरण और वर्गीकरण करना होना है। यह वर्गिकी है। आकारिकी किसी जीव की बाह्य रचना, आकृति का सही-सही वर्णन करने से संबंधित होती है। भीतरी रचना के अध्ययन को शारीरिकी कहते हैं। ऊतक की रचना के विस्तृत अवलोकन को ऊतक विज्ञान कहते हैं। कोशिका की रचना तथा प्रक्रियाओं के अध्ययन, जो इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी तथा अन्य औजारों द्वारा लिया गया हो, 'कोशिका विज्ञान' कहते हैं। जीवन के अणुओं तथा उनकी प्रतिक्रियाओं के अध्ययन को आण्विक जीवविज्ञान कहते हैं।

शरीर क्रिया विज्ञान में जैव प्रक्रियाओं का अध्ययन करते हैं। निषेचन तथा भ्रूण के विकास के अध्ययन को भ्रूण विज्ञान कहते हैं। पारिस्थितिकी में हम जीव और उसके पर्यावरण के संबंध में पढ़ते हैं। जीवविज्ञान की वह शाखा जिसमें हम वंशागति एवं विभिन्नता का अध्ययन करते हैं, आनुवंशिकी कहलाती है। लगातार आनुवंशिक अनुकूलन के अध्ययन को विकास कहते हैं।

विज्ञान में परस्पर संबंध होता है और जीवविज्ञान के अध्ययन के लिए भौतिकी रासायन तथा अन्य मौलिक विज्ञानों की आवश्यकता होती है। जीवन के सभी पहलुओं को समझने के लिए भौतिक-रासायनिक विधियों के उपयोग करने से "बायोलोजी" का नया तथा विस्तृत नाम "लाइफ साइंस" रखा गया है।

जीवविज्ञान में कोई एक नियम बनाना कठिन होता है क्योंकि इस विज्ञान में बहुत अधिक अपवाद होते हैं। सजीवों में बहुत सी विविधताएँ होती हैं और उनमें परिवर्तन होते रहते हैं। फिर भी सजीवों में सामान्यत: जो विविध जीवों में लागू हो सकते हैं, वे हैं वृद्धि, उपापचय, अनुक्रिया, तथा जनन। सभी सजीवों में पारस्परिक क्रियाएँ तथा वातावरण के प्रति अनुक्रियाएँ होती हैं और उनमें उद्भव की शक्ति भी होती है।

जीवविज्ञान हम सबके लिए बहुत ही उपयोगी है। यह हमें स्वयं को समझने और जीवित रहने का अर्थ समझाती है। यह हमें साधनों का उचित उपयोग, रोग से मुक्ति, तथा पर्यावरण विघटन को रोकने में सहायता करती है। जीवविज्ञान हमें इस ग्रह पर हमारी भूमिका के प्रति सचेत करती है। पारिस्थितिकी को समझने में, हमारी मजबूरियाँ बताती है और प्रकृति के सौंदर्य की विरासत की सराहना करना बताती है। जीवविज्ञान

से हमें पता लगता है कि हमें विज्ञान का किस प्रकार उपयोग करना चाहिए। विज्ञान की विधि यथार्थ अवलोकन से आरम्भ होती है। 'क्या', 'कैसे' तथा 'क्यों' जैसे प्रश्न पूछना और उससे संबंधित समस्याओं की परिभाषा करना इस विधि के प्रमुख सोपान हैं। परिकल्पना में उत्पन्न के सम्भावित उत्तर बताना। सम्भावित (प्रयुक्त) उत्तरों का परीक्षण प्रयोगों द्वारा करना। इस प्रक्रिया में आंकड़ों को एकत्र करना, उनका विश्लेषण तथा अर्थ लगाना आता है। बिना नियंत्रण के प्रयोग करने की कोई मान्यता नहीं होती है। लेकिन कुछ वैज्ञानिक अध्ययनों में बार-बार अवलोकन के आधार पर तथ्य निर्धारित होते हैं। पुनः किए जाने वाले प्रयोगों के परिणामों अथवा अवलोकनों के आधार पर एकत्र आंकड़े सिद्धान्त के मूलभूत आधार हैं। कोई सिद्धान्त माननीय हो सकता है और नहीं भी हो सकता है और इनमें परिवर्तन भी किए जा सकते हैं। अतः इत्तेफाकिया खोज, चेतना तथा अनुमान या संभावनाएँ भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण हैं।

वैज्ञानिक विधि प्रयोगशाला तक ही सीमित नहीं होती। यह प्रायः हमारी दिनचर्या में भी आती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा वैज्ञानिक रूझान का विकास भी आवश्यक है। इसके अन्तर्गत जिज्ञासा, आलोचनात्मक अवलोकन, सत्य की खोज करने की जिज्ञासा, निडरता, धर्मान्धिता से मुक्त और पता लगने पर परिवर्तन करने का इच्छुक आदि आते है।

जीवविज्ञान की वृदिध के लिए वैज्ञानिक तथा अवैज्ञानिक दोनों ने ही कार्य किया है। जीवविज्ञान में ऐसे बहुत से जीव हैं जिनका वर्णन नहीं हो पाया है। जीवविज्ञान का ज्ञान न केवल अन्जान प्रश्नों का उत्तर बताने में सक्षम होगा बल्कि बहुत से व्यवसाय चुनने में भी सहायक होगा।

प्रश्नावली

1. निम्नलिखित में से सही कथनों को चुनो :
   - (क) आकारिकी तथा शारीरिकी में आपस में संबंध नहीं हो सकता क्योंकि आकारिकी बाह्य रचनाओं का अध्ययन कराती है जबकि शारीरिकी भीतरी रचनाओं का।
   - (ख) वे आपस में संबंधित हैं क्योंकि आकार और रचना एक दूसरे के पूरक होते हैं।
   - (ग) एक ऊँचा वृक्ष शारीरिकी निर्धारित आकारिकी का उदाहरण है।
   - (घ) एक जीव जिसमें मृत ऊतक होते हैं उसे मृत समझना चाहिए।
2. दोनों स्तम्भों में दिए गए शब्दों को मिलाओ :

1. ऊतक विज्ञान	1. मेरी आँखों का रंग वैसा ही है जैसा मेरी माताजी की आँखों का।
2. पारिस्थितिकी	2. मेरे शरीर का तापक्रम स्थिर रहता है।
3. शरीर क्रिया विज्ञान	3. मैंने पत्ती की अंगीकार संरचनाओं को सूक्ष्मदर्शी से देखा है।
4. आनुवंशिकी	4. हमारे तथा लंगूर के वंशज एक ही हैं।
5. जैव विकास	5. माइटोटिक विभाजन से एक कोशिका दो में विभक्त हो जाती है।
6. कोशिका जीवविज्ञान	6. मैंने टिड्डा तथा मेंढ़क को प्रायः एक ही स्थान पर देखा है।

3. वैज्ञानिक विधि का क्या अर्थ है? इसका संक्षिप्त वर्णन करो।
4. मनुष्य द्वारा वजन उठाने में जो जैविक, भौतिक तथा रासायनिक नियम लागू होते हैं उनकी एक सूची बनाओ।
5. निम्नलिखित प्रत्येक के लिए एक नियंत्रण सुझाव बताओ।
   - (क) एंजाइम एमिलेज विशेषतः स्टार्च पर क्रिया करता है।
   - (ख) प्रकाश संश्लेषण केवल प्रकाश की उपस्थिति में होता है।
   - (ग) अंकुरण से पहले बीजों को पानी में भिगोना चाहिए।
6. सिरेन्डीपिटी (अचानक हुई खोजों) का वर्णन करो। अन्य विज्ञान के ज्ञान के आधार पर इस घटना के उदाहरण दो।

7. जीवविज्ञान के ज्ञान में वृद्धि भौतिकी-रासायनिक तकनीकी तथा यंत्रों के विकास के कारण सम्भव हो पाई है। आपकी पुस्तक में दिए गए उदाहरणों के अतिरिक्त आप क्या अन्य उदाहरण दे सकते हैं और वे जीवविज्ञान में किस प्रकार उपयोगी हैं, उसका वर्णन करो।
8. जीवविज्ञान को अपवाद का विज्ञान क्यों समझा जाता है? इसका वर्णन करो। जीवविज्ञान के ऐसे पाँच जीव वैज्ञानिक दृष्टिकोणों को लिखो जिनसे हमारी समझ अथवा वर्णन में परिवर्तन आया हो।
9. जीवविज्ञान की क्या आप कुछ ऐसी प्रमुख समस्याओं को बता सकते हैं जिन्हें केवल जीवविज्ञानी हल न कर सकेगा बल्कि अन्य वैज्ञानिकों की सहायता लेकर हल खोजने पड़ेंगे।

अध्याय 2
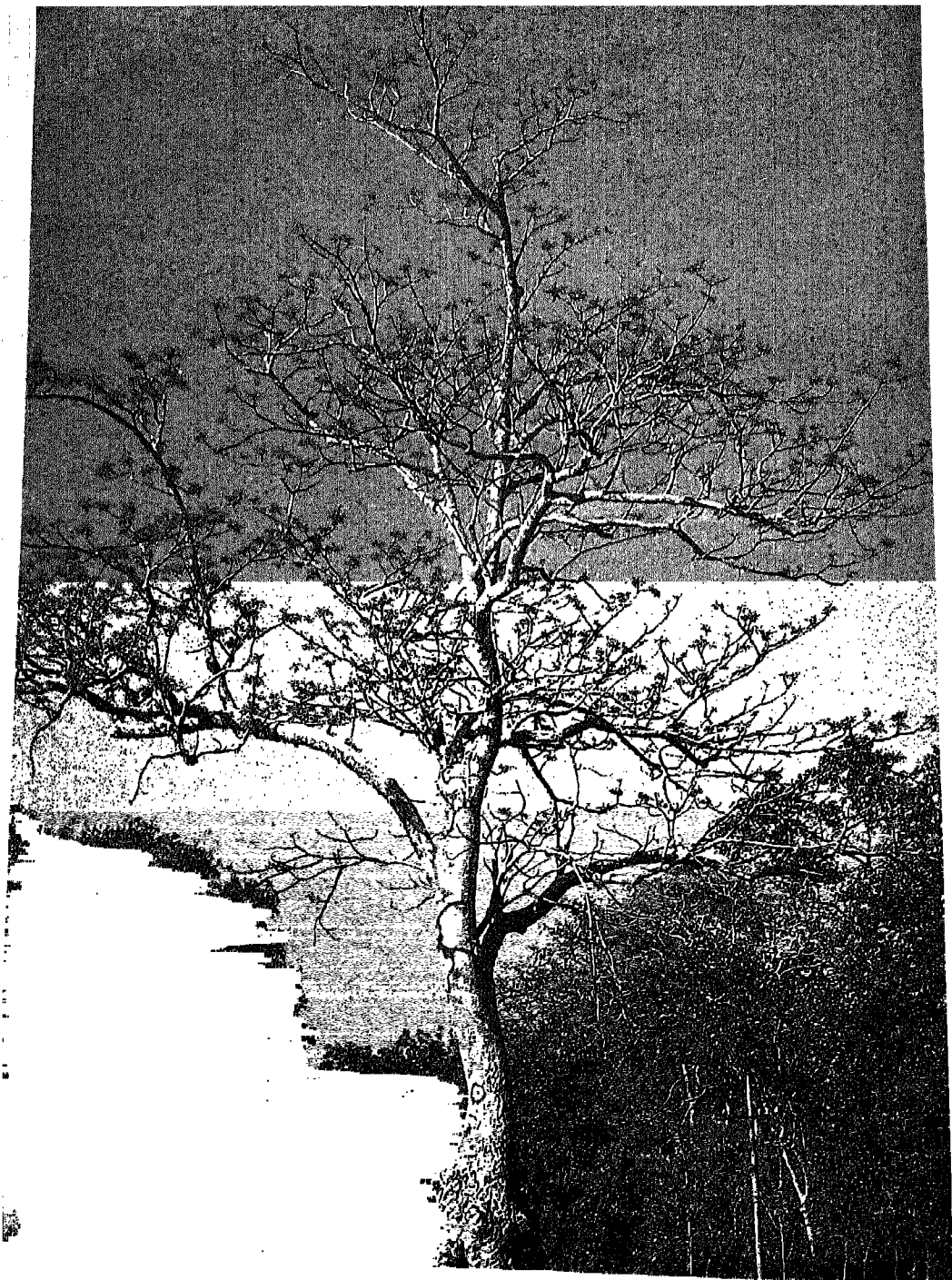
जीवित रहना — इसका क्या अर्थ है?

ऐसा कहा जाता है कि जीवविज्ञान सजीवों का विज्ञान है। विज्ञान तथा इसकी विधियों को समझने के बाद आइए देखें कि जीवन का क्या अर्थ है?

सजीवों को जीव कहते हैं चाहे उनमें एक कोशिका हो या अधिक। सजीव इस पृथ्वी पर निर्जीव के साथ रहते हैं। ये दोनों एक ही तरह के तत्वों से बने होते हैं। ये दोनों एक ही प्रकार के भौतिक नियम जैसे — गुरुत्वाकर्षण, चुम्बकत्व, क्रियाएँ तथा प्रक्रियाएँ, का पालन करते हैं। फिर सजीव निर्जीव से किस प्रकार भिन्न होते हैं? क्या इन दोनों में कोई ऐसी स्पष्ट रेखा है? सजीव बड़े अद्‌भुत होते हैं क्योंकि उनमें एक विशेष प्रकार का संगठन स्तर होता है। पदार्थों का संगठन स्तर सजीव तथा निर्जीव में भिन्न-भिन्न होता है।

संगठन के निम्नलिखित स्तरों को देखिए जिसे परमाणु से आरम्भ किया गया है।
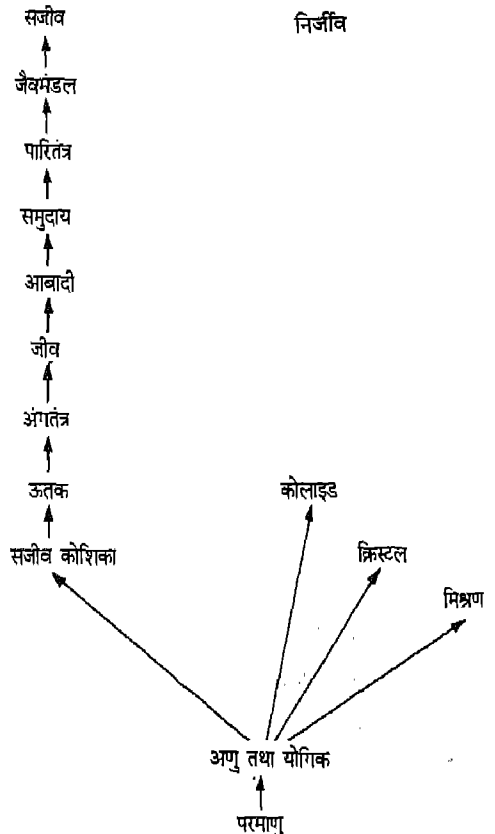
संगठन क्या है?

परिस्थिति के अनुसार इस शब्द के बहुत से अर्थ हैं। इसमें छोटे-छोटे कारक किसी रचनातंत्र अथवा परिस्थिति में पदानुक्रम में सजे रहते हैं जिससे कि अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मिलकर काम कर सकें।

चित्र 2. 1 संगठन के स्तर

सजीवों में संगठनात्मक स्तर की निरन्तरता बहुत ही जटिल तन्त्र तक होती है, जिसमें पृथ्वी की सजीव सतह — जैव मंडल सम्मिलित है। आपने पिछली कक्षाओं में संगठन के पदानुक्रम के विषय में पढ़ा होगा। इस अध्याय में आप और अधिक पढ़ेंगे।

दो रुचिकर बिन्दु हैं :

1. सजीव और निर्जीव में भिन्नताएँ आण्विक स्तर पर हैं, यह तथ्य भूविज्ञानिक के इतिहास में बहुत पहले ही ज्ञात हो गया था।
2. सजीवों में व्यष्टिगत स्तर के बाद संगठन जटिलतम होता जाता है।

संगठन के विभिन्न स्तरों को नियमित करने वाले कारक हैं एकत्रीकरण, पारस्परिक-प्रतिक्रिया, संतुलन तथा परिवर्तन। एकत्रीकरण में सब चीजें एकत्र होकर एक सम्पूर्ण वस्तु बनती हैं। पारस्परिक प्रतिक्रिया का अर्थ है एकत्रित प्रतिभागियों के संबंध होना। इसके कारण संतुलन होता है अथवा परिवर्तन होता है और इस प्रकार विविधता आती है। आइए निम्नलिखित उदाहरणों पर ध्यान दें।

(क) हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के परमाणु एकत्र होते हैं जिससे एक स्थिर रचना अर्थात् पानी का अणु बनता है। ये ही परमाणु विभिन्न प्रकार से भी एकत्र और पारस्परिक क्रिया कर सकते हैं जिससे हाइड्रोजन-परआक्साइड का अणु बनता है।

(ख) जब हम साँस लेते हैं तब अंगों का एक समूह जैसे नाक, वायुनली, फेफड़े, पसलियाँ तथा डायाफ्राम (जो श्वसन के तंत्र बनाता है) परस्पर प्रतिक्रिया करते हैं जिससे कि श्वसन की गति संतुलित हो सके।

केवल सभी तत्वों को सही अनुपात में मिलाने तथा उन्हें ऊर्जा प्रदान करने से ही जीवन की उत्पत्ति नहीं हो सकती। जीवित रहने के रहस्य को समझाना बहुत कठिन है क्योंकि यह सजीव पदार्थ के सजने के जटिल क्रम में निहित है।

एक जीव अकेला भी है और वह किसी आबादी, समुदाय, पारितंत्र तथा जैव-मंडल का अंग भी है। आइए पहले हम यह समझ लें कि जैविक स्तर पर जीवित रहने का क्या अर्थ है।

व्यष्टिगत जीव

हमें समग्र ज्ञान होते हुए भी भौतिकी तथा रसायन नियमों के संदर्भ में जीवन का वर्णन करना बहुत कठिन है। जीवन अपने आप में विशिष्ट है। हमें याद रखना चाहिए कि जीव अपने अलग-अलग घटकों की अपेक्षा अधिक जटिल रूप में व्यवहार. करता है। जीव-विज्ञान का मुख्य उद्देश्य सजीव जगत का विश्लेषण करना है। हम सजीव के कुछ महत्वपूर्ण गुणों जैसे उनका आण्विक आधार, ऊर्जा स्थानान्तरण, जनन, अनुकूलन और अन्ततः उनकी मृत्यु का अध्ययन करेंगे। हम जीवन के आण्विक स्तर से शुरू करेंगे क्योंकि यह संगठन का एक ऐसा मूलभूत स्तर है जहाँ पर सजीव निर्जीव से भिन्न होता है।

आण्विक आधार

प्रसिद्ध जीव वैज्ञानिक लीनस पॉलिंग ने कहा कि ''जीवन अणुओं के संबंध का परिणाम है और यह किसी एक अणु के कारण नहीं होता है।'' जीवन को समझने का पहला तरीका यह था कि हम उसका अध्ययन जीव से शुरू करते थे और उसकी सूक्ष्म विशेषताओं को देखते थे। लेकिन आजकल इस प्रक्रिया में आण्विक रचना तथा उसके कार्य का पहले अध्ययन करते हैं फिर उसका संबंध जीव की रचना तथा उसके कार्य से देखते हैं। आण्विक स्तर पर जीव में निम्नलिखित गुण होते हैं:

(क) सजीवों में कार्बन-हाइड्रोजन-आक्सीजन प्रमुख होते हैं। इस प्रकार आण्विक संगठन मूल रूप से कार्बनिक स्वभाव का होता है। प्रकृति में पाये जाने वाले कार्बनिक पदार्थ जैसे कोयला तथा पैट्रोलियम से उन जीवों तक को ट्रेस किया जा सकता है जो भूतकाल में जीवित थे। एक सरल कार्बनिक अणु जैसे ग्लूकोस केवल सजीवों में पाया जाता है। निर्जीवों के आण्विक संगठन में मुख्यतः छोटे अणु जैसे गैस, लवण, अयस्क तथा कुछ प्रकार के कण पाए जाते हैं।

(ख) जीवन के लिए छोटे तथा बड़े दोनों ही अणु महत्वपूर्ण होते हैं। कुछ छोटे अणु जैसे पानी, सामान्य लवण, शक्कर आदि

इतने सामान्य होते हैं कि हम उनको लेते रहते हैं। जीवित रहने में इनकी भूमिका नीचे दिखाई गई है :
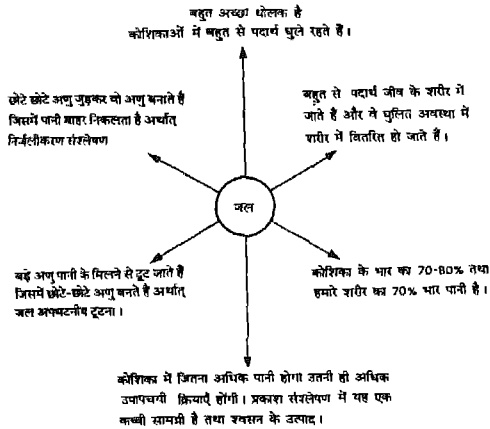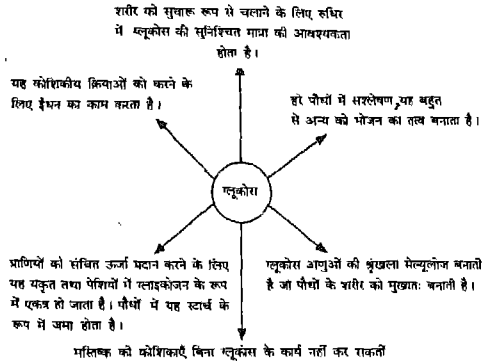
ठोस तथा वाष्प रूप में सजीवों के लिए पानी के और भी अन्य उपयोग हैं। अतः जीवन पानी में ही उत्पन्न हुआ है।

सामान्य लवण के उपयोग

सोडियम तथा क्लोराइड के आयन जन्तुओं की जैव प्रक्रियाओं में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
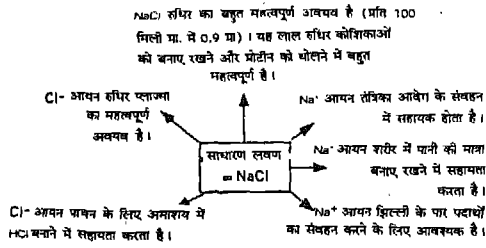
> आपने देखा होगा कि जब किसी व्यक्ति में हैजा, दस्त, उल्टी आदि के कारण लवण की बहुत हानि हो जाती है तो उसे नमक का द्रप्स चढ़ाया जाता है।

ग्लूकोस का महत्व

(ग) गुरू अणु जैसे कार्बोहाइड्रेट (शक्कर तथा पालिसेक्राइड) लिपिड अथवा वसा तथा प्रोटीन (संरचनात्मक प्रोटीन तथा एन्जाइम) केवल सजीवों में ही होते हैं। अणु कई सौ से लेकर कई सौ करोड़ आण्विक भार के होते हैं। अणु छोटी-छोटी इकाइयों के बहुलीकरण द्वारा (पुनरावृत्त इकाइयों का जुड़ना) बनता है। सैल्यूलोज तथा स्टार्च ग्लुकोस के बहुलक हैं। डी०एन०ए० भी एक बहुलक है। प्रोटीन में लगभग 20 विभिन्न प्रकार के एमीनोऐसिड होते हैं। एमीनोऐसिड के विभिन्न सृजन के क्रम से विभिन्न प्रकार की प्रोटीन बनाई जा सकती है। कोशिका में पाए जाने वाले अणुओं में सम्भवतः प्रोटीन रासायनिक तथा भौतिकी दृष्टि से विभिन्न है। प्रोटीन का भार (आण्विक भार), आकार तथा कार्य एमीनोऐसिड की संख्या, प्रकार तथा विभाजन पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए एड्रिनोकार्टिको ट्रापिक नामक हार्मोन (ए.सी.टी.एच. A.C.T.H.) में एमीनोऐसिड की 39 इकाइयाँ होती हैं (आण्विक भार 4500) तथा घोंघे के रुधिर में पाये जाने वाले हीमोसायोन में 8200 एमीनोऐसिड्स होते हैं। (आण्विक भार 910,000)। दिलचस्प बात यह है कि डी.एन.ए. तथा एन्जाइम जैसे गुरू अणु लघु अणु की क्रियाओं को नियमित करते हैं।

(घ) कोशिका में विविध प्रकार के अणु होते हैं, जिनसे बहुत विभिन्न प्रकार की रासायनिक क्रियाएँ होने की सम्भावनाएँ होती हैं।

ऐसा अनुमान है कि एक कोशिका में 5000 विभिन्न रसायन होते हैं। कोशिका में इन नम्बरों की अपेक्षा कई गुनी रासायनिक क्रियाएँ होती हैं। मुख्य रासायनिक क्रियाओं को दो वर्गों में रख सकते हैं। 'रचनात्मक क्रिया' अथवा *उपचय* तथा 'विघटन प्रक्रिया' अथवा *अपचय।* उदाहरणार्थ :

$$6CO_2 + 6H_2O \xrightarrow[\text{एंजाइम}]{\text{प्रकाश उर्जा, क्लोरोफिल}} C_6H_{12}O_6 + 6O_2 = \text{उपचय प्रक्रिया}$$

कार्बनडाई आक्साइड, पानी, ग्लूकोस, आक्सीजन

और

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \xrightarrow{\text{एंज़ाइम}} 6CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा} = \text{अपचय प्रक्रिया}$$

ग्लूकोस, आक्सीजन, कार्बनडाई आक्साइड, पानी
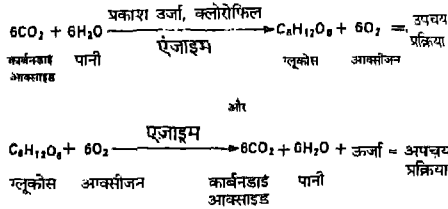
हमें कोशिका की बहुत सी रासायनिक क्रियाओं तथा उसके अवयवों का ज्ञान है। लेकिन हम फिर भी कोशिका का निर्माण नहीं कर सकते। जीव वैज्ञानिक यह समझने का प्रयत्न कर रहे हैं कि कोशिका में यह अणु किस प्रकार सजे रहते हैं और किस प्रकार क्रिया करते हैं जिसके कारण यह 'जीवित' रहती है।

जीवन – ऊर्जा परिवर्तन और पदार्थों के विनिमय का प्रतीक है

सभी पदार्थों (जीव अथवा निर्जीव) में ऊर्जा होती है। ऊर्जा काम करने की शक्ति है। ऊर्जा को हम उत्पन्न नहीं कर सकते हैं और न ही नष्ट कर सकते हैं। यह ऊष्मा गति का पहला नियम है।

जब भी कोई काम किया जाता है तो उसमें या तो ऊर्जा रूपान्तरित हो जाती है या स्थानान्तरित हो जाती है या दोनों ही हो जाती है। सजीव कोशिका में ऊर्जा में ऐसे परिवर्तन लगातार होते रहते हैं। प्रकृति में ऊर्जा रूपान्तरण का महत्वपूर्ण उदाहरण है, प्रकाश ऊर्जा का रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तन होना।

सूर्य से प्रकाश ऊर्जा

↓

प्रकाश संश्लेषण द्वारा हरी कोशिकाओं में

↓

भोज्य पदार्थों के रूप में रासायनिक ऊर्जा

ग्लूकोस जैसे भोज्य अणु टूट जाते हैं और ऊर्जा छोड़ते हैं। यह ऊर्जा एडिनोसिन ट्राइफॉस्फेट (ए.टी.पी. ATP) अणु में संचित हो जाती है। ए. टी. पी. अणु से सभी सजीव कोशिकाओं को ऊर्जा प्राप्त होती है। अधिकतर कोशिकीय प्रतिक्रियाओं में ए. टी. पी. अणु में शक्ति ऊर्जा अन्य अणु में स्थानान्तरित हो जाती है। कुछ क्रियाओं में रासायनिक ऊर्जा अन्य ऊर्जा जैसे बिजली, प्रकाश तथा ऊष्मा, में रूपान्तरित हो जाती है। उपरोक्त का सारांश नीचे दिया गया है.
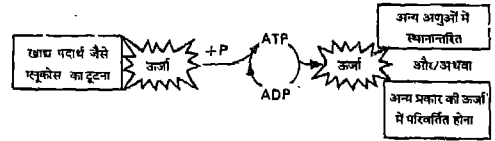
ऊर्जा स्थानांतरण के उदाहरण
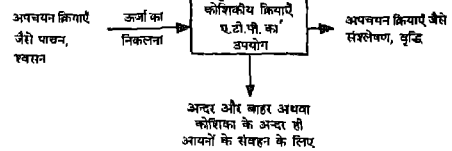
ऊर्जा रूपान्तरण के उदाहरण
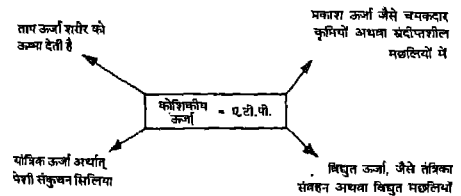
ऊष्मा गतिकी के दूसरे नियम के अनुसार ब्रह्माण्ड सहित किसी भी तन्त्र में इसको ऐसे ही चलने दिया जाए तो *एन्ट्रापी* बढ़ जाती है। एन्ट्रापी का अर्थ है *अव्यवस्था।* ऊर्जा की प्रवृत्ति सामान्य विभाजन की

होती है। यह उच्च ऊर्जा क्षेत्र से निम्न ऊर्जा क्षेत्र की ओर जाती है। इस विभाजन के समय उनके कणों में टकराव होता है। इस टकराव से अव्यवस्था हो जाती है।
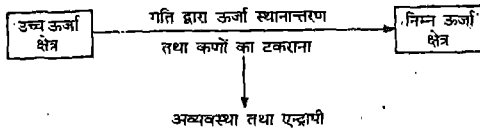
इस व्यवस्था के कारण ऊष्मा के रूप में कुछ ऊर्जा की हानि हो जाती है और इस ऊर्जा का उपयोग किसी भी लाभकारी कार्य में नहीं कर सकते (चित्र 2.2)। इस प्रकार हम देखते हैं कि ऊर्जा रूपान्तरण तथा स्थानान्तरण शत-प्रतिशत नहीं होता। जब ऊर्जा परिवर्तन प्रक्रियाओं में लगातार ऊर्जा की हानि होती रहती है तब एन्ट्रापी बढ़ जाती है। एन्ट्रापी के अधिक बढ़ जाने से जीव अथवा कोशिका की मृत्यु भी हो सकती है यदि समय पर उस हानि को पूरा न किया जाए। सजीव तंत्र में ऊर्जा की इस हानि को मुक्त ऊर्जा प्रदान करके पूरा किया जाता है। मुक्त ऊर्जा एन्ट्रापी को कम करती है। किसी भी जीव को मुक्त ऊर्जा कहाँ से प्राप्त होती है? उसे यह ऊर्जा वातावरण से या सीधे सूर्य से, जैसा कि स्वपोषी पौधों में, अथवा भोजन से प्राप्त होती है। इनसे यह पता लगता है कि कोई भी जीव वातावरण से अलग क्यों नहीं रह सकता।

निम्नलिखित क्रिया को देखिए :

ग्लूकोस + आक्सीजन

↓

कार्बनडाइआक्साइड + पानी + ऊर्जा

इसकी *रिवर्स क्रिया* सैद्धान्तिक रूप से सम्भव है। लेकिन वास्तव में *रिवर्स क्रिया* तब तक नहीं होती जब तक उसे मुक्त ऊर्जा न दी जाए।
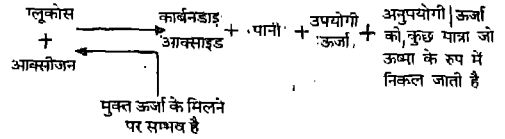
खुला तंत्र, स्थायी दशा तथा होमियोस्टेसिस

सजीव को बराबर मुक्त ऊर्जा मिलती रहनी चाहिए अन्यथा जीव का संगठन समयानुसार मर जाएगा और अन्ततः जीव की मृत्यु हो जाएगी। ऐसा तन्त्र जिसमें लगातार ऊर्जा का प्रवाह परोक्ष तथा प्रत्यक्ष रूप में होता रहे, *खुला तंत्र* कहलाता है।

बंद तंत्र उसे कहते हैं जिसमें पर्यावरण से पदार्थों का आदान-प्रदान न हो। *स्थायी दशा* में भी खुला तंत्र एक तंत्र है (चित्र 2.3)। आप इस कथन का अर्थ
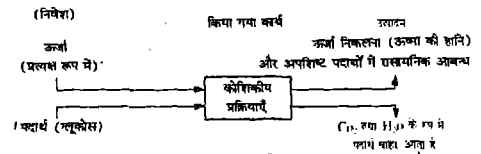
चित्र 2. 3 स्थायी दशा में एक खुला तंत्र है।

समझना चाहेंगे। स्थायी दशा में पदार्थों तथा ऊर्जा के अन्दर जाने की दर निकास दर के समान होती है। उदाहरण के लिए एक सजीव को लगातार पानी, आक्सीजन, ऊर्जा तथा विभिन्न पदार्थ मिलते रहने चाहिए। इनके बिना सजीव अपने को नहीं बनाए रख सकता। जीव के शरीर से कार्बन डाइआक्साइड,

चित्र 2. 2 ऊर्जा के एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तन के साथ कुछ ऊर्जा की हानि ऊष्मा के रूप में हो जाती है।

नाइट्रोजन अपशिष्ट तथा ऊष्मा बाहर निकलते रहना चाहिए। ये रासायनिक क्रियाओं के उत्पाद हैं और यदि ये शरीर में एकत्र हो जाएँ तो शरीर के लिए हानिकारक हैं।

सजीव में स्थायी दशा में स्वनियमन प्रक्रम होता है। ऐसे स्व-नियमित तंत्र को *होमियोस्टेसिस* कहते हैं। कोशिका के कार्य (अर्थात् शरीर क्रियात्मक संतुलन) करने के लिए जीव के शरीर में भीतरी वातावरण की ईष्टतम दशा बनाई रखी जाती है। बहुकोशिकीय जीवों में सभी कोशिकाएं (जनन कोशिकाएँ इसका अपवाद हैं) शरीर में ईष्टतम दशाओं को बनाए रखने में सहायता करती हैं।

होमियोस्टेसिस का वर्णन करने के लिए आप अपने दैनिक जीवन के बहुत से उदाहरण ले सकते हैं।

(क) जब आप रोशनी से अंधेरे सिनेमा हाल में जाते हैं तो शुरू में आप लगभग कुछ नहीं देख पाते हैं। लेकिन कुछ ही सेकंडों के बाद आप अपनी आँखों को मंद प्रकाश के अनुकूल कर लेते हैं और फिर आगे बढ़ते हैं।

(ख) आपका हृदय एक मिनट में 72 बार धड़कता है। जब आप सीढ़ियों पर दौड़कर चढ़ते हो तो आपके हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। यह इसलिए होता है क्योंकि उस समय उत्तकों को अधिक रुधिर की जरूरत होती है। लेकिन कुछ समय बाद हृदय की धड़कन पुनः सामान्य हो जाती है।

(ग) व्यायाम करने के बाद आपके शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है। आपको बहुत पसीना आता है। पसीने के वाष्प बनकर उड़ जाने के बाद ठंडक होती है और शरीर का तापक्रम गिर जाता है। इसी प्रकार सर्दियों में त्वचा सिकुड़ जाती है क्योंकि सर्दियों में ऊष्मा का संरक्षण करना आवश्यक है।

(घ) यदि आपके थोड़ी चोट लग गई हो अथवा थोड़ा संक्रमण हो गया हो तो, आपको अस्थायी तौर पर असुविधा होगी। आपके शरीर में कुछ इस प्रकार की क्रियाविधि होगी जो इस असुविधा पर भी काबू पा लेगी और आप कुछ ही समय बाद सामान्य हो जाओगे। आप बाद में प्रतिरक्षा साधन के विषय में पढ़ेंगे।

जीवों में होमियोस्टेटिक की क्रिया विधि पुनर्निवेश तंत्र द्वारा होती है। उदाहरण के लिए रुधिर में थाइराक्सिन हार्मोन का स्तर पीयूष तथा थायराइड ग्रन्थियों की प्रतिक्रिया के कारण होता है जो थायराक्सिन का स्राव करती हैं। थायराक्सिन, कोशिकाओं की रासायनिक क्रियाओं की दर का नियमन करती है।

यद्यपि होमियोस्टेटिक क्रिया विधि सभी सजीवों में सामान्य है, लेकिन उनका समझना बड़ा कठिन है। उदाहरण के लिए हम यह भली प्रकार नहीं समझते कि कौन कोशिका विभाजन को आरम्भ करते हैं; और कौन से ऐसे कारक हैं जो कोशिका विभाजन को बन्द करते हैं, कितनी कोशिकाएँ, और कितने माप की बननी चाहिए; और कौन सी कोशिका से किस प्रकार के ऊतक बनने चाहिए, इत्यादि। पौधों तथा जन्तुओं में विभिन्न प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं। उनमें विभिन्न प्रकार की उपापचय क्रियाएँ होती है। फिर भी वे न केवल कोशिका स्तर पर होमियोस्टेसिस को बनाये रखते हैं बल्कि सभी कोशिकाएँ, ऊतक तथा अंग आपस में समन्वय करके जीव में होमियोस्टेसिस को बनाये रखते हैं। कोशिकीय स्थायी दशा सभी स्थायी दशाओं तथा अनुकूलन तथा स्वजनन का आधार है। होमियोस्टेसिस किसी जीव तक ही सीमित नहीं होती, यह जीव के पदानुक्रम स्तरों पर होती है और प्रकृति से संतुलन को बनाने में सहायता करती है। इसके विषय में अधिक जानकारी आपको इसी पुस्तक में बाद में दी जायेगी।

जनन एवं उत्तरजीविता

जीव की मृत्यु होने के कई कारण हैं जैसे परभक्षण अथवा अणुओं के बदलने में असफलता। यदि किसी स्पीशीज को जीवित रहना है तो इसके सदस्यों को मरे हुए की जगह लेनी चाहिए। अपनी ही तरह
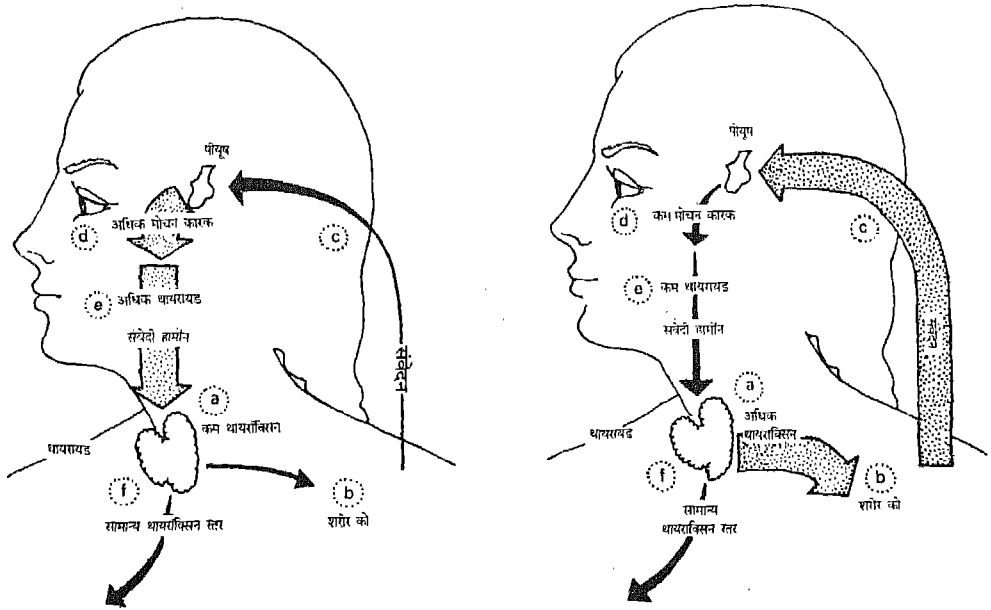
चित्र 2. 4 पीयूष तथा थायरॉयड ग्रन्थि में पुनर्निवेश-प्रणाली को समझने के लिए प्रत्येक चित्र में दिए गए अक्षरों के क्रम में चलिए।

की संतति उत्पन्न करना सभी सजीवों का गुण है। करोड़ों वर्ष पूर्व डी. एन. ए. (DNA) जैसे गुरु अणुओं में द्विगुणित होने की क्षमता आ गई है। जीवों की संतति वृद्धि, जनन प्रक्रिया द्वारा ही सम्भव है। ऐसा कथन है कि "हमेशा कोई भी जीवित नहीं रहता लेकिन फिर भी जीवन चलता रहता है।" इस कथन से प्रकृति में जनन की भूमिका का पता चलता है।

जनन के लिए कोशिका को निर्देश की आवश्यकता होती है। यह डी. एन. ए. में होता है। डी. एन. ए. आनुवंशिकी अणु है। डी. एन. ए. में वृद्धि विभेदन तथा जीवन की अन्य जैव प्रक्रियाओं की सूचनाएँ संचित रहती हैं। यह सूचना उस "ब्ल्यूप्रिंट" के समान है जो एक आर्कीटैक्चर बिल्डिंग बनाते समय तैयार करता है। डी. एन. ए. के संदेश को कोशिका में स्थित कोशिकॉग ले लेते हैं और प्रोटीन बनाते हैं। उनमें से कुछ प्रोटीन एंजाइम के रूप में कार्य करते हैं। एंजाइम निर्जीव पदार्थों को सजीव पदार्थों में परिवर्तन करने में सहायता करते हैं। कोशिका में यह सारी प्रक्रिया स्वनियमित होती है।
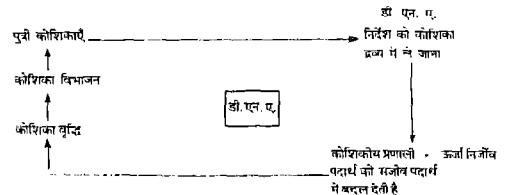
चित्र 2. 5 डी. एन. ए. में कोशिकीय सूचनाएँ एकत्र रहती हैं।

विषाणु अद्भुत हैं। उनमें आनुवंशिकी पदार्थ होता है लेकिन वे उसका स्वयं उपयोग नहीं कर सकते। ये केवल अन्य सजीव कोशिकाओं में परजीवी जीवन व्यतीत करते हैं। सजीव कोशिका के बाहर ये अन्य निर्जीव पदार्थों की तरह होते हैं। विषाणु के कणों को कई वर्षों तक बोतल में संचित कर सकते हैं। जब विषाणु किसी मेजबान कोशिका को संक्रमित करता है तब उसमें स्थित पदार्थ तथा तन्त्र

सक्रिय हो जाता है और जनन करना आरम्भ कर देता है। विषाणु को सजीव कोशिका के बिना कृत्रिम माध्यम में संबंधित नहीं कर सकते।

सिर

कोलर

पूँछ

अन्तिम प्लेट

पूँछ तन्तु
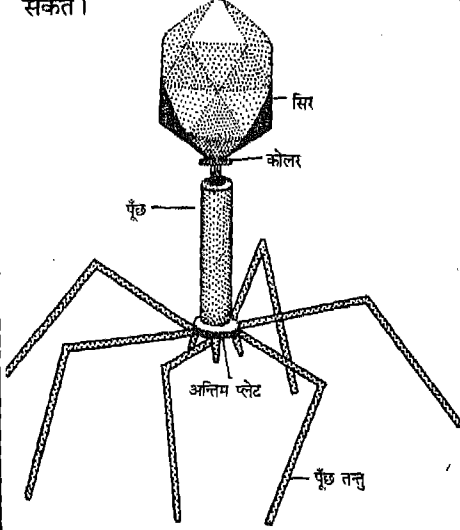
चित्र 2. 6 जीवाणु भोजी विषाणु T_4 फेज,

प्रकृति में जनन का सारांश नीचे दिया गया है।

डी. एन. ए. की प्रतिकृति

वृद्धि,कोशिकीय अंगकों का विभेदन
कोशिका विभाजन की तैयारी

↓

कोशिका विभाजन = कोशिकीय स्तर पर जनन
(सभी एक कोशिकीय जीव)

↓

कोशिकीय विभाजन तथा उत्तकों तथा
अंगों का विभेदन जारी रहना

↓

बहुकोशिकीय जीवों में परिपक्वता अर्थात् जनन अंगों
का बनना (लैंगिक, अलैंगिक अथवा कायिक)

↓

बहुकोशिकीय जीवों का जनन

आप अलैंगिक, लैंगिक तथा कायिक जनन के विषय में बाद में पढेंगे

अनुकूलन

प्रत्येक जीव में बदलमे की प्रवृत्ति रहती है। आप बाद में आनुवंशिक विविधता तथा उसके कारणों के विषय में पढ़ेंगे। उपयोगी परिवर्तन जो किसी जीव को उसके वातावरण में सफलतापूर्वक जीवित रहने में सहायता करते हैं, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित हो जाते हैं। यह किसी स्पीशीज को उसके वातावरण में अनुकूलन में सहायक होते हैं। यदि उपयोगी विविधता असफल हो जाए तो वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के प्रति उसकी अनुकूलन क्षमता कम हो जाती है और उसकी उत्तरजीविता कठिन हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में स्पीशीज मर जाती है और कालान्तर में लुप्त हो जाती है।

अनुकूलन का दो वर्गों में अध्ययन कर सकते हैं। ये वर्ग हैं *अल्पकालीन अनुकूलन* तथा *दीर्घकालीन अनुकूलन*। दीर्घकालीन अनुकूलन पीढ़ी दर पीढ़ी चले जाते हैं। इनके कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं:

अल्पकालीन अनुकूलन

(क) हमारी त्वचा जब अधिक समय तक सूर्य के प्रकाश में रहती है तब काली हो जाती है। यह एक अनुकूलित अनुक्रिया है जिसमें त्वचा के वर्णक (मैलानिन) त्वचा की ऊपरी सतह पर एकत्र हो जाते हैं। वे विकिरण अधिक अवशोषित करते हैं और उससे नीचे स्थित ऊतकों की रक्षा करते हैं।

(ख) शीत निष्क्रिय जन्तु अपने सभी क्रियाकलापों को छोड़ देते हैं और अनुकूल परिस्थिति के वापसी तक बहुत ही कम उपापचय दर को बनाए रखते हैं। वे जैव-प्रक्रियाओं को चलाने के लिए संचित वसा से ऊर्जा प्राप्त करते हैं।

(ग) पौधे अनुकूलित अभिक्रियाएं दिखाते हैं जैसे प्रकाशानुवर्तन (प्रकाश की ओर प्ररोह की वृद्धि होना) तथा गुरुत्वानुवर्तन (जड़ों का गुरुत्वाकर्षण की ओर वृद्धि करना) (चित्र 2.7)।

(घ) प्रसुप्त बीज अपनी सभी क्रियाओं को इस प्रकार छोड़ देते हैं कि वे मृत दिखाई देते हैं।
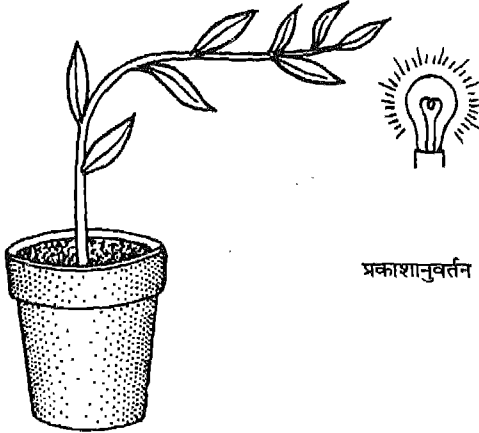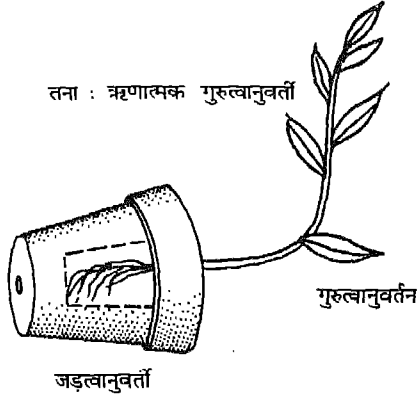
चित्र 2. 7 पौधों में प्रकाशानुवर्ती तथा गुरुत्वानुवर्ती वृद्धि

अनुकूल परिस्थिति मिलने पर ये बीज अपनी प्रसुप्तावस्था को तोड़ते हैं और भ्रूण अंकुरित होता है।

ये अल्पकालीन अनुकूलन भी जीव की उत्तरजीविता के लिए महत्वपूर्ण हैं।

दीर्घकालीन अनुकूलन

(क) चित्र 2.8 में पक्षी के पंजों तथा चोंच की रचनाओं को देखो। ये पक्षीसाद तथा भोजन लेने के लिए अनुकूलन के उदाहरण हैं।

(ख) कंगारू अपनी मोटी पूँछ को पाँचवे अंग के रूप में उपयोग करता है (चित्र 2.9)।

पौधे तथा जन्तुओं में संवेदना के प्रति अनुक्रिया भिन्न होती है। जन्तु किसी भी संवेदना से बचने के लिए वहाँ से चले जाते हैं। उनकी अनुक्रियाएँ तेज होती हैं और हम उन्हें देख भी सकते हैं। पौधे चल नहीं सकते। उनकी शनैः शनैः शरीर क्रियात्मक अभिक्रिया अनुकूलन की मुख्य विधि है। शैशवकली के चारों ओर शल्क का बनना, वल्क का विकास होना और पत्तों का गिरना, पौधों को अत्यधिक ठण्ड से बचने में सहायता करते हैं। आपको याद रखना चाहिए कि बहुत से शंकुवृक्ष (जिम्नोस्पर्म) तथा कुछ एन्जियोस्पर्म सदाबहार होते हैं और वे एक ही समय में अपने सारे पत्तों को नहीं गिराते। उत्तरी अक्षांश में अक्तूबर के प्रथम दिनों में पत्तों का गिरना बड़े नियमित रूप से होता है। गिरने से पहले पत्ते हरे से पीले या लाल रंग के हो जाते हैं। यह देखने में बहुत अच्छा लगता है कि सारा वन ऐसे रंग का हो जाता है। ऐसा पादप हार्मोन के कारण होता है जिन्हें इसका आदेश दिन की लम्बाई कम होने तथा रात का तापक्रम कम होने के कारण मिलता है।

(ग) यदि हमारी टखने की हड्डी पीछे की ओर निकली हुई न होती तो हम सीधे खड़े होने के लिए अपनी टाँगों का उपयोग नहीं कर सकते थे (चित्र 2.10)।

(घ) यदि हमारे सम्मुख अंगुष्ठ नहीं होते तो हमारे हाथ विभिन्न क्रियाएँ जैसे औजारों का उपयोग, लिखना, बुनना, कातना आदि नहीं कर पाते (चित्र 2.11)।

(ङ) रेगिस्तान में उगने वाले पौधों में या तो पत्ते नहीं होते या उनके पत्ते गूदेदार तथा गूदेदार तने पर मोटी बाह्य त्वचा होती है और उस पर मोम की एक परत होती है।

(च) रात में खिलने वाले फूल प्रायः सुगन्धित होते हैं। बहुत से सफेद होते हैं। पौधे के ये गुण
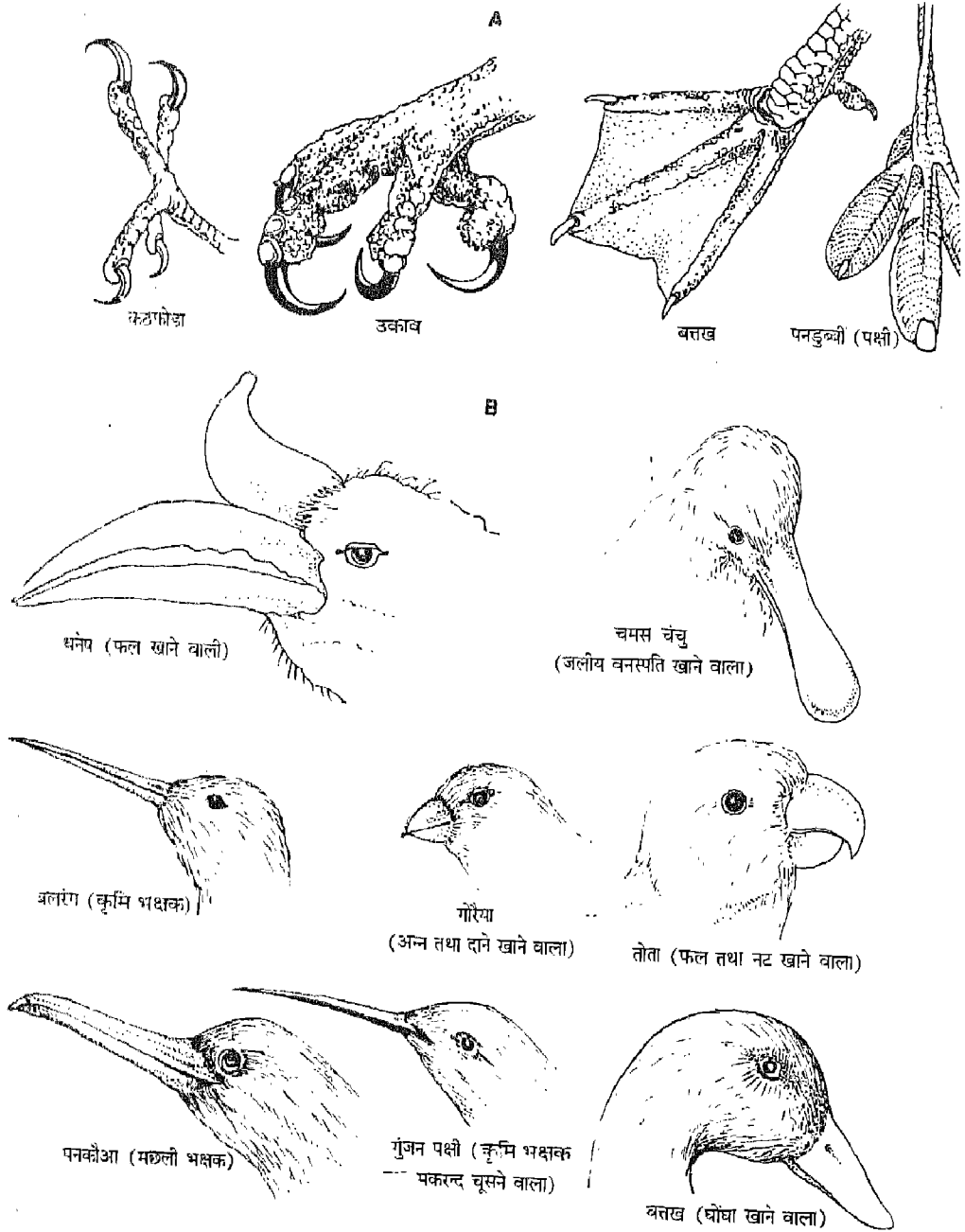
चित्र 2. 8 (a)पक्षियों में विभिन्न प्रकार के पंजे
(b)पक्षियों में विभिन्न प्रकार की चोंच

चित्र 2. 9 कंगारू अपनी पूंछ को पांचवें पाद के रूप में उपयोग करता है।

चित्र 2.10 सीधे खड़े होकर चलने का विकास: रामापिथिकस सबसे पुराना प्राइमेट — इसे मनुष्यों का पूर्वज माना जाता है। टखने की हड्डी का ज्यादा विकास नहीं। क्रोमेगनान मैन — आधुनिक मनुष्य का पूर्वज। टखने की हड्डी अधिक विकसित।

क्रोमेगनान मैन
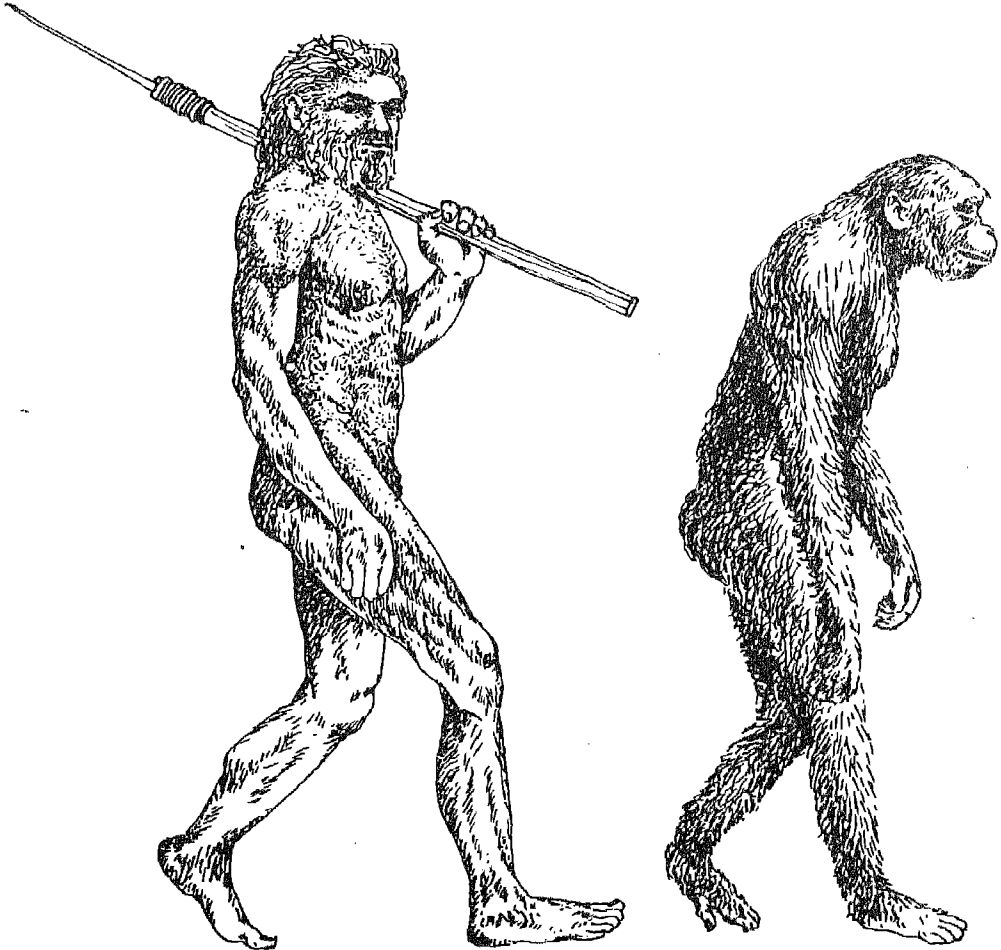
रामापिथिकस
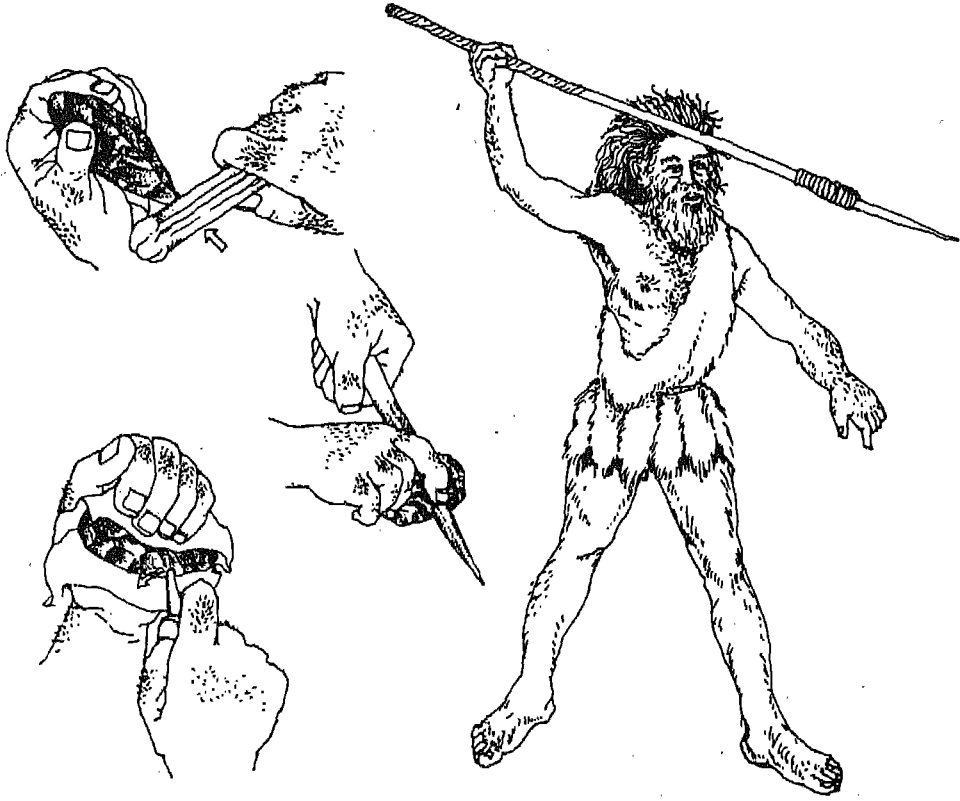
चित्र 2.11 आदिमानव द्वारा औजार बनाने में सम्मुख अंगुष्ठ उपयोग।

परागण करने वाले कीटों को आकर्षित करते हैं।

(छ) मच्छर को अंडे पैदा करने के लिए स्तनधारियों में स्थित प्रोटीन की आवश्यकता होती है। केवल मादा एनोफ्लीज मच्छर में ऐसे मुखांग होते हैं जो त्वचा में घुसकर रुधिर को चूस सके। नर मच्छर पौधों का रस चूसता है और उसमें रुधिर को चूसने वाले मुखांग नहीं होते।

ये दीर्घकालीन अनुकूलित गुण धीरे-धीरे लाखों वर्षों में आये हैं। जीवाश्म से ऐसे जीवों का पता लगता है जो वातावरण के परिवर्तन के अनुसार अनुकूलित नहीं हुए और शनैः शनैः लुप्त हो गये।

सजीवों में अधिक विविधता के कारण बहुत से अनुकूलन के उदाहरण हैं (चित्र 2.11, 2.12, 2.13 तथा 2.14)।

चित्र 2.12 अफ्रीका में कालाहारी मरुस्थलों के शिकारियों द्वारा भाषा इंगित में अंगुलियों का उपयोग। शिकार की खोज के दौरान शिकारी लोग अंगुलियों के इशारे से एक दूसरे को सूचना देते रहते हैं।

चित्र 2.13 ऑर्किड कुटुम्ब का एक सदस्य ऑफ - रिसम्यूसोफेरा। जिसके पुष्पों की आकृति किसी Wasp स्पीशीज की मादा की आकृति की तरह होती है

चित्र 2.14 लिम्नोफिल्ला जलीय पौधे की पत्तियों की रचना में अनुकूलन (नीचे)। पानी के नीचे तथा (ऊपर) क्रम पत्तियाँ। बहुत ही महीन अनुच्छेद पत्तियाँ पानी में डूबे रहने के अनुकूल। दोनों ही प्रकार की पत्तियाँ पानी में डूबे रहने के अनुकूल। दोनों ही प्रकार की पत्तियाँ एक ही पौधे पर पाई जाती हैं।

इन अनुकूलनों के कारण ये जीव पीढ़ी दर पीढ़ी वास स्थानों में रहने में सक्षम हो सके।

क्या आप जानते हैं कि गुंजन पक्षी अथवा शकरखोर हमेशा फूलों पर ही मंडराते रहते हैं उन पर बैठते क्यों नहीं हैं? इसका कारण यह है कि कुछ फूल इतने छोटे हैं कि वे इन छोटे पक्षियों का वजन नहीं सह सकते। पक्षियों में ये अनुकूलन इस प्रकार का है कि उडते समय मंडराते रहें, मकरन्द चूसें और पंखुड़ियों में छुपे कीटों को पकड़ लें। मधुमक्खियाँ तथा दीमक एक जटिल संगठन बनाती हैं जिनमें उनका कार्य विभाजन होता है। यह स्पष्ट नहीं है कि उनमें कितना ज्यादा संगठन होता है।

मृत्यु की सार्थकता

मृत्यु जीव के जीवन चक्र का जन्मजात भाग है। प्रत्येक जीव का जीवन काल भिन्न है (चित्र 2.15)। प्रत्येक स्पीशीज कुछ समय के लिए ही जीवित रहती हैं लेकिन मृत्यु का जीवविज्ञान अभी तक पूरी तरह समझ में नहीं आया। बहुत से जीवों में काल प्रभावन, घायल और अनुपयोगी जीवों को प्रायः अलग कर देते हैं और उन्हें मरने देते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है। कुछ जीवों को पता चल जाता है कि
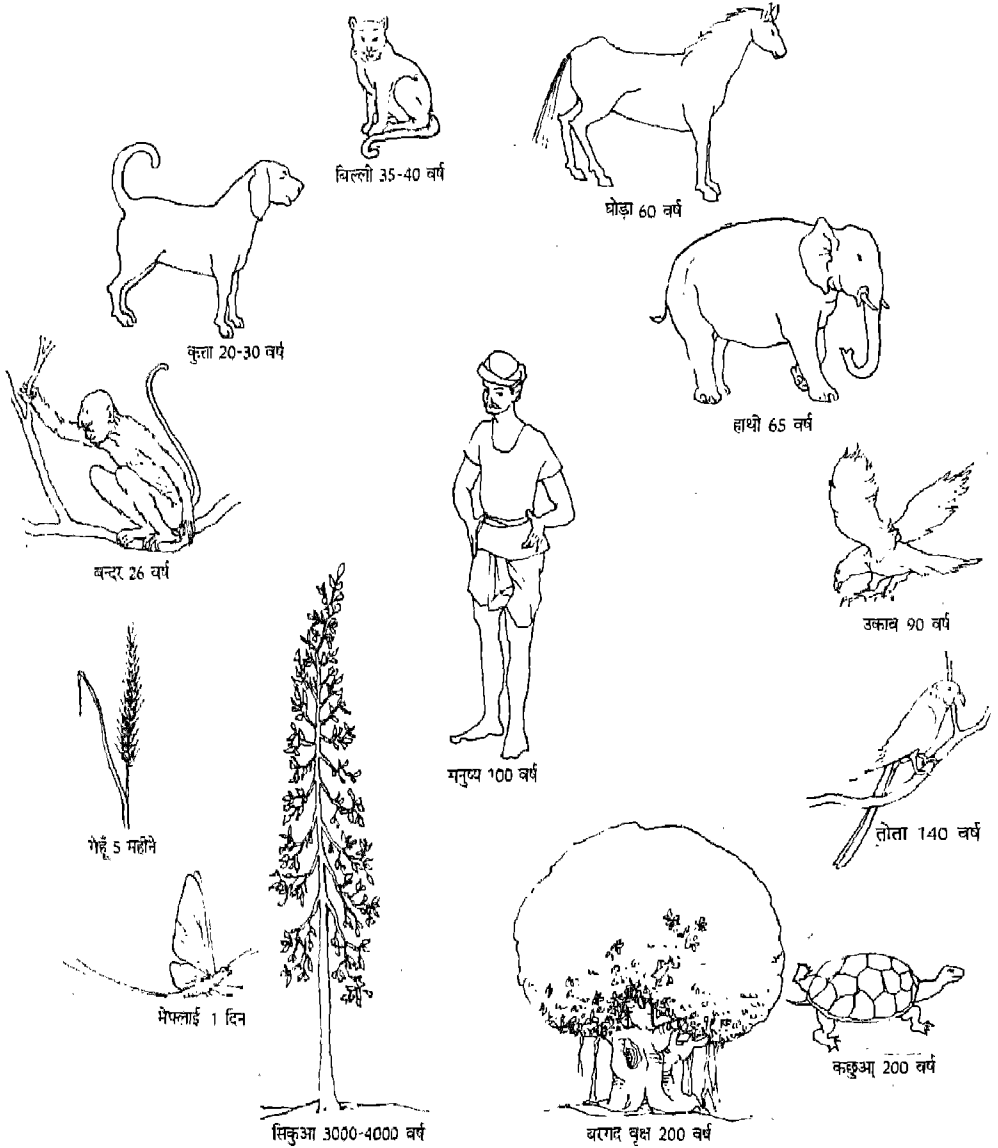
चित्र 2.15 कुछ सामान्य पौधों तथा जन्तुओं की आयु (जीवन चक्र)

उनकी मृत्यु होने वाली है। आप यह जानने को उत्सुक होंगे कि बहुवर्षीय पौधे कितने समय तक जीवित रह सकते हैं? कुछ वृक्ष जैसे *सिक्वया* हजारों साल जीवित रहता है। इसका कारण यह है कि पौधे अपने शीर्ष भागों से वृद्धि करते हैं जबकि पौधों के अधिकतर भाग में बहुत से मृत ऊतक हो सकते हैं।

यदि मृत्यु घटित नहीं होती तो इसकी खोज करना बहुत ही आवश्यक होता। मृत्यु के बहुत से लाभ हैं। नीचे के उदाहरणों को देखिए:

(क) आबादी की उत्तरजीविता नियमित क्रियाविधि पर निर्भर करती है जो आबादी जीवों की संख्या को नियंत्रित करती है। इस होमियोस्टेसिस में मृत्यु तथा जनन दोनों ही भाग लेते हैं। अनुमान लगाइए कि यदि जीव नहीं मरें तो अधिक जनसंख्या होने के क्या परिणाम होंगे।

(ख) जब जीव मरता है तब सूक्ष्मजीव उसे विघटित कर देते हैं। कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, सल्फर जैसे तत्व मिट्टी, हवा अथवा पानी में वापिस आ जाते हैं (पदार्थ चक्र)। प्रकृति में इससे संतुलन बना रहता है।

(ग) मृत कोशिकाएँ अथवा उनके उत्पाद जैव प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(i) मृत ऊतक जैसे पौधों में अंतःकाष्ठ तथा कार्क, जन्तुओं में नाखून, सींग, खुर तथा अधोपंख

- क्लब मॉस की कुछ स्पीशिज जैसे *सिलेजिनेला लेपिडोफिल्ला* बंजर चट्टान पर उगती है जिसमें पानी की कमी को सहन करने की शक्ति होती है। उन्हें जब पानी में रखा जाता है तो वे पुनः जीवित हो जाती हैं। इसलिए उन्हें पुनर्जीविनी पादप कहते हैं। *मायरोथैमनस* तथा *क्रटीरोस्टिगमा* दक्षिण अफ्रीका के बहुत ही सूखे क्षेत्र में उगते हैं। काले, भूरे, सूखे हुए पौधों को जब वर्षा का पानी मिलता है तो वह पुनः जीवित हो जाते हैं। पानी के अवशोषण के थोड़ी देर बाद उनके पत्ते हरे हो जाते हैं और वे क्रिया करना शुरू कर देते हैं। ये पौधे निर्जलीकरण के प्रति अनुकूलित होते हैं और प्रायः मृत से समझे जाते हैं लेकिन पानी मिलने पर उन्हें पुनः जीवन मिल जाता है।
- अमीबा दो कोशिकाओं में बँट जाता है। ये दो कोशिकाएँ फिर दो-दो में विभक्त होती हैं और इस तरह यह क्रम चलता रहता है। अमीबा कब मरता है? जीवाणु प्रत्येक 15-20 मिनट में विभक्त हो जाता है और वह अपनी पहली पहचान को खो देता है। जब वहाँ पर जीवाणु अधिक संख्या में हो जाते हैं तब जीवाणु अपने आविषालु स्राव के कारण मर जाते हैं। क्या हम इसे स्वाभाविक मौत कह सकते हैं?
- पक्षमाभी प्राणियों को अमर समझा जाता है क्योंकि उनमें द्विखंडन करने की क्षमता होती थी (अलैंगिक जनन जिसमें कोशिका दो में विभक्त हो जाती है) लेकिन अब ऐसा पता लगा है कि कुछ समय तक विखंडन क्रिया करने के बाद उनमें काल प्रभावन होता है और वे मर जाते हैं।
- चिकित्सकों के अनुसार एक मनुष्य को मृत तब घोषित करते हैं जब उसके हृदय की धड़कन बन्द हो जाए और पुतलियाँ फैल जाएँ और एक जगह स्थिर हो जाएँ (उस पर रोशनी का कोई प्रभाव नहीं होता)। चिकित्सीय मृत्यु जीव विज्ञान की मृत्यु से भिन्न होती है। चिकित्सीय मृत्यु के बाद लगभग शरीर की सभी कोशिकाएँ कई घन्टों तक जीवित रहती हैं। इसीलिए मृत्यु के कुछ मिनटों बाद अंग तथा ऊतक अंग प्रतिरोधक के लिए निकाल लिये जाते हैं।

चित्र 2.16 शीशम का तना जिसमें अंतःकाष्ठ (काले क्षेत्र में बहुत से वलय) तथा परिरेखीय रसदारू (हल्का क्षेत्र) को दिखाया गया है।

सहारा तथा रक्षा करने में सहायता करते हैं। हमारी त्वचा की ऊपरी परत मृत कोशिकाओं की बनी होती है और शरीर में तरल की हानि और हानिकारक सूक्ष्मजीवों के हमलों को रोकती है।

(ii) पौधों में परिपक्व स्क्लेरेंकाइमा कोशिकाओं के सारे पदार्थ समाप्त हो जाते हैं और उनके चारों ओर एक मोटी दीवार बन जाती है। ये दीवार यान्त्रिक सहारा देती है। अन्तःकाष्ठ जो वृक्ष के मध्य भाग में बनता है, स्तम्भ को भीतरी सहारा देता है जिससे कि वृक्ष उखड़ न सके। रसदारू में स्थित वाहिकाएँ मृत होती हैं लेकिन वृक्ष में पानी तथा खनिज ऊपर पहुँचाने में नलिकाओं का कार्य करती हैं (चित्र 2.16)।

(iii) जीव के विकास के समय कुछ भ्रूण कोशिकाएँ समयानुसार मरने दी जाती हैं। पुष्पीपादपों में जाइलम के परिपक्व होने के समय अनुप्रस्थ भित्तियाँ घुल जानी चाहिए जिससे कि एक लम्बी वाहिका बन सके। टैडपोल की पूँछ की कोशिकाएँ तथा बाह्य गिल भी समयानुसार मर जाते हैं जिससे कि टैडपोल से मेंढ़क बन सके।

दुर्घटनाओं को छोड़कर, काल प्रभावन भी जीवों की सामान्य मृत्यु का एक कारण है। बहुत से वैज्ञानिकों का विश्वास है कि काल प्रभावन जीवन चक्र का एक अंग है। काल प्रभावन के समय मुक्त ऊर्जा द्वारा एन्ट्रापी का बचना सम्भव नहीं होता और जीव लुप्त हो जाता है। काल प्रभावन के क्या कारण हैं? हमें इसका अभी तक कोई आशाजनक उत्तर नहीं मिला है लेकिन इस दिशा में प्रयत्न चल रहे हैं।

जीवन को परिभाषित करने का प्रयत्न

जब हमने यह अध्याय पढ़ना आरम्भ किया था उसकी अपेक्षा अब हमें जीवन के गुणों के विषय में अधिक ज्ञान हो गया है। आइए, अब पता करें कि जीवन क्या है? यदि जीवन के विषय में नहीं तो कम से कम हम सजीवों के विषय में कुछ सामान्य बातें बता सकते हैं।

(क) एक जीव जीवित मशीन है।

(ख) यह बाहर से सरल अणुओं को लेती है, इन्हें जटिल अणुओं में बदलती है, यह माप तथा जटिलता में अधिक हो जाती है, अपनी ही जैसी संतति उत्पन्न करती है। एक जीव के रूप में यह लगभग पूर्व निर्धारित जीवन काल अथवा दुर्घटना में मर जाती है।

(ग) सजीव तंत्र में होमियोस्टेसिस होता है।

(घ) यह बाहरी तथा भीतरी संवेदों को पहचानता है और बदले हुए वातावरण से अनुक्रिया करता है और उसके अनुसार अपने को अनुकूल करता है।

(ङ) यद्यपि स्पष्ट रूप से नहीं फिर भी सजीव तंत्र में समयानुसार विकास करने की क्षमता होती है।

इसे और सरल करने के लिए हम कह सकते हैं: जीवन बहुत ही अद्भुत है, अणुओं का जटिल संगठन है, ये अपने को रासायनिक क्रियाओं द्वारा अभिव्यक्त करता है जिससे इसमें वृद्धि, विकास, अनुक्रिया, अनुकूलन तथा जनन होता है।

सारांश

सजीव तथा निर्जीव दोनों ही एक प्रकार के तत्वों से बने हैं और उन पर एक ही प्रकार के भौतिक नियम लागू होते हैं। फिर किस प्रकार सजीव भिन्न हैं। सजीवों में संगठन के स्तर होते हैं जो भिन्न तथा अद्भुत होते हैं। एकत्रीकरण, पारस्परिक प्रतिक्रिया, संतुलन तथा परिवर्तन जो सभी प्रकार के संगठन को नियमित करते हैं, सजीवों में बहुत ही जटिल हैं। इच्छित तत्वों को सही अनुपात में ऊर्जा से मिलाने पर भी हम जीवन की उत्पत्ति नहीं कर सकते। कोई जीव मुक्त नहीं है, बल्कि वह प्रकृति का एक अंग है।

जीवन का आण्विक आधार होता है। यह मुख्यतः कार्बनिक होता है। जीवन के लिये गुरू तथा लघु दोनों ही अणु महत्वपूर्ण होते हैं। गुरू अणुओं से बहुत सी विभिन्नताएँ आती हैं और वे बहुत सी रासायनिक क्रियाओं में भाग लेते है। रासायनिक क्रियाओं के दो प्रमुख वर्ग हैं। उपापचय तथा अपापचय।

सजीव कोशिका में ऊर्जा स्थानान्तरण लगातार होता रहता है। जीवन की रासायनिक क्रियाएँ ऐसी ऊर्जा परिवर्तन से सम्भव है। कोशिका में ए.टी.पी. के रूप में ऊर्जा संचित होती है। सजीव तंत्र में एन्ट्रापी की स्थिति की होती है। जीव वातावरण से मुक्त ऊर्जा लेकर एन्ट्रापी को कम करते हैं। जीव वातावरण से ऊर्जा तथा पदार्थ ले सकता है, इसलिए इसे खुला तंत्र कहते हैं। एक खुला तंत्र स्थायी दशा में भी एकतंत्र है, क्योंकि भीतर ली गई ऊर्जा तथा पदार्थों में और छोड़ी गई ऊर्जा तथा पदार्थों में संतुलन होता है।

जीवन स्थायी दशा नियमित तथा होमियोस्टेटिक होती है, अर्थात् जीव वातावरण में परिवर्तन होने के बावजूद भी अपने भीतरी वातावरण अथवा शरीर क्रियात्मक संतुलन को भली-भांति बनाए रखते हैं।

हार्मोन इसका अच्छा उदाहरण है कि अधिकतर होमियोस्टेटिक की क्रिया विधि पुनर्निवेश तंत्र द्वारा होती है। होमियोस्टेटिक की क्रिया विधि सभी सजीव पदानुक्रम स्तरों पर होती है और संतुलन बनाए रखने में सहायता करती है।

जनन सभी सजीवों का प्रमुख गुण है। इससे संतति उत्पन्न होती है। डी.एन.ए. में कोशिका की सभी सूचनाएँ एकत्र रहती हैं और यही एक ऐसा अणु है जो अपनी प्रतिकृति स्वयं बना सकता है।

सजीवों में बदलने, अनुकूलन तथा जीविता की जन्मजात क्षमता होती है। अल्पकालीन अनुकूलन जीव की उत्तरजीविता में सहायक होता है। दीर्घकालीन अनुकूलन स्पीशीज के विकास में सार्थक होता है।

जीव अपने जीवन-काल में बहुत विभिन्नता दिखाता है। मृत्यु जन्मचक्र का जन्मजात अंग है। मृत्यु जीवविज्ञान अभी पूरी तरह समझ में नहीं आया है लेकिन मृत्यु बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आबादी इसलिए जीवित रहती है क्योंकि उनकी संख्या मृत्यु नियंत्रित कर देती है। पदार्थों के चक्र के लिए मृतजीवों का सूक्ष्म जीवों द्वारा विघटन होना बहुत आवश्यक है। यहाँ तक कि सजीव पौधों तथा जन्तुओं में मृत उत्तकों की एक विशेष भूमिका है।

हमने जीवन के विषय में बहुत अध्ययन किया है। लेकिन फिर भी जीवन की परिभाषा देना बहुत कठिन है। ऐसा कहा जा सकता है कि जीव अद्‌भुत है, अणुओं का जटिल संगठन है जो रासायनिक क्रियाओं द्वारा वृद्धि, विकास, अनुक्रिया, अनुकूलन तथा जनन करता है।

प्रश्नावली

1. क्या परिणाम होंगे यदि —
   (क) जीव जनन करने में असफल हो जाएँ?
   (ख) जीव अविनाशी हो जाएँ?
   (ग) नाखून, सींग तथा पंख में जीवित कोशिकाएँ हों?
   (घ) कोशिका में सभी अणु समान हों?
2. निम्नलिखित में से लिखे गये कथन के लिए कौन सा वर्णन सही हो सकता है —
   "अभी तक जीवन की उत्पत्ति करना संभव नहीं हो सका है।"
   (क) आण्विक संगठन का स्वभाव जटिल और पूरी तरह से समझ में नहीं आया।
   (ख) अभी तक जीवन के सभी अणुओं का पता नहीं लगा है।
   (ग) कुछ के अतिरिक्त, अधिकतर अणुओं का पता है।
3. आपने देखा है कि जीव मर जाता है। निम्नलिखित में से कौन सा कथन वैज्ञानिक दृष्टि से ठीक है?
   (क) एक सजीव मर जाता है क्योंकि उसकी कोशिकाएँ मर जाती हैं।
   (ख) क्योंकि जीव पुनः उत्पन्न किया जा सकता है।
   (ग) मृत्यु जीवन चक्र का स्वाभाविक अंग है।
   (घ) वरना पृथ्वी पर बहुत भीड़ हो जाती।
4. अपनी पुस्तक को देखे बिना ही निम्नलिखित को आरोही क्रम में सजाइए:
   आबादी, परमाणु, जीव, अणु, जैव-मंडल, समुदाय, कोशिका, पारितंत्र, ऊतक तथा अंग।
5. बताइए कि पहिले की अपेक्षा आजकल जीवन को समझने के लिए आण्विक पहुँच पर अधिक ध्यान क्यों दिया जाता है?
6. नीचे कुछ परिस्थितियाँ दी गई हैं:
   (क) खेत में गेहूँ की फसल पक रही है।
   (ख) राम लम्बी दौड़ में भाग ले रहा है।
   (ग) आपने अपना हाथ जला लिया था जो अभी-अभी ठीक हुआ है।
   (घ) सीता गहरी नींद में सोई हुई है।
   इनका वर्णन ऊर्जा स्थानान्तरण अथवा ऊर्जा रूपान्तरण के संदर्भ में करिए।
7. एन्ट्रॉपी का क्या अर्थ है? सजीव एन्ट्रॉपी का किस प्रकार सामना करते हैं।
8. अपने शरीर की तुलना किसी आटोमोबाइल से करो। इनमें से कौन से गुण दोनों में समान हैं और कौन-कौन से गुण भिन्न हैं?
9. यह कैसे है कि जीवित रहने का अर्थ अमीबा, आम के वृक्ष, तितली, अथवा मनुष्य में एक समान है?
10. उदाहरणों सहित स्थायी दशा तथा होमियोस्टेसिस का वर्णन करिए।

अध्याय 3

जीवन, इसकी उत्पत्ति, विकास तथा अनुरक्षण

करोड़ों वर्ष पूर्व जीवन की उत्पत्ति हुई थी और तब से आज तक विविध प्रकार के जीव उत्पन्न हुए हैं। ऐसी कौन सी प्रणाली है जिसके कारण प्रकृति में इतने वर्षों से विविधता बनी हुई है? मनुष्य सभी प्राणियों में सबसे आधुनिक तथा अधिक विकसित जीव है। इसका ब्रह्माण्ड में क्या स्थान है और इस ग्रह पर उसकी क्या भूमिका है? इस अध्याय में हम इन्हीं प्रश्नों के विषय में पढ़ेंगे।

जीवन की उत्पत्ति

क्या पृथ्वी ही केवल एक ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन की उत्पत्ति और विकास हो सकता है? अथवा क्या जीवन का प्रारम्भ किसी अन्य ग्रह पर हुआ हो और बाद में पृथ्वी पर आया हो? यह कल्पना करना कठिन है कि जीवन का कोई कण अन्तरिक्ष से विकिरणों तथा उच्च ताप को सहन करता हुआ पृथ्वी पर पहुँचे। फिर भी, कुछ वैज्ञानिकों का ऐसा मत है। ब्रह्मांण्ड के अन्य भाग भी पृथ्वी ग्रह की जैसी दशाओं में उत्पन्न हुए हैं और सम्भवतः वहाँ पर भी उसी प्रकार का आदिम पदार्थ हो। प्रायः अविश्वसनीय है कि वही तत्व जो सारे ब्रह्माण्ड को बनाता है, वह एक स्थान पर जीवन की उत्पत्ति करे तथा दूसरे स्थान पर कोई जीवन न उत्पन्न करे। मंगल ग्रह पर जीवन होने के प्रमाण मिले हैं। वैज्ञानिक लगातार अन्तरिक्ष में जीवन का पता लगाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

हम पढ़ चुके हैं कि जीवन का क्या अर्थ है, लेकिन हमें यह नहीं पता कि जीवन की उत्पत्ति कैसे हुई। किसी ने भी इसे घटित होते नहीं देखा है। हमारे पास कुछ ऐसे बिखरे हुए प्रमाण हैं जो वैज्ञानिकों को 3000-4000 मिलियन वर्ष पूर्व की घटनाओं का पता लगाने में सहायता देते हैं। यह वही संभावित समय है जब लगभग जीवन की उत्पत्ति हुई थी। इस प्रकार जीवन उत्पत्ति की कहानी इस बात पर आधारित है कि ''ऐसा हुआ होगा''।

पृथ्वी की उत्पत्ति 4,500 मिलियन वर्ष पूर्व हुई थी। पृथ्वी जब विकसित हो रही थी तब उस पर समानीत वायुमंडल था। ऐसा सोचा जाता है कि इसमें नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, अमोनिया, मीथेन, कार्बन मोनोक्साइड तथा पानी स्थित था। पराबैंगनी किरणों तथा विद्युत विसर्जन से ऊर्जा प्राप्त होती थी। जब पृथ्वी की पपड़ी बन रही थी तब पृथ्वी पर सैकड़ों वर्षों तक भारी वर्षा हुई जिससे बहुत बड़े पानी के भंडार बन गए। वायुमंडलीय यौगिक तथा अकार्बनिक

बिगबैंग, सौर परिवार, पृथ्वी की उत्पत्ति

वैज्ञानिकों का ऐसा विश्वास है कि दस हजार से बीस हजार मिलियन वर्ष पूर्व ब्रह्माण्ड सान्द्रित पदार्थ का एक एकल पिण्ड था। पदार्थ फटा (बिगबैंग) और उससे हाइड्रोजन के परमाणु तथा उससे संबंधित नाभिकायें निकलीं जिनसे सुसंगठित आकाशगंगाएँ बनीं।

ब्रह्माण्ड वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ब्रह्माण्ड में लगभग 100,000 मिलियन आकाशगंगाएँ हैं। सभी आकाशगंगाएँ बड़ी तेजी से लगभग प्रकाश की गति से एक दूसरे से दूर जाती नजर आ रही हैं। प्रत्येक आकाशगंगा में निरंतर तारे उत्पन्न होते हैं तथा मरते रहते हैं। हमारी आकाशगंगा उनमें से एक है। जितने भी तारे हम अपनी आँखों से देख सकते हैं वे सब हमारी आकाशगंगा के हैं। हमारा सूर्य एक ऐसा ही तारा है तथा घूमते हुए ग्रहों तथा उपग्रह धूमकेतु तथा क्षुद्रग्रह हमारे सौर परिवार हैं। पृथ्वी भी सौर परिवार का एक भाग है। हमारा सूर्य ही केवल एक ऐसा तारा नहीं है जिस पर ग्रह होते हैं अन्य तारों पर भी ग्रह होते हैं, लेकिन वे इतनी दूर हैं कि हम उन्हें शक्तिशाली तथा बड़े टेलिस्कोप से भी नहीं देख सकते।

हमारे सौर परिवार की उत्पत्ति कैसे हुई? वैज्ञानिक इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न प्रकार से देते हैं। आजकल का विचार यह है कि सौर परिवार की उत्पत्ति शीत कॉस्मिक, बादलों के धूल तथा गैस जिसे नीहारिका कहते हैं, गुरुत्वाकर्षण संघनन द्वारा हुई। संघनन के समय कणों के समीप आने से प्रारम्भिक गति के कारण यह बादल घूमने लगा। ज्यों-ज्यों संघनन तथा घूमना चलता रहा उस समय बहुत सा भार केन्द्र के समीप संघनित हो गया और चपटी डिस्क के टूटने से बहुत से बादल के छोटे-छोटे भार बन गये। सूर्य संघनन केन्द्र से बना। संघनन के कारण तापक्रम में वृद्धि हुई और जब ताप अधिक हो गया तब नाभिकीय क्रियाएँ प्रारम्भ हुईं और नये तारा "सूर्य" से विकिरण ऊर्जा निकली। पृथ्वी सहित अन्य ग्रह कम संघनित बाहरी क्षेत्र से बने। इन सभी छोटे-छोटे बादलों में संघनन हुआ जिससे केन्द्र में भारी पदार्थ सांद्रित हो गये।

लवण तथा खनिज धीरे-धीरे पानी में घुल गए जिससे महासागर बने (चित्र 3.1)। महासागर "यूष" की तरह थे जिसमें बहुत प्रकार के यौगिक बने और अन्ततः एक स्वगुणन अणु बना (चित्र 3.2)।

अन्ततः स्वगुणन अणु के चारों ओर एक झिल्ली बन गई (लिपिड तथा प्रोटीन से बनती है)। जिसमें रासायनिक यौगिक तथा पानी था जिससे प्रथम "कोशिका की तरह" की एक रचना बनी। लेकिन इसको समझने में बहुत सी बातें अस्पष्ट हैं कि किस प्रकार सर्वप्रथम उपापचयी तथा स्वप्रतिकृति कोशिका बनी। आजकल हम जानते हैं कि प्रोटीन का संश्लेषण डी. एन. ए. द्वारा होता है और डी. एन. ए. बिना एंजाइम के नहीं बन सकता, जोकि स्वयं एक प्रोटीन है। यह "मुर्गी-तथा-अंडे" जैसी परिस्थिति है।
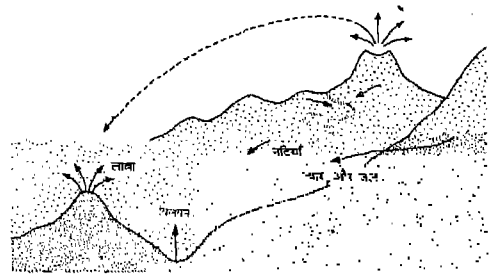
चित्र 3.1 समुद्री लवण के स्रोत। कुछ ज्वालामुखियों से आते हैं; कुछ समुद्र के तल में घुले हुऐ थे; कुछ ज्वार-भाटा के कारण जिससे तटीय क्षेत्र टूटे तथा लवणों का एकत्रीकरण हुआ; कुछ पृथ्वी पर उत्पन्न हुए और वर्षा तथा नदियों द्वारा ले जाये गये।

इन सूक्ष्म जीवों के तंतुमयी तथा कॉलोनी मुक्त जीवाश्म पश्चिमी आस्ट्रेलिया में मिले हैं। पुरा वनस्पति विज्ञान, लखनऊ की बीरबल साहनी संस्था के वैज्ञानिकों ने भारत में ऐसे रसायनी बैक्टीरिया खोजे हैं जो 2900 मिलियन वर्ष पुराने हैं (चित्र 3.3)।

चित्र 3.3 प्रारंभिक प्रकाश संश्लेषी आक्सीजन उत्पन्न करने वाले साइनो बैक्टिरिया के प्राप्त जीवाश्य 2.9 करोड़ वर्ष प्राचीन माने जाते है।

प्रारम्भिक गैसें

NH_3
—CN
CH_4
H_2O
CH_4

N-बेस
शर्करा
अमीनो अम्ल
ग्लिसरीन
वसीय अम्ल

न्युक्लिक अम्ल
न्युक्लियोटाइड
पोलीसैकेराइड्स
प्रोटीन
वसा, लिपिड

DNA RNA
ऊर्जावाहक
को-एन्जाइम
निर्माणकारी पदार्थ
एन्जाइम
ऊर्जास्रोत
जैव विकास

1
2
3
4
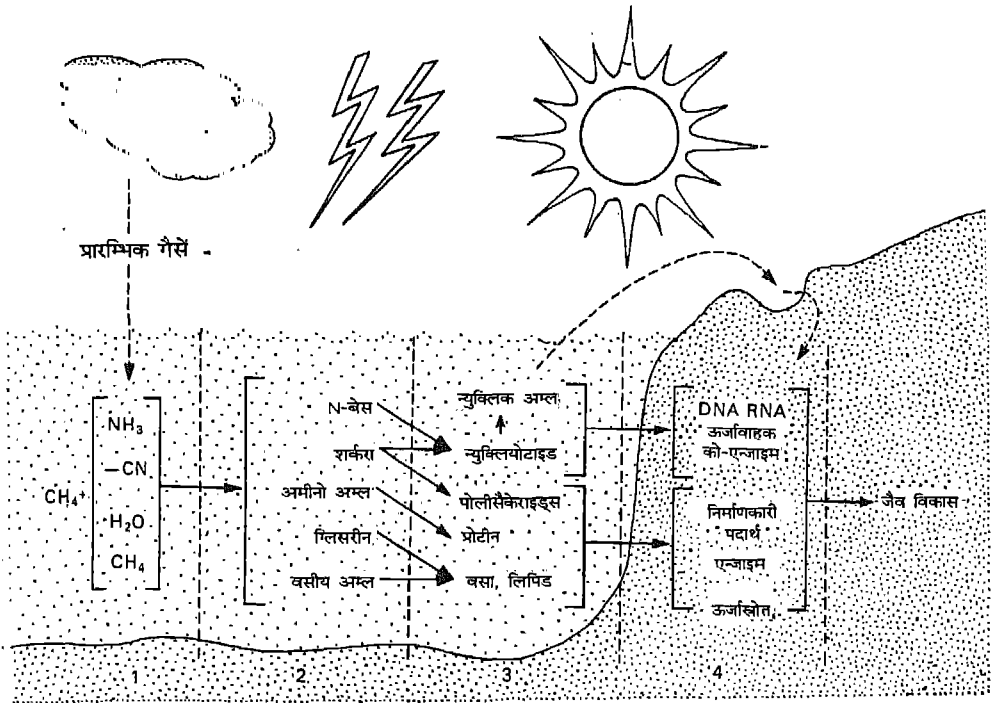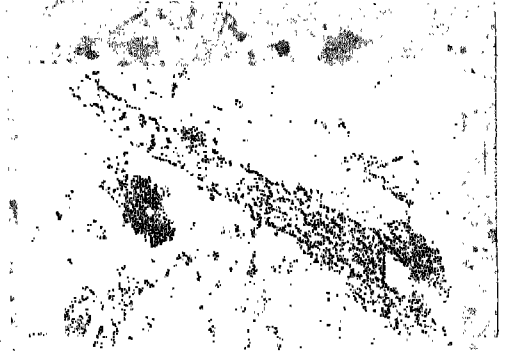
चित्र 3.2 रासायनिक विकास एक के बाद एक तीन या चार प्रावस्थाओं में हुआ। मूल गैसें कच्ची सामग्री के रूप में प्रारम्भिक वायुमण्डल से आईं (1) और सूर्य की प्रकाशीय ऊर्जा व पराबैंगनी प्रकाश के द्वारा मुख्य जैविक योगिकों का प्रतिगामी निर्माण समुद्र में हुआ (2,3)। इसके पश्चात् किनारे पर अधिक जटिल संश्लेषी क्रियाएँ हुई, जहाँ आवश्यक घटक जल के वाष्पीकरण से अत्यधिक सांद्र हो गये (4)। प्रथम उत्पन्न इकाई सजीव थी।

आरम्भ में जीव 'अनाक्सी' था क्योंकि आक्सीजन का अणु नहीं था। वे यूष में स्थित कार्बनिक अणुओं पर निर्भर रहे होंगे। ऐसे जीवों को *रसायन परपोषित* कहते हैं। इसके पश्चात् उत्पन्न होने वाले जीव ऐसे थे जो रासायनिक यौगिकों के निम्नीकरण से ऊर्जा प्राप्त कर सकते थे। इससे वे अपना भोजन स्वयं बनाते थे (अनाक्सी रसायन, स्वपोषित जैसे सल्फेट को अपचियत करने वाले जीवाणु)।

क्लोरोफिल अणु के विकास का क्रम भी इससे प्रारम्भिक जीवन की विविधता के प्रक्रम में हुआ होगा। क्लोरोफिल युक्त कोशिकाएँ कार्बोहाइड्रेट संश्लेषण के लिए प्रकाश ऊर्जा का उपयोग कर सकती थीं। सर्वप्रथम प्रकाश स्वपोषित जीवाणु अनाक्सी थे और उन्होंने आक्सीजन का उत्पाद भी नहीं किया था क्योंकि उन्होंने पानी को अभिकारक के रूप में उपयोग नहीं किया था। अब ऐसे प्रमाण हैं कि आक्सीजन स्वपोषित (साइनो बैक्टीरियम जैसे प्रकाश संश्लेषण, आक्सीजन उत्पादक) लगभग 3300 से 3500 मिलियन वर्ष पहले उत्पन्न हुए थे।

ये जीव आक्सीजन को मुक्त गैस के रूप में छोड़ते थे। आक्सीजन का उपयोग श्वसन से ऊर्जा प्राप्त करने का नया साधन बना और स्वपोषित जीव परपोषित के लिए भोजन के स्रोत बने। इस प्रकार प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन बहुत पहले ही प्रकृति में संतुलन बनाए रखने के लिए स्थापित हो गए (चित्र 3.4)।

प्रकाश संश्लेषण ने अपना प्रभाव केवल विकास तथा जीव के परिवर्धन पर ही नहीं दिखाया है बल्कि इसका प्रभाव पृथ्वी ग्रह के समूचे इतिहास पर भी पड़ा। प्रकाश संश्लेषण ने पृथ्वी के अपचय के वायुमंडल को ऑक्सीकारक में परिवर्तित कर दिया। यदि ऐसा परिवर्तन नहीं हुआ होता तो जीवन को बनाए रखने वाला वातावरण जो आज हम पृथ्वी पर देख रहे हैं,उत्पन्न नहीं हुआ होता।

आप पढ़ चुके हैं कि जीवन की उत्पत्ति पानी में हुई है। पानी हमेशा से ही जीवन के लिए आवश्यक रहा है। यदि अन्य ग्रहों पर भी पानी हो तो वहाँ पर भी जीवन की आशा की जा सकती है। ऐसा सोचना भी असम्भव है कि पानी का स्थान किसी अन्य अणु ने ले लिया हो। नीचे पानी के ऐसे अद्भुत गुण दिए गए हैं जो जीवन को बनाने में सहायक हैं:

- पानी 4°-90° सें. तक तरल रूप में होता है, और जीवन इस तापक्रम तक जीवित रह सकता है।
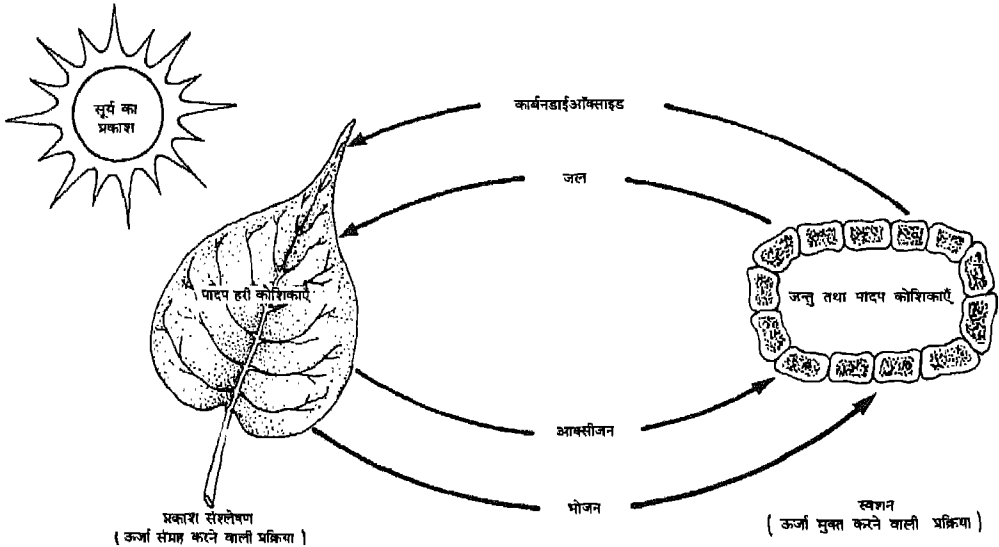
चित्र 3.4 प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन एक दूसरे को संतुलित करते हैं।

अनुमानित उत्पत्ति (मिलियन वर्षों में)	
ब्रह्माण्ड	10,000- 20,000
सौर परिवार	4,600
पृथ्वी	4,500
अजैव रासायनिक विकास ;	
अनॉक्सी जीवन :	4,200
आक्सीजन के चिन्ह आरम्भ होना	3,800
अनाक्सी प्रकाश संश्लेषी जीवाणु	3,500-3,800
साइनो बैक्टीरिया ऑक्सीजन	
प्रकाश संश्लेषी	3,300-3,500
केन्द्रक युक्त यूकैरीऑट	1,600
साधारण स्थलीय पौधे	459
प्रथम स्तनधारी	220

- पानी एक स्थायी यौगिक है और सरलता से विघटित नहीं होता। इसलिए यह रासायनिक क्रियाओं के लिए उत्तम माध्यम है।
- पानी जीवों की ताप से रक्षा करता है। चाहे जीव पानी में हों या पानी जीव में हो।
- यह तापक्रम को शीघ्रता से नहीं बदलने देता। इसका कारण इसकी गुप्त ऊष्मा है।
- जमने पर पानी फैलता है और हल्का होकर बर्फ की पर्त के रूप में तैरता है। तैरती हुई बर्फ नीचे के पानी को जमने नहीं देती जिससे जलीय जीवों की रक्षा होती है। यदि बर्फ डूब जाती तो ठंडे क्षेत्रों के समुद्र तल से ऊपर तक ठोस बन जाते और उनमें रहने वाले सारे जीव मर जाते। लेकिन अन्टार्कटिका की बर्फ की पर्त के नीचे पेड़-पौधों तथा जीव जन्तुओं का विपुल भंडार है।
- पानी सजीव कोशिकाओं से आण्विक ऑक्सीजन तथा हाइड्रोजन का मुख्य स्रोत है।
- पानी एक सर्वोत्तम घोलक है, सम्भवतः प्रकृति में पानी से अच्छा कोई अन्य घोलक नहीं है।
- शुष्क रसायन जो क्रियाविहीन होते हैं, पानी की उपस्थिति में क्रियाशील हो जाते हैं।
- पानी तोड़ने और बांधने का कार्य करता है। (आपने दूसरे अध्याय में जल अपघटित क्रिया तथा बहुलक रूप के विषय में पढ़ा है।)

विकास

विकास एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। ऐसे प्रमाण हैं कि प्रत्येक जीव में विकास करने की क्षमता होती है। विकास धीरे धीरे लगातार तथा अपरिवर्तनीय परिवर्तन की प्रक्रिया है। जटिल जीव लाखों-करोड़ों वर्षों में सरल जीवों से बने हैं। विकास विविधता के कारण होता है। विविधता आनुवंशिक पदार्थों में परिवर्तन होने से तथा प्राकृतिक वरण से होती है। इसके विषय में आप बाद में पढ़ेंगे। सभी सजीव विकास प्रक्रिया से बने हैं और उनमें विविधता होती है। लेकिन इनमें फिर भी एक मौलिक समानता होती है।

सभी सजीव एक ही तत्व से बने होते हैं और उनमें कोशिका एक संरचनात्मक इकाई है। वे अपने वातावरण से ऊर्जा प्राप्त करते हैं और वृहदाणु का निर्माण करते हैं। ये प्रक्रियाएँ रासायनिक प्रक्रियाओं के कारण होती हैं जिसे उपापचय कहते हैं। ''जीवन का अर्थ है'' जीवों में समानता। यह उनकी एकता है। उपापचय (मेटाबोलिज़्म), प्रतिकृति तथा होमियोस्टेसिस ये तीनों जीवन के लिए परमावश्यक हैं। मौलिक एकता के अतिरिक्त प्रकृति में विविध जीवन जीवाणु से लेकर मनुष्य तक और डायटम से लेकर ऊँचे-ऊँचे वृक्षों तक होता है।

जीव न केवल दूसरे जीवों में विविधता दिखाते हैं, बल्कि उनमें आपस में भी विविधता होती है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण है मनुष्य में जैव प्रक्रियाएँ।

विकास के प्रमाणों से पता चलता है कि रचना तथा कार्य एक दूसरे के पूरक हैं। निम्नलिखित उदाहरणों को देखिए:

- पक्षियों तथा कीटों के पूर्वज समान नहीं हैं, लेकिन दोनों में पंख होते हैं और वे उड़ते हैं।
- कीट तथा पौधे एक दूसरे से बिलकुल भिन्न होते हैं लेकिन उनकी क्यूटिकिल में एक अद्भुत समानता होती है जो कवच की तरह शरीर की रक्षा करती है।
- तिलचट्टे जैसे कीट में काटने तथा चबाने के लिए मुखांग होते हैं और मच्छर में भेदने तथा चूसने वाले मुखांग। ये दोनों जीव अपने विशिष्ट भोजन के आधार पर अनुकूलित हैं।

GEOLOGICAL CLOCK

IF 4,800 MILLION YEARS = 24 HOURS THEN:
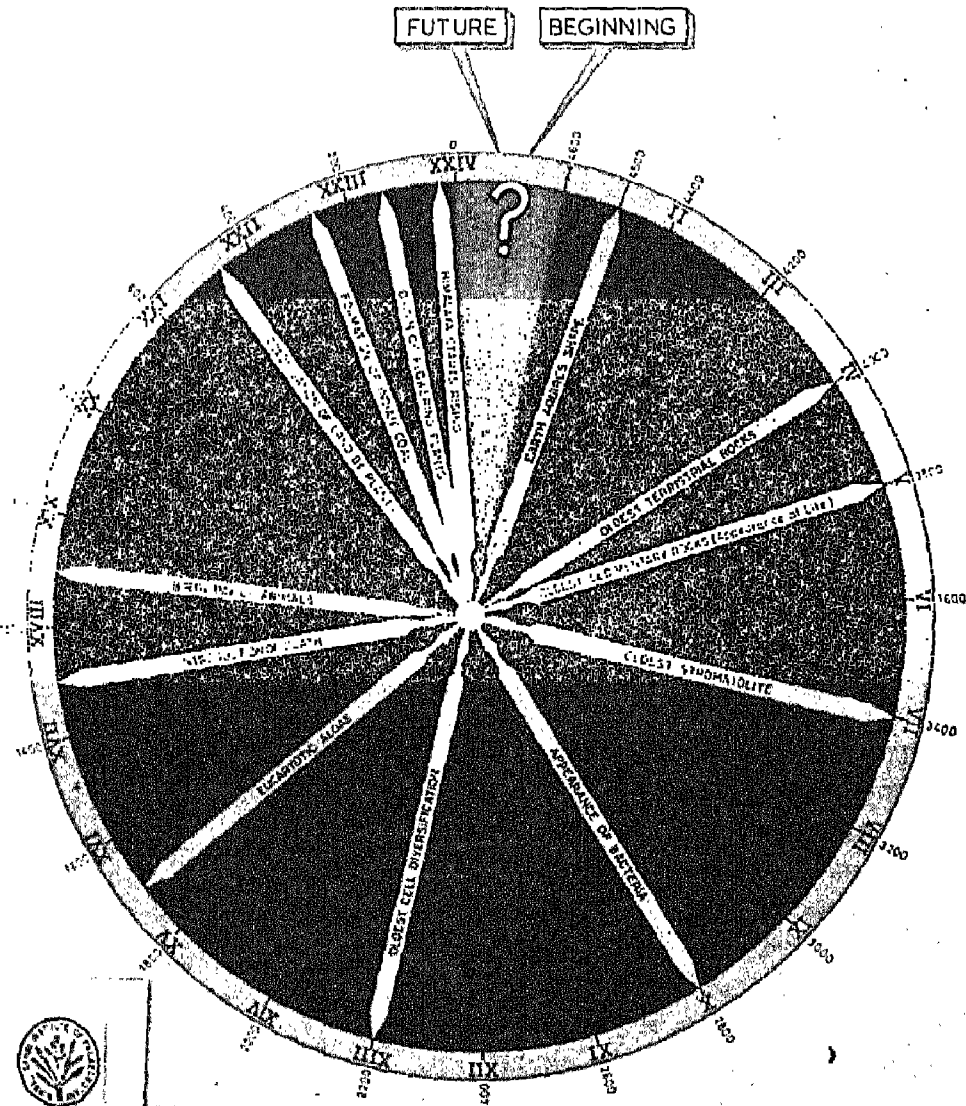
IF LAST 480 CRORE YEARS = 24 hours THEN

EARTH AQUIRES SHAPE AT	0.30 hours	INTRODUCTION OF DEATH AT	17.30 hours
OLDEST TERRESTRIAL ROCKS FORMED AT	04.00 hours	APPEARANCE OF ANIMALS AT	18.30 hours
OLDEST SEDIMENTARY ROCKS FORMED AT	05.00 hours	COLONISATION OF LAND BY PLANTS AT	21.40 hours
FIRST APPEARANCE OF LIFE AT	05.00 hours	FORMATION OF INDIAN COAL AT	22.45 hours
APPEARANCE OF BACTERIA AT	10.00 hours	FLOWERING PLANTS APPEARED AT	23.25 hours
OLDEST CELL DIVERSIFICATION AT	13.00 hours	RISE OF HIMALAYA AT	23.53 hours
FIRST EUKARYOTIC ALGAE AT	15.30 hours	MAN APPEARS AT	23.59.30 hours

माप की बहुत ही अधिक विविधता के उदाहरण

1. विश्व का सबसे बड़ा वृक्ष यूक्लिप्ट्स रिगनेन्स है। इसकी ऊँचाई 114 मीटर (375 फुट) है। कैलीफोर्निया का रेडवुड *(सिकुआ सर्नपरविरेन्स)* 111 मीटर (366 फुट) ऊँचा है।
2. जहाँ तक हमें ज्ञात है अब तक जो सबसे बड़ा जानवर हुआ है वह है नीली अथवा सल्फर-बाटम-ह्वेल। इसकी लम्बाई 30 मीटर तक है।
3. सुमात्रा में स्थित *एमोरफोफैलस* नामक पौधे का पुष्पंज 5.5 मीटर ऊँचा होता है।
4. *बुल्फिया एराइजा* पुष्पी पादपों में सबसे छोटा तथा सरल है। यह छोटे से बिन्दु अथवा दाने के समान होता है और स्थिर पानी में तैरता है।
5. *रेफ्लेसिया* विश्व का सबसे बड़ा फूल है। इसका व्यास 1 मीटर, पंखुड़ी 2.5 सें.मी. मोटी होती है। यह एक परजीवी है इसमें वास्तविक तना तथा पत्तियाँ नहीं होतीं।
6. *ऐसिटेबुलेरिया* एक अकेली कोशिका वाला शैवाल होता है। इसकी लम्बाई 6 से 10 सें.मी. तक हो सकती है।

चित्र 3.6 छोटों में विभिन्नताएँ। *ई. कोलाई* बैक्टीरिया के आकार की अन्य कोशिका की बनावट से तुलना।
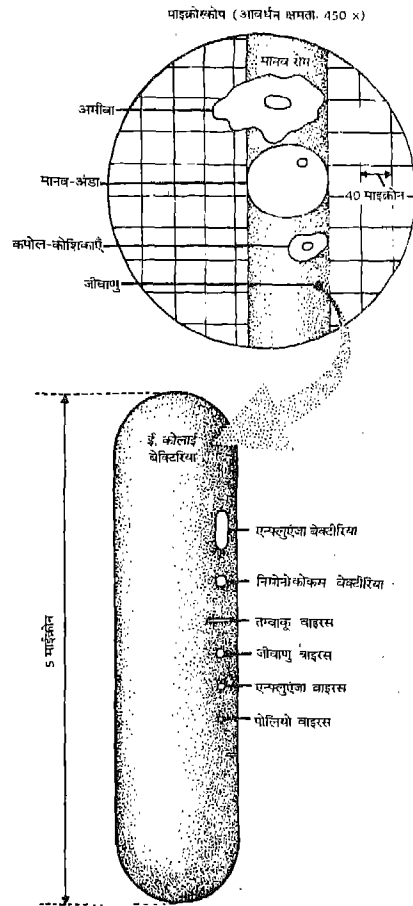
पूर्ण प्राणी परजीवी जैसे फीताकृमी में विकसित अंगतंत्र नहीं होते हैं जबकि उनके मुक्तजीवी पूर्वजों में विकसित अंगतंत्र होते थे।

अब आप अनुमान लगा सकते हैं कि विभिन्न जीव किस प्रकार समान कार्य करते हैं और किस प्रकार परस्पर सम्बन्धित जीव बड़ी विभिन्नताएँ दर्शाते हैं।

पृथ्वी की सजीव पपड़ी तथा उसका अनुरक्षण

पृथ्वी पर जीवन सभी स्थान पर नहीं होता। पृथ्वी की पपड़ी ही ऐसी है जहाँ पर जीवन होता है। पृथ्वी पर जीवन योग्य क्षेत्र बहुत ही पतली सतह पर होता है। यह क्षेत्र लगभग 22.5 कि.मी. अर्थात् सर्वोच्च पर्वत से लेकर समुद्र की सबसे अधिक गहराई तक होता है। पृथ्वी के ठोस भाग को 'स्थलमंडल' तथा पानी के भाग को 'जल मंडल' कहते हैं। ये दोनों वायुमंडल की हवा के साथ मिलकर जैव मंडल अर्थात् पृथ्वी पर रहने योग्य स्थान बनाते हैं (चित्र 3.8)। जैव मंडल में जीवन की सघनता बहुत ही विभिन्न है। जीवन का विस्तरण बहुत से कारकों पर निर्भर करता है। उष्णकटिबंधीय वर्षावन में जीवों की सघनता अधिक होती है। मरु तथा बर्फ से ढकी

सजीवों के जीवन तथा व्यवहारिक अनुक्रियाओं की विविधता के कुछ उदाहरण

1. सिकाड़ा — एक कीट जिसका जीवन काल 17 वर्ष होता है, लेकिन यह अधिक समय सोता ही रहता है। यह पृथ्वी में से निकलता है और पाँच सप्ताहों के लिए जागता है और फिर मर जाता है।
2. डाल्फिन मनुष्य की बोलने की तथा हँसने की नकल कर सकती है।
3. कुछ भारतीय चमगादड़ें मनुष्य के बाल की मोटाई (0.08 मि० मी०) के बराबर कीटों का पता लगा सकती हैं। ये अपने वजन से दुगने वजन के कीड़े प्रतिदिन खाती हैं।
4. कुछ मकड़ियाँ पानी के नीचे घंटी के आकार के घर बनाती हैं।
5. नर बया पत्तियों तथा शाखाओं, घास आदि से बहुत बड़ा घोंसला बना सकते हैं। मादा बया घोंसले को देखती है और उसी नर को चुनती है जो घोंसला बनाने में दक्ष हो। मादा को आकर्षित करने के लिए नर अपने घोंसलों को रंग बिरंगी पंखुडियों से सजाते हैं।

पर्वतों की चोटियों पर जीव बिखरे रहते हैं। जीवन की कुछ सम्भावना बहुत ही गरम जल स्रोतों एवं ज्वालामुखियों के नीचे सम्भव है।

तीनों प्रमुख क्षेत्रों के भौतिक तथा रासायनिक गुण क्रियाएँ करते हैं और जीवन को बहुत विधियों द्वारा प्रभावित करते हैं। पृथ्वी पर बेतरतीब परिवर्तन होते रहते हैं। ये परिवर्तन बहुत धीरे धीरे होते हैं लेकिन वे जीवन को प्रभावित करते हैं। परिवर्तन जैसे विघटन, एकत्रीकरण, पटलविरूपण के कारण वलयन, पृथ्वी का भार कम या अधिक होता है। इस प्रकार हम जानते हैं कि वर्तमान स्थल का बहुत सा भार कभी समुद्री पानी के नीचे था और जो आज समुद्र में डूबा हुआ है वह भविष्य में स्थली के रूप में बाहर निकल आए। इन भौगोलिक परिवर्तनों का संबंध सजीवों के आकार में परिवर्तन से है। यह जीवाश्म के अध्ययन से सिद्ध हो गया है। ये जीवाश्म पृथ्वी की विभिन्न परतों, जो विभिन्न भूवैज्ञानिक काल से संबंधित हैं, से प्राप्त किए गए थे।

जीव अलग से अस्तित्व में नहीं होता। आपने अध्याय एक में पढ़ा है कि जीवविज्ञान की वह शाखा जो सजीवों को उसके वातावरण से, जैव तथा अजैव से संबंध बताए, उसे पारिस्थितिकी कहते हैं। पारिस्थितिकी का मुख्य ध्येय पारितंत्र का अध्ययन करना है।

मानव शरीर की रचना तथा कार्य के विषय में कुछ रोचक तथ्य

- सबसे तेज तंत्रिका संवेद की गति 532 कि० प्रति घन्टा है।
- वयस्क मनुष्य का फेफड़े का भीतरी क्षेत्रफल 93 वर्गमीटर है जो मनुष्य के बाहरी शरीर का 40 गुना होता है।
- लंगूर की अपेक्षा मनुष्य के शरीर पर अधिक बाल होते हैं। लेकिन मनुष्य के बाल नरम तथा छोटे होते हैं।
- हमारे शरीर में लगभग 96000 किमी रुधिर वाहिकाएं हैं।
- हम प्रतिदिन 30 मिनट अंधे रहते हैं। यह समय आंख झपकने में जाता है।
- हड्डियां कंक्रीट जैसी मजबूत तथा ग्रेनाइट जैसी सख्त होती हैं लेकिन ये दोनों से हल्की होती हैं।
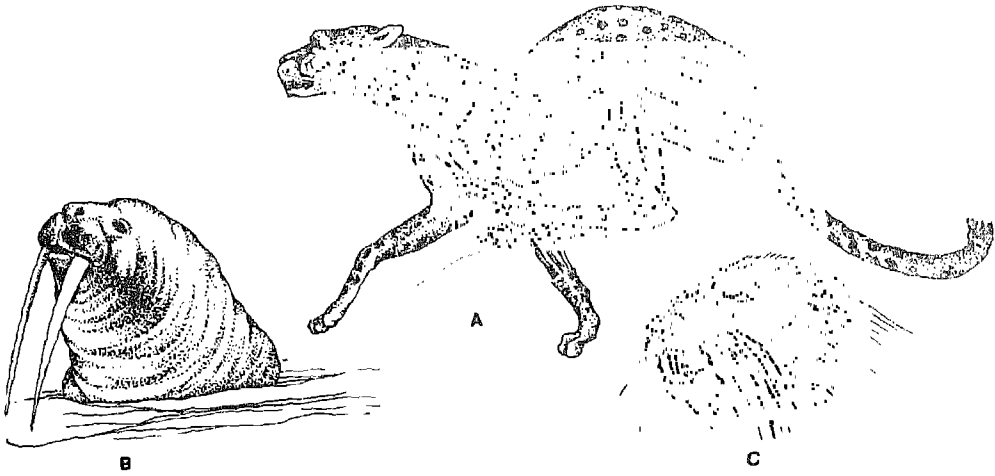
चित्र 3.7 संरचना तथा कार्य में परिपूरकता। (A) चीता अपने बलिष्ठ पिछले पैरों से अपने शरीर को आगे ढकेलता है। यह सबसे तेज दौड़ने वाला स्थलीय प्राणी है। (B) वालरस अपने लंबे चमकीले बाहर निकले दाँतों से खोदता है। (C) रोडेन्ट के कृतनकारी कृतन दाँत होते हैं।
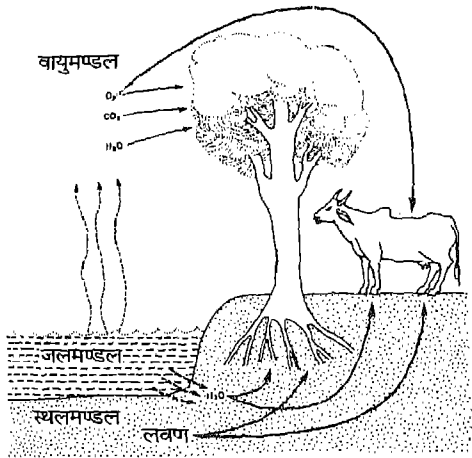
चित्र 3.8 सजीव सतह: वायुमण्डल, जलमण्डल, स्थलमण्डल
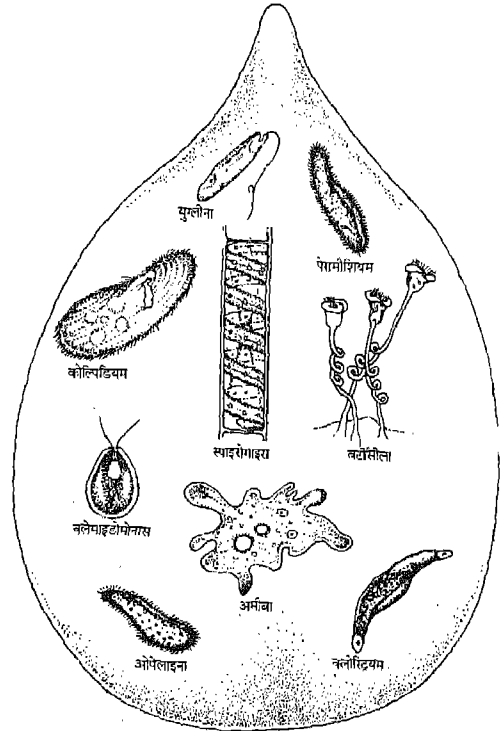
चित्र 3.9 तालाब के जल की बूँद में कुछ जीव।

पारितंत्र का माप पानी की एक बूंद से लेकर तालाब तथा समुद्र तक, घास के एक छोटे क्षेत्र से लेकर एक वन तक हो सकता है। कोई स्थान चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो तब तक एक पारितंत्र है जब तक वहाँ पर जीव स्थित हैं (चित्र 3.9)।

वर्तमान का सर्वोच्च पर्वत कभी समुद्र के नीचे था

पृथ्वी पर सबसे ऊँचा माउंट एवरेस्ट लाइमस्टोन से बना हुआ है। यह 240 मिलियन वर्ष पूर्व टेथीस समुद्र का भाग था। यह भारतीय प्लेट तथा मध्य एशिया प्लेट की टक्कर के कारण ऊपर उठ गया था।

पारितंत्र का अनुरक्षण विशिष्ट प्रकार की पारस्परिक निर्भरता पर निर्भर करता है। ये हैं पदार्थों का चक्र, खाद्य, शृंखला, जाल, तथा ऊर्जा प्रवाह। पदार्थों के चक्र में प्रकृति में स्थित तत्वों तथा यौगिकों जैसे पानी, आक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, कार्बन डाइआक्साइड का उपयोग होता है और वे पुन; प्रकृति में वापिस आ जाते हैं। प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन दो ऐसी जैव प्रक्रियाएँ हैं जो प्रकृति में कार्बन डाइआक्साइड तथा आक्सीजन का संतुलन बनाए रखती हैं। जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को अपघटित करके अन्य तत्वों को प्रकृति में वापिस कर देते हैं। पदार्थों का चक्र वातावरणीय स्थैतिक स्थिति का एक अच्छा उदाहरण है।

खाद्य शृंखला जनसंख्या पर नियंत्रण रखती है। इसमें 'भक्षक तथा भक्ष्य' की तरह की पारस्परिक निर्भरता होती है। जीव एक दूसरे से भोजन स्तर द्वारा जुड़े रहते हैं। बहुत सी भोजन शृंखलाएँ अन्य भोजन शृंखलाओं से संबंध रखती हैं। इस प्रकार 'भोजन जाल' बन जाता है। सूर्य अन्ततः ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। ऊर्जा-प्रवाह एक दिशा में होता है। ऊर्जा स्वपोषितों से भोजन द्वारा परपोषितों में आती है।

सारा वातावरण हर समय होमियोस्टेटिक प्रणाली सहित एक सजीव की तरह है। हम जानते हैं कि कोशिका के कोशिकांग, ऊतक की कोशिकाएँ, अंगों के ऊतक तथा जीवों के अंगतंत्र होमियोस्टेसिस के अनुरक्षण के लिए परस्पर निर्भर हैं और समन्वय करते हैं। इसी प्रकार सारा वातावरण जिसमें जैव तथा अजैव कारक होते हैं, जटिल प्रणाली में एक दूसरे से जुड़े रहते हैं जिससे कि प्रकृति में संतुलन बना रह सके। जिस प्रकार नया जीवन पैदा नहीं किया जा सकता (अभी तक ऐसा सम्भव नहीं हो सका है हालाँकि मनुष्य उन सभी तत्वों को जानता है जिनसे जीवन बनता है), उसी प्रकार वातावरण के नष्ट होने पर उसे उसके वास्तविक रूप में उत्पन्न नहीं किया जा सकता।

नाइट्रोजन जो कभी डायनोसॉर का भाग थी वह किसी प्रोफेसर के दिमाग का भाग बन गई होगी, और भविष्य में हो सकता है कि यह पत्तागोभी में आ गए जो आप रात्रि भोज में खाएँगे।

हमारा स्थान तथा हमारी भूमिका

मनुष्य का वैज्ञानिक नाम *होमोसेपियन्स* (*होमो* = मनुष्य; *सेपियन्स* = बुद्धिमान) है। बुद्धिजीवी आजकल *होमोसेपियन्स* का उपयोग उचित मानते हैं। मनुष्य वास्तव में एक प्राणी है, लेकिन इसमें बहुत से अद्‌भुत गुण हैं। जीव विज्ञान स्तर पर, मनुष्य शक्ति, योग्यता और ज्ञान में अद्‌भुत नहीं है। मनुष्य की श्रवण, सूँघने तथा दृश्य की शक्ति बहुत से प्राणियों की अपेक्षा बहुत ही कम है। फिर भी मनुष्य विशिष्ट है क्योंकि उसका विकसित मस्तिष्क और निपुण हाथ हैं। मनुष्य अद्‌भुत है क्योंकि वह औजारों को बना सकता है। हम वातावरण पर निर्भर नहीं रहते और हम वातावरण को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार बदल सकते हैं। लेकिन ब्रह्माण्ड में मनुष्य का क्या स्थान है? इसके ज्ञान से हमें स्वयं को समझने में अधिक सहायता मिलेगी।

ब्रह्माण्ड में पृथ्वी जिस पर हम रहते हैं, एक छोटा सा ही भाग है। आंकड़ों के आधार पर हम अपना स्थान नहीं बता सकते हैं। लेकिन फिर भी यह छोटा सा भाग—पृथ्वी हमारे लिए बहुत सार्थक तथा महत्वपूर्ण है। क्योंकि हम इस पर रहते हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम इसकी परिरक्षा करें।

इस ग्रह पर मनुष्य का प्रभाव आधुनिक प्रक्रम है। यह तब आरम्भ हुआ होगा जब मनुष्य, शिकारी तथा एकत्र करनेवाले से कृषक तथा झुंडदार बना। यह खोज कि बीज से नया पौधा प्राप्त होता है, खेती

का आधार बना। नदियों के किनारे बसी आबादी के लिए यह स्थान खेती के लिए उत्तम था जिससे संस्कृति का निर्माण हुआ।

ब्रह्माण्ड में हमारा स्थान

ब्रह्माण्ड की विस्तृता मस्तिष्क को चकराने वाली है :

1. दिखने वाले ब्रह्माण्ड में हमारी आकाशगंगा की तरह लगभग 100,000 मिलियन आकाशगंगाएं हैं। प्रत्येक आकाशगंगा में औसतन 10,000 मिलियन तारे हैं। हमारी आकाशगंगा मंदाकिनी है।
2. हमारा सौर परिवार 792,000 कि.मी. प्रति घन्टे की गति से मंदाकिनी आकाशगंगा के मध्य के चारों ओर एक चक्कर 237,000,000 वर्ष में पूरा करता है।
3. सबसे समीप का तारा (आल्फा सेंटोरी) 4.3 प्रकाश वर्ष (1 प्रकाशवर्ष = 792,458 कि.मी. प्रति सेकिंड) दूर है और ऐसे भी तारे हैं जिन का प्रकाश वर्ष 800,000,000 दूर है।
4. हमारा सूर्य 148.7 मिलियन कि.मी. दूर है। इसका अर्धव्यास 691.5 हजार मि.मी. है। यदि यह खोखला हो तो इसमें एक मिलियन से अधिक पृथ्वी आ जाती।
5. सूर्य प्रति सेकिंड 4,000,000 टन हाइड्रोजन का उपयोग करता है, जिसे वह हीलियम में बदल देता है, जो सूर्य को दीप्तिमान कर देते हैं।
6. यह विकिरण ऊर्जा ही है जो पृथ्वी पर जीवन का अनुरक्षण करती है। सूर्य अपनी आधी अवधि पूरी कर चुका है और सम्भवतः 10,000 मिलियन वर्षों में इसकी सारी ऊर्जा समाप्त हो जाएगी।
7. यह एक सामान्य सूर्य है। यह न तो सबसे बड़ा है और न ही सबसे छोटा। यह न तो सबसे अधिक चमकदार है और न ही सबसे अधिक धुँधला।

हम इस सांस्कृतिक विकास को अधिक विकसित मनुष्य के मस्तिष्क तक सम्भवतः रेखांकित कर सकते हैं। मनुष्य के मस्तिष्क में लगभग 10,000 मिलियन तंत्रिका कोशिकाएँ हैं। हम आज मनुष्य की उपलब्धियों जैसे अन्तरिक्ष यात्रा, इलैक्ट्रानिक, परमाणु ऊर्जा, लेसर, आनुवंशिकी इंजीनियरिंग, नाभिकीय संगलन, तथा विखंडन आदि पर गर्व कर सकते हैं। केवल हम सभी प्रकार के वातावरणों में परिवर्तन लाए हैं और ला सकते हैं। समुद्र से स्थल बनाकर उसका उपयोग किया है। हमने ऐसे हवाई जहाज़ बनाए हैं जो पराध्वनि गति से उड़ सकते हैं, और ऐसी मशीनें भी बनाई हैं जो पानी में तैर सकती हैं। हमने उपयोगी पौधों तथा जन्तुओं को पालतू बना लिया है और उनकी उत्पादकता को बढ़ाया है। कृषि तथा बागवानी का सतत यांत्रीकरण होने लगा है।

अपने वातावरण में संतुष्ट न होकर मनुष्य ने एक नया वातावरण बना लिया है। क्या अंतरिक्ष पर जीवन है? इसी पर लगातार आविष्कार चल रहे हैं। हम यह जानने के लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं कि क्या मंगल अथवा शुक्र पर जीवन है। कुत्ता, बन्दर तथा लंगूर ऐसे सर्वप्रथम जीव हैं जिन्होंने मनुष्य द्वारा निर्मित अन्तरिक्ष यान में बैठकर पृथ्वी का चक्कर लगाया है। जन्तु अन्तरिक्ष में खोज नहीं कर सकते। इसलिए मनुष्य का अंतरिक्ष मे जाना आवश्यक था। क्योंकि वह अवलोकन, मापन, रिकार्ड तथा विभिन्न भौतिक प्रणालियों का विश्लेषण स्वनिर्मित औजारों द्वारा कर सकता है। वह अपनी शरीर क्रियात्मक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों को भी शून्य गुरुत्वाकर्षण पर परीक्षण कर सकता है।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य की रचना तथा कार्यप्रणाली अंतरिक्ष से नहीं आई है और अंतरिक्ष में जीवन व्यतीत करने लायक नहीं है।

विज्ञान के आविष्कार ने कुछ लोगों का जीवन आरामदायक बना दिया है लेकिन प्रत्येक आविष्कार के साथ कुछ नई समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं। आइए इन समस्यायुक्त उपलब्धियों को देखें :

(क) टैक्नोलोजी से अधिकाधिक कारखाने बने, तथा अच्छा एवं आरामदायक जीवन बना है। लेकिन इससे प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग, प्रदूषण तथा नष्ट करने वाले बहुत

से हथियारों का उत्पादन हुआ है।

(ख) फसलों के संरक्षण से पैदावार बढ़ी है। लेकिन बिना सोचे समझे उर्वरकों तथा पीड़क नाशियों के उपयोग से भूमि, पानी तथा हवा की गुणवत्ता में गिरावट आई है। इससे वनस्पति तथा प्राणियों पर भी प्रभाव पड़ा है। नई-नई पीड़क प्रतिरोधी स्पीशीज बन गई हैं।

(ग) ऐम्नियोसेंटेसिस एक ऐसी विधि है जिसमें माता के शरीर से भ्रूण कोशिकाओं को बाहर निकाल कर परीक्षण किया जा सकता है। इस परीक्षण में क्रोमोसोम में दोष तथा लिंग का पता किया जा सकता है। लेकिन इस विधि का भी गलत उपयोग किया गया। इसमें मादा भ्रूण को नष्ट कर देते हैं।

(घ) कृषि तथा औषधि के क्षेत्र में आनुवंशिकी इन्जीनियरिंग की बहुत सार्थकता है। उदारहण के लिए मनुष्य के इन्सूलिन तथा वृद्धि हार्मोन के जीव जीवाणु के उपयोग से 'क्लोन' करके बनाना सम्भव हो गया है। इससे कृषि के क्षेत्र में भविष्य में काफी आशाएँ की जा सकती हैं। लेकिन जीव में आनुवंशिक पदार्थों का स्थानान्तरण करते समय बहुत दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम भी निकल सकते हैं। इन आविष्कारों का अनुचित उपयोग जैव लड़ाई में किया जा सकता है।

(ङ) सबसे बड़ी समस्या अधिक जनसंख्या की है। आबादी के दो गुना होने के समय में कमी आई है (चित्र 3.10)। एक ओर तो विज्ञान की सहायता से संचारी रोगों को समूल नष्ट किया गया, शैशव मृत्यु दर कम हुई, स्वस्थ्य एवं लम्बी आयु प्रदान की है। लेकिन दूसरी

आपको क्या होगा (और अन्तरिक्ष यात्रियों को भी) यदि आप असुरक्षित, अन्तरिक्ष में प्रवेश करना प्रारंभ करें?

1. दाब में कमी होने से 7.2 कि.मी. ऊँचाई पर रक्त में अवशोषित की हुई नाइट्रोजन बुलबलों के रूप मे निकल जाती है।
2. 16 कि.मी. पर फेफड़ों में O_2 की बिल्कुल कमी हो जाती है।
3. अत्यधिक त्वरण का प्रभाव: अंगों को झटका लगता है, परिसंचरण तथा पेशीय गति असंतुलित हो जाती है।
4. बहरा करने वाला शोर, मतली एवं घुटन उत्पन्न करता है।
5. सूर्य की चकाचौंध अन्तरिक्ष में अन्धा करने वाली होती है।
6. बहुत ऊँचे तापक्रम और विकिरण के कारण कोशिकीय नियंत्रण को खतरा उत्पन्न हो जाता है।
7. भारहीनता और खतरों के कारण मनुष्य में सामाजिक, सांस्कृतिक और शारीरिक उद्विग्नता उत्पन्न होती है तथा संबंध विच्छेद के कारण से किसी भी प्रकार की विषमता उत्पन्न हो सकती है।
8. क्या पृथ्वी की जैविक घड़ी से अंतरिक्ष की जैविक घड़ी में परिवर्तन तथा काफी समय तक अन्तरिक्ष में रहने के पश्चात् पृथ्वी के समय को फिर से प्राप्त करने में कोई समस्या आयेगी?

चित्र 3.10 पृथ्वी पर जनसंख्या विस्फोट।

चित्र 3.11 मानव सब जीवों पर प्रभावी हो गया है।

ओर बढ़ी हुई आबादी के परिणामों से लोग अनभिज्ञ हैं। कुछ देशों ने अपनी आबादी स्थिर कर ली है लेकिन विकासशील देशों में आबादी की समस्या अभी भी गम्भीर बनी हुई है। सभी समस्याएँ चाहे वह भोजन, कपड़े, आश्रय, शिक्षा, अथवा रोजगारी की कमी क्यों न हों,

मूल कारण बढ़ती हुई आबादी है।

(च) प्राकृतिक विपदाएँ जैसे भूकम्प बाढ़ तथा तूफान के विषय में वैज्ञानिक भविष्यवाणियाँ की जाती हैं लेकिन फिर भी जान माल की हानि होती है। इसका कारण है कि ये विपदाएँ प्राकृतिक की अपेक्षा कृत्रिम अधिक है। भूमि के एक विस्तृत क्षेत्र से वनों तथा तूफानों के प्राकृतिक कारकों को हटा दिया गया है। इसका कारण यह हुआ है कि मनुष्य पर ऐसी विपदाएँ आने लगी हैं।

सोचने तथा विचार करने का समय

हमें कृषि, औषधि, बायोटैक्नोलोजी, ऊर्जा तथा इन्डस्ट्रीज के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है, इस पर गर्व है। लेकिन हमारे सामने प्रदूषण, अधिक आबादी, प्राकृत संसाधनों की कमी, तथा वन्य जीवन का लुप्त होना आदि समस्याएँ हैं। इसमें कोई शंका नहीं कि इन सभी समस्याओं का कारण हमारा अपना लोभ, अनभिज्ञता, तुच्छ लाभ आदि हैं। हम अपनी प्रगति को भी नहीं रोक सकते, इसलिए हमें सोचना है कि हमें अपना भविष्य कैसा बनाना है (चित्र 3.11)।

हमें अनुभव करना चाहिए कि हमें अपने तथा अन्य जीवों के अस्तित्व के लिए वातावरण की आवश्यकता है। हमें समझना चाहिए कि प्रकृति जीवन को सहारा देने वाले तंत्र का स्रोत है। हमें प्रकृति के पारिस्थितिक नियमों का पता होना चाहिए। हमें प्राकृतिक संतुलन बनाए रखना चाहिए वरना इस प्रक्रिया में हम सब तथा अन्य विविध जीवन नष्ट हो जाएँगे।

सारांश

जीवन की उत्पत्ति की कहानी अनुमानों पर आधारित है। यह ज्ञात नहीं है कि जीवन इसी पृथ्वी पर उत्पन्न हुआ अथवा कहीं और उत्पन्न हुआ और वहाँ से पृथ्वी पर आया है। पृथ्वी का इतिहास 4.5 अरब वर्ष पुराना है। पृथ्वी पर अपचयन का वातावरण था तथा समुद्र एक यूष की तरह थे जिनमें अनेकों लवण घुले हुए थे। आन्तरिक रासायनिक क्रियाओं के कारण स्वतः प्रतिरूपित होने वाले डी.एन.ए. सहित विभिन्न प्रकार के जटिल अणुओं का निर्माण हुआ। ये अणु अन्य अणुओं के समूहों के साथ एक बार एक झिल्ली जैसी रचना में बन्द हो गये, जिनसे प्रथम कोशिका जैसी संरचना बनी। प्रथम जीव सम्भवतः रसायन पोषी थे जो ऊर्जा प्राप्त करने के लिये यूष के कार्बनिक अणुओं पर निर्भर थे। वे अनाक्सी जीव थे। इनके बाद अनाक्सी रसायन पोषी उत्पन्न हुए, जिन्होनें खाद्य अणुओं के निर्माण के लिये रासायनिक ऊर्जा का उपयोग किया। हरित अणु के निर्माण में स्वयं प्रकाश संश्लेषी अनाक्सीकारकों की उत्पत्ति हुई। जल को कच्चे माल के रूप में उपयोग नहीं करने के कारण उन्होंने आक्सीजन उत्पन्न नहीं की। करीब 3.30 से 5.50 अरब वर्ष पूर्व, आक्सीजन निकालने वाले स्वपोषी के जीवाश्म का अभी पता लगा है। प्रकाश संश्लेषण में आक्सीजन के निकलने के कारण, श्वसन एवं प्रकाश संश्लेषण प्रकृति में एक संतुलन स्थापित करने में सहायक सिद्ध हुए हैं।

जीवन का प्रारंभ जल से ही हुआ है। जल के कुछ विशिष्ट गुण इस प्रकार हैं: यह तापक्रम के उपयुक्त सीमा में द्रव अवस्था में पाया जाता है, यह एक अच्छा विलायक है, तापीय खतरों से जीवन की सुरक्षा करता है, रासायनिक प्रक्रियाओं को त्वरित करता है तथा यह एक अच्छा विच्छेदक और अणुओं को आबन्ध करने वाला पदार्थ है।

जीवन की उत्पत्ति के पश्चात धीरे-धीरे, लगातार तथा अपरिवर्तनीय प्रक्रियाओं के परिवर्तन को विकास कहते हैं। जीव का विकास, जीवन की आधारभूत समानता को नष्ट किये बिना, सरल रूप से विविध तथा जटिल रूप में परिवर्तित हुआ है। कोशिकीय संरचना, उपापचयी, प्रतिकृति तथा होम्योस्टेसिस जीवन के मूलतः लक्षण हैं। विकास के प्रमाण भी यह दर्शाते हैं कि कोशिकीय संरचना एवं कार्य एक दूसरे के परिपूरक हैं।

पृथ्वी का आवासीय भाग अनुमानतः 22.4 कि०मी० पतली परत का बना हुआ है, जो पृथ्वी की ऊपरी सतह का निर्माण करता है। स्थलमंडल, जलमंडल तथा वायुमंडल मिलकर जैव मंडल का निर्माण करते हैं। जैव मंडल पृथ्वी की एक ऐसी सतह है जिसमें जीव पाये जाते हैं। जीव जैव मंडल में असमान रूप

में वितरित रहते हैं। जीवाश्मीय अध्ययन यह प्रमाणित करते हैं कि जीवों में परिवर्तन पृथ्वी के कन्दूर में अनियमित परिवर्तन के अनुरूप हैं।

पारिस्थितिकी का एक मुख्य ध्येय पारितंत्र का अध्ययन करना है। किसी प्रकार छोटे एवं बड़े पारितंत्र स्वतंत्र प्रणालियों जैसे पदार्थ चक्र, खाद्य शृंखला, खाद्य जाल और ऊर्जा प्रवाह द्वारा नियमित रहते हैं। इन प्रणालियों में पारितंत्र के जैविक एवं अजैविक अवयव आते हैं, जो होम्योस्टेसिस को नियमित करते हैं।

मानव जाति अन्य प्राणियों से कई प्रकार से भिन्न तथा अद्वितीय है। उच्च विकसित मस्तिष्क एवं कुशल हाथों के पाये जाने के कारण मनुष्य अन्य प्राणियों से सर्वोपरि हो गया है। इस विशिष्टता के बावजूद भी ब्रह्माण्ड में हमारी स्थिति नगण्य है। क्योंकि पृथ्वी स्वयं विशाल ब्रह्माण्ड में एक मात्र बिन्दु जैसी है। फिर भी, पृथ्वी पर हमारा निवास है अतः हमारे लिये महत्वपूर्ण है।

पृथ्वी पर मानव का प्रभुत्व उसकी सांस्कृतिक विरासत का द्योतक है। विज्ञान और तकनीकी के तीव्र प्रगति के कारण अन्तरिक्ष में भी खोज की जा रही है। फिर भी, प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति के कारण विभिन्न समस्याएँ सामने आई हैं। औद्योगिक आधुनिकीकरण के कारण प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास हुआ है, पारिस्थितिक विनाश तथा प्रदूषण की समस्याएँ खड़ी हुई हैं। कीटनाशियों से फसल उत्पादन में वृद्धि हुई है। परन्तु, अब कीटनाशियों की प्रतिरोधी जातियाँ उत्पन्न हो गई हैं। आनुवंशिक अभियांत्रिकी तथा आयुर्विज्ञान की नई तकनीकों ने इन बीमारियों तथा अनियमितताओं से मुकाबला करने के लिये हमें आशाएँ जगाई हैं, लेकिन इसके दुष्परिणाम भी हो सकते हैं। जनसंख्या की विस्फोटक वृद्धि अन्य कई समस्याओं का मूल कारण है।

हमें प्रगति के साथ-साथ उत्पन्न समस्याओं को नहीं भूलना चाहिए। विकास और प्रगति पारिस्थितिक संतुलन को विनाश करके अर्जित नहीं की जानी चाहिए। प्रकृति को जीवन का आधार मानकर प्रगति की जानी चाहिए।

प्रश्नावली

1. गलत कथनों को चिन्हित करिए:
   पृथ्वी की उत्पत्ति तथा विकास का अध्ययन करना उपयोगी है क्योंकि—
   (क) हम सीखते हैं कि जीवन कहीं और नहीं मिलता।
   (ख) हम जीवों की एकता व अनेकताओं के विषय में सीखते हैं।
   (ग) हम सीखते हैं कि प्रकृति को संरक्षित करने का दायित्व मानव जाति का है।
   (घ) मानव जाति सबसे अधिक विकसित है अतः हमें कोई हानि नहीं हो सकती।
2. ठीक कथन को चुनिए:
   वैज्ञानिक अन्तरिक्ष जैविकी का अध्ययन इसलिए कर रहे हैं कि—
   (क) पृथ्वी पर जनसंख्या की सघनता अधिक हो गई है।
   (ख) लोग अन्तरिक्ष में रहना चाहते हैं।
   (ग) अज्ञात को खोजना मानव स्वभाव है।
   (घ) पृथ्वी की सुरक्षा व्यवस्था उत्तम हो सकती है।
3. रिक्त स्थानों में उचित शब्द भरिए:
   (क) रासायनिक विकास के समय, सबसे छोटे अणु जिनका .... थी .... और .... थे।
   (ख) रासायनिक विकास के समय .... प्रकार के अणु की उत्पत्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी।
   (ग) प्रकृति में प्राथमिक जीव .... था।
   (घ) .... के अणु के विकास द्वारा स्वपोषितों के विकास को दिशा मिली।
   (ङ) .... और .... दोनों मिलकर जीव मण्डल बनाते हैं।
4. गलत कथनों को सही करिए :
   (क) मनुष्य पूर्णतयः पृथकता से रह सकता है।
   (ख) पारितंत्र के जैविक और अजैविक अवयव पारस्परिक निर्भर हैं।

(ग) पारितंत्र किसी भी पर्यावरण को ध्यान में रखे बिना सजीवों के संदर्भ में कहा जाता है।

(घ) हमें खनिज स्रोतों का उपयोग बड़ी सावधानी से करना चाहिए, क्योंकि जीव की मृत्यु के साथ ही वे समाप्त हो जाते हैं।

5. अन्तरिक्ष में अन्य कहीं जीवन की उपस्थिति की सम्भावना के संबंध में क्या तर्क हैं?
6. जल की उन विशेषताओं की सूची बनाइये जिनके कारण जल में जीवन की उत्पत्ति सम्भव हुई।
7. पदार्थ चक्र तथा ऊर्जा प्रवाह के लिये प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन की परिघटना किस प्रकार महत्वपूर्ण है?
8. उदाहरण देकर प्रदर्शित कीजिये कि विज्ञान की प्रगति से कुछ समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं और वैज्ञानिक ज्ञान का दुरुपयोग हो सकता है।
9. हम किस प्रकार आश्वस्त हों कि जीवन की गुणता के सुधार के प्रभावों से हमारे प्राकृतिक संसाधन एवं पारितंत्र नष्ट नहीं हों।

पठनीय पुस्तकें

1. वेकेट, बी. एस. 1985 *विगनिंग साइंस-बायोलोजी।* आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड
2. बर्नस्टीन, आर एंड एस बर्नस्टीन, 1982, *बायोलोजीः दि स्टडी आफ लाइफ।* हारकोर्ट-ब्रेस जोवानोबिच, न्यर्योर्क
3. डिकर्सन, आर. ई. 1978, कैमीकल इवोल्यून एंड दि आरिजन आफ लाइफ। साइंस अमेरिकन, 239, 70-86
4. ग्रीन, एन. पी. ओ. जी. टब्लयू स्टाउड, डी. जे. टेलर एंड आर. सोपर (एडिशन) 1986, बायोलोजीकल साइंस। एंड 2, कैम्बरीज यूनीवर्सिटी प्रेस एंड न्यूनेस बुक्स, कैम्बरीज
5. किलगौर, ओ. एफ,जी. 1982 *मास्टरिंग बायोलोजी।* दि मैकमिलन प्रेस लि. लन्दन एंड बासिंगस्टाक
6. रोबर्टस, एम. बी. बी., 1986 बायोलोजीः ए. फन्कशनल एप्रोच। इंगलिश लैंग्वेज बुक सोसाइटी/नेल्सन, बाल्टन-ऑन हेम्स।
7. स्मिथ, जे. एम. 1986, *प्रोब्लम्स आफ बायोलोजी।* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड।
8. विडाल, जी. 1984, दि ओलडस्ट यूकैरिऑटिक सेल *साइंस अमेरिकन,* 250, 48-57

इकाई 2

जीवन की इकाई

जीवों के आकार तथा माप में बहुत विविधताएं होती हैं। लेकिन फिर भी उनकी मूल रचना तथा कार्य में एकरूपता होती है। सभी जीव एक या एक से अधिक कोशिकाओं से बने होते हैं। जीव की सबसे अधिक अद्भुतता उसके आण्विक, उपकोशिकीय तथा कोशिकीय संगठन स्तर पर देखी जा सकती है। प्रत्येक कोशिका का पदार्थ एक पतली झिल्ली से ढका रहता है जिसे प्लैज्मा झिल्ली कहते हैं। यूकेरिऑटिक कोशिका की झिल्ली में और भी बहुत से कोष्ठक जैसे माइटोकान्ड्रिया, क्लोरोप्लास्ट तथा लाइसोसोम होते हैं। प्रत्येक उपकोशिकीय कोष्ठक को अंगक कहते हैं। और वे विशिष्ट कार्य करते हैं। विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं तथा अंगकों जैसे केन्द्रकों में एक समानता होती है। सभी जीवों की झिल्ली द्वारा पदार्थों का आदान प्रदान प्रसारण, विसरण तथा ऊर्जा पर निर्भर सक्रिय संवहन द्वारा होता है।

जैसा कि आप पहली इकाई में पढ़ चुके हैं कि सभी जैवीय संरचनाएं विशेष प्रकार के अणुओं जैसे शक्कर, एमीनोएसिड, पानी, तथा खनिज लवण से बनती हैं। इन अणुओं के बहुलकीकरण द्वारा कार्बोहाइड्रेट,प्रोटीन, लिपिड तथा न्यूक्लिक एसिड बनते हैं।जैवीय झिल्ली में दो तहें लिपिड की होती हैं जिसके बीच में प्रोटीन होती है। जिस अणु में आनुवंशिक सूचना होती है उसे न्यूक्लिक एसिड कहते हैं।जीव के रचनात्मक अवयवों में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन तथा खनिज लवण होते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कार्बोहाइड्रेट तथा लिपिड ऊर्जा का स्रोत भी हैं।

कुछ प्रोटीन जिन्हें एंज़ाइम कहते हैं, उत्प्रेरक का कार्य भी करते हैं। सभी जीवों में बहुत सी रासायनिक प्रक्रियाएं एंज़ाइम द्वारा तीव्र हो जाती हैं। एंज़ाइम विशिष्ट होते हैं और वे अनुकूल परिस्थितियों में जीव के बाहर भी कार्य करते हैं।

ऑक्सी अथवा अनाक्सीश्वसन प्रक्रिया द्वारा सभी कोशिकाएं भोजन से ऊर्जा छोड़ती हैं। इस प्रक्रिया में छोड़ी गई ऊर्जा प्रायः संचित हो जाती है और उसका उपयोग एडिनोसिन ट्राइफॉस्फेट (ए. टी. पी.) के रूप में होता है।

नई-नई कोशिकाएं पूर्व कोशिकाओं के विभाजन से बनती हैं। कोशिका विभाजन की विधि कुछ एक कोशिकीय तथा सभी बहुकोशिकीय जीवों में समान होती है।

अध्याय 4
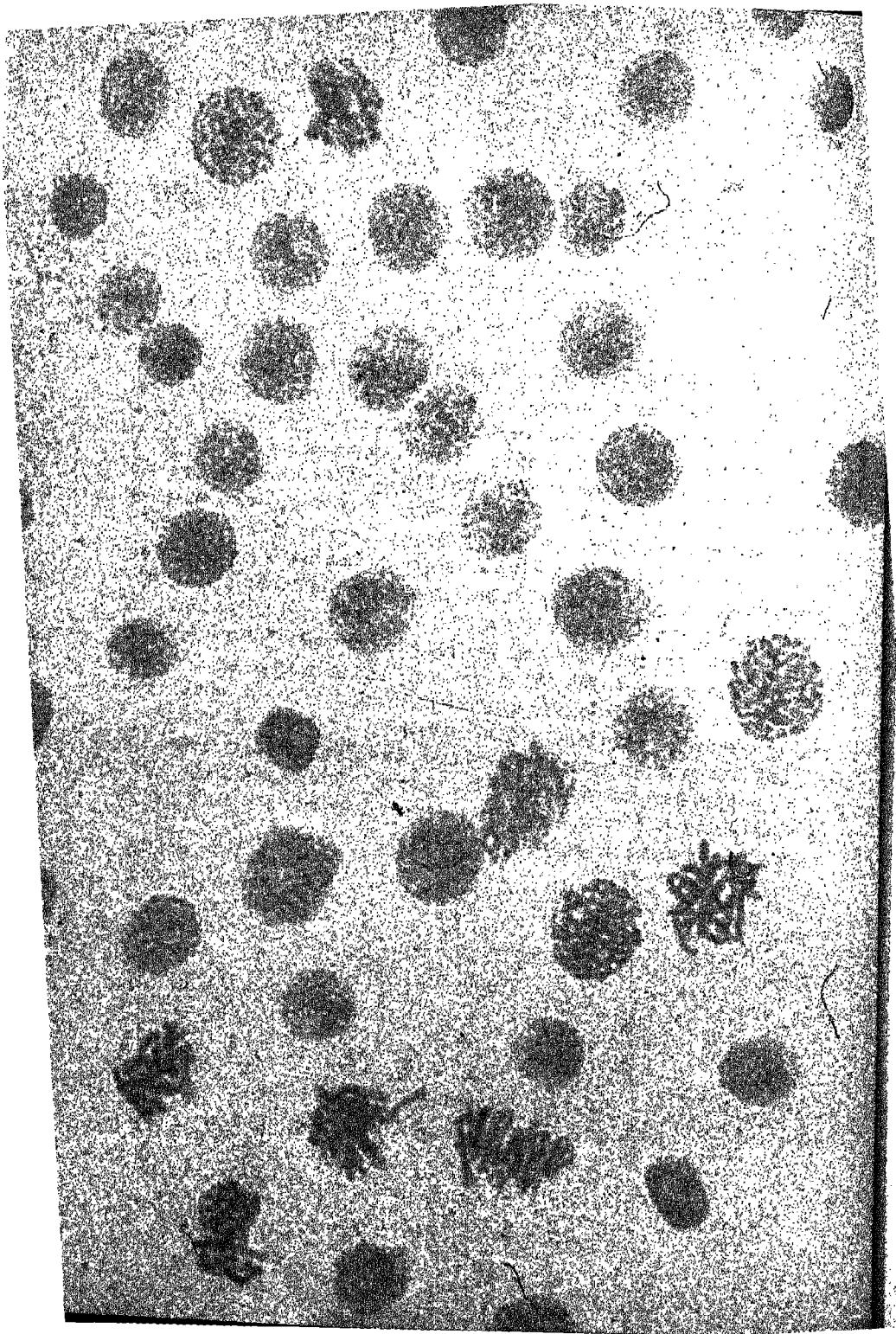
कोशिका: जीवन की इकाई के रूप में

छोटे से छोटे तथा बड़े से बड़े, सूक्ष्मदर्शीय अमीबा तथा एक कोशिकीय शैवाल से लेकर हाथी तथा ऊँचे-ऊँचे वृक्ष तक सभी सजीव कोशिकाओं के बने होते हैं। बहुत से जीवों में केवल एक कोशिका ही होती है। उन्हें एक कोशिकीय जीव कहते हैं। अन्य जीवों में बहुत सी कोशिकाएँ होती हैं उन्हें बहु कोशिकीय जीव कहते हैं। इन जीवों में 'बहुत' की सार्थकता का इस बात से पता चलता है कि रुधिर की एक बूँद में कई लाख कोशिकाएँ होती हैं। बहुकोशिकीय जीवों में विशिष्ट कार्यों के लिए कोशिकाएँ विशिष्ट बन जाती हैं।

कोशिकाओं का एक वर्ग जो रचना तथा कार्य में समान हो, उसे *ऊतक* कहते हैं। विभिन्न प्रकार के ऊतक मिलकर अंग बनाते हैं जो एक या अधिक विशिष्ट क्रिया-कलाप करते हैं। एक उच्च विकसित बहुकोशिकीय जीव जैसे मनुष्य में बहुत से संबंधित अंग मिलकर *अंग तंत्र* बनाते हैं। ये अंग तंत्र कोई विशेष जैव प्रक्रिया करते हैं। उदाहरण के लिए पाचन तंत्र में लार ग्रन्थि, आमाशय, आंत, पैन्क्रियाज़, यकृत तथा पित्ताशय जैसे अंग होते हैं। ये प्रत्येक अंग ऐपिथीलियल, संयोजी तथा पेशीय तन्तु से बने होते हैं। लेकिन मूल रूप से इन सबमें विभिन्न प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं।

कोशिका : एक मूलभूत इकाई

अब कोशिका को जीव की एक इकाई मान लिया गया है। कोशिका अध्ययन के लिए न केवल सूक्ष्मदर्शी के विकास की आवश्यकता होती है बल्कि विभिन्न जीवों की अभिरंजित कोशिकाओं तथा उनके अंगों की आलोचनात्मक अध्ययन करने की योग्यता भी आवश्यक है। *आज जितना भी ज्ञान हमें कोशिका* के विषय में है वह बहुत से आविष्कारकों का 300 वर्षों से सतत प्रयत्न का परिणाम है। अब भी कोशिका के विषय में बहुत से ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर अभी नहीं मिल पाया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि विज्ञान कैसे उन्नति करता है। कोशिका का इतिहास सन् 1665 में लन्दन में प्रकाशित रॉबर्ट हुक की पुस्तक *माइक्रोग्रेफिया* से आरम्भ होता है।

1665 में रॉबर्ट हुक ने अपने द्वारा बनाये सरल सूक्ष्मदर्शी से कार्क की स्लाइस को देखा। जिसमें उसे मधुमक्खी के छत्ते की तरह की संरचनाएँ दिखाई पड़ीं। इस मधुमक्खी के छत्ते में मोटी दीवार वाले अनेक कोष्ठक थे। सर्वप्रथम 'कोशिका' नाम इनको उन्होंने ही दिया। लेकिन वे इन संरचनाओं की सार्थकता को नहीं समझ पाए। उन्होंने कार्क की इन *कोशिकाओं को तरल वाहक नलिकाएँ जैसी संरचनाएँ*

कोशिका की खोज

माइक्रोग्राफिया : लन्दन में 1665 में रॉबर्ट हुक द्वारा किए गए *आवर्धक लैन्स से माइन्यूटी का अध्ययन शरीर क्रिया विज्ञान की व्याख्या, अवलोकन तथा उसके बाद जांच-पड़ताल,* जीवविज्ञान में बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। अध्याय जो आज कोशिका विज्ञान का आकार बनाता है, वह है "ऑब्ज़र्व, XVIII, में कार्क या उसी की तरह अन्य वस्तुओं की कोशिकाएँ या छिद्र या कोष्ठ का अध्ययन का वर्णन"। जब आप नीचे दिए गए सारांश को पढ़ेंगे तो आपको पता चलेगा कि हुक ने कोशिका की खोज आदिम यन्त्रों, मध्यम प्रकाश तथा घिसे या टूटे हुये लैन्सों से की थी।

"मैंने एक टुकड़ा कार्क का लिया और उसे चाकू की सहायता से इतना पतला किया जितना रेज़र होता है। मैंने इसका एक टुकड़ा लिया और इसे और अधिक चिकना किया और फिर मैंने बड़े ध्यान से सूक्ष्मदर्शी में देखा। मुझे छोटे-छोटे सुराख दिखाई पड़े लेकिन मैं उनमें विभेदन नहीं कर सका। यदि मैं और अधिक ध्यान देता तो सूक्ष्मदर्शी में इसे विभेदित कर पाता। मैंने उसी तेज चाकू से पहले वाले कार्क के टुकड़े से बहुत ही पतला टुकड़ा काट लिया और उसे काली प्लेट पर रखा, क्योंकि यह स्वयं सफेद था, इस पर समतल अवतल ग्लास से प्रकाश डाला, मैं उसे अधिक स्पष्ट देख सका और देखा कि वे छिद्रत सुराख हैं — ऐसे सुराख जो मधुमक्खी के छत्तों से मिलते-जुलते हैं।

ये सुराख अथवा कोशिकाएँ अधिक गहरे नहीं थे बल्कि उनमें बहुत से छोटे-छोटे डिब्बे थे, जो किसी *डायाफ्राम* द्वारा लम्बे सुराख से अलग थे।

समझा। वास्तव में उन्होंनें जिनको कोशिका समझा था वे वास्तव में कोशिका भित्ती थीं जो कार्क की मृत कोशिका से बने खाली स्थान को चारों ओर से घेरे थीं (चित्र 4.1)।

हुक ने अपना अध्ययन कार्क तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि उसने सूक्ष्मदर्शी से बहुत से विभिन्न पौधों को देखा और निष्कर्ष निकाला कि उन सब में भी उसी प्रकार की संरचनाएँ थीं। हुक के निष्कर्ष बहुत ही कम सुविधा उपलब्ध यन्त्रों पर आधारित थे लेकिन इससे आगे अध्ययन करने का मार्ग खुला। जिससे 160 वर्ष बाद *कोशिका सिद्धान्त* बना।

माइक्रोस्कोप की खोज़ ने वैज्ञानिकों को विभिन्न सजीवों का अवलोकन करने के लिये प्रेरित किया। वे देखना चाहते थे कि अन्य सजीवों में हुक की कोशिकाएँ जैसी कोई संरचनाएँ हैं या नहीं। मधुमक्खी के छत्ते की तरह की संरचनाएँ लगभग सभी पौधों
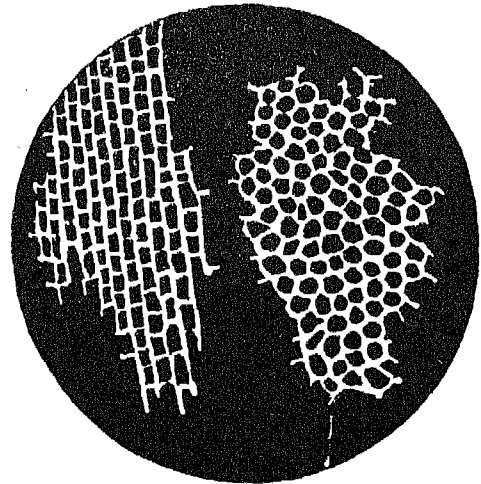
चित्र 4.1 कॉर्क की पतली परत में रॉबर्ट हुक द्वारा देखी गई कोशिकाएँ।

के ऊतकों में दिखाई दीं। आश्चर्य की बात यह है कि जन्तु में वैसी कोशिकाएँ दिखाई नहीं दीं जैसी पौधों में दिखाई दी थीं। एक महत्त्वपूर्ण खोज यह है कि ऑर्किड की जड़ कोशिका में एक छोटी गोल सी रचना होती है। इसकी खोज रॉबर्ट ब्राउन ने सन् 1831 में की थी। बाद में इस गोल संरचना को *केन्द्रक* का नाम दिया गया जो सभी कोशिकाओं में स्थित होता है।

एक जर्मन वनस्पति शास्त्री शलीडेन (1804-1881) ने बहुत से पादप ऊतकों को देखा। उन्होंने पाया कि सभी में किसी न किसी प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं। उन्होंने सन् 1881 में निष्कर्ष निकाला कि सभी पादप ऊतकों में कोशिका एक संरचनात्मक इकाई है।

उन्हीं दिनों थियोडर स्वान (1810-1882), जो एक जर्मन प्राणी वैज्ञानिक थे, ने बहुत सी जन्तु कोशिकाओं का अध्ययन किया। उन्होंने केन्द्रक तो देखा लेकिन उसमें कोशिका भित्ती नहीं दिखाई दी। जन्तु कोशिका में बाहर की ओर एक बहुत ही पतली झिल्ली होती है जिसे आज हम *प्लाज्मा झिल्ली* कहते हैं। स्वान ने देखा कि कोशिका भित्ती के अतिरिक्त जो केवल पादप कोशिकाओं में होती है, कोशिका में भीतरी पदार्थ पादप तथा जन्तु दोनों में एकसमान होते हैं। इसलिए उन्होंने बताया कि कोशिका, झिल्ली से घिरी हुई केन्द्रकयुक्त रचना है। पादप तथा जन्तु कोशिकाओं का अच्छी प्रकार अध्ययन करने के बाद, उन्होंने एक परिकल्पना सुझाई : जन्तुओं एवं पादपों के शरीर कोशिकाओं तथा उसके उत्पादों से बने हुए होते हैं।

शलीडेन तथा स्वान ने अपने आँकड़ों की तुलना की और स्वान की परिकल्पना की चर्चा की। उनके मिश्रित विचारों से कोशिका सिद्धांत बना। इस सिद्धांत से यह नहीं पता लगता कि नई कोशिकाएँ कैसे बनती हैं। वास्तव में शलीडेन ने सोचा कि कोशिका केन्द्रक से निकली है। रुडोल्फ विर्चो (1855) ऐसा पहला वैज्ञानिक था जिसने बताया कि कोशिका में विभाजन होता है और सभी नई कोशिकाएँ पूर्ववर्ती कोशिकाओं से बनती हैं।

उपरोक्त वर्णन से पता लगता है कि परिकल्पना से कैसे सिद्धान्त बनता है। कोई परिकल्पना (जैसा कि स्वान ने सुझाया है) एक कथन है जिसका परीक्षण करना आवश्यक होता है। कई सालों तक परिकल्पना की पुष्टि करने के बाद सिद्धांत बनता है। जैसे कि शलीडेन ने सुझाया है। सिद्धान्त अपने आप में भी कोई अन्य नई खोजों के आधार पर बदल सकता है। (जैसा कि बिर्चो ने इस विषय में किया)।

कोशिका सिद्धान्त, जैसा कि अब हम समझते हैं,का सारांश निम्नलिखित है —

* सभी सजीव कोशिका तथा उसके उत्पाद के बने होते हैं।
* सभी कोशिकाओं की उत्पत्ति पूर्ववर्ती कोशिका से होती है।
* सभी कोशिकाओं में मूलरूप से रासायनिक घटक तथा उपापचय प्रक्रिया समान होती हैं।
* जीव का कार्य उसकी कोशिकाओं की क्रिया-कलाप तथा पारस्परिक क्रियाओं का परिणाम है।

कोशिका सिद्धान्त मानने के लिए जीवविज्ञान में एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है। क्या एक जीव मुक्त कोशिकाओं का समूह है जो आपस में एक दूसरे से मिलकर कार्य करती हैं? अथवा क्या कोई जीव, मुक्त कोशिकाओं का एक वर्ग, जीव की आवश्यकतानुसार बताए गए कार्य करता है? आपको इस पुस्तक में इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए बहुत अवसर मिलेंगे।

कोशिका सभी जीवों की संरचनात्मक तथा क्रियात्मक मूलभूत इकाई है। सभी कोशिकाओं की रचना, आण्विक संगठन तथा कुछ मूल क्रिया-कलाप एक जैसे ही होते हैं। किसी जीव अथवा उसके अंग अथवा ऊतक के कार्य कोशिकाओं के कार्य पर निर्भर करते हैं। इस प्रकार कोई भी जीव जिसमें कोशिका नहीं होती, वह क्रिया-कलाप नहीं कर सकता।

सभी कोशिकाओं में सामान्य क्या है? सभी कोशिकाओं में आनुवंशिक पदार्थ न्यूक्लिक ऐसिड होता है। कोशिका विभाजन के समय आनुवंशिक ग्रुप न्यूक्लिक ऐसिड के रूप में स्थानान्तरित हो जाते

हैं। प्लाज्मा झिल्लियों की मूल रचना तथा कार्य भी समान होते हैं। आक्सी श्वसन की क्रिया भी समान है। सभी कोशिकाओं में न्यूक्लिक ऐसिड तथा प्रोटीन का संश्लेषण एक समान ही होता है। ऐसी मूलभूत समानताएँ सभी जीवों में एकता को प्रदर्शित करती हैं।

जैसा ऊपर बताया गया है कि मूलरूप से एकता होते हुए भी जीवों की संरचना तथा कार्यों में विविधता होती है। ये विविधताएं विकास के समय उनकी कोशिकाओं में विकसित होती हैं।

कोशिका एक स्वयं पूर्ण इकाई है

प्रत्येक कोशिका स्वायत्त इकाई है। यह अपने आप ही सभी मूलभूत जैव प्रक्रियाएँ करती है। यह ऊर्जा प्राप्त करने के लिए भोजन के अणुओं का आक्सीकरण करती है और उस ऊर्जा तथा कुछ पोषक तत्वों का, जटिल तत्व बनाने में उपयोग करती है। उसके बाद कोशिका उन पदार्थों का उपयोग नई-नई संरचनाएँ बनाने तथा टूटे-फूटे भागों को बदलने में करती है। कोशिका श्वसन करती है और अपने वातावरण से गैसों का आदान-प्रदान करती है। यह समान आनुवंशिक गुणों वाली कोशिकाओं का जनन करती है। अपनी क्रियाओं को नियमित करके कोशिका आवश्यक भीतरी भौतिक-रासायनिक दशाओं को बनाये रखती है। प्रत्येक कोशिका का अपना जीवन काल होता है।

बहुकोशिकीय जीवों में कोशिकाएँ प्रायः मुक्त रूप से कार्य नहीं करतीं। वे परस्पर क्रियाएँ और सहयोग करती हैं। विशिष्ट रचना तथा कार्य के कारण बहुकोशिकीय जीवों की कोशिकाओं में श्रम विभाजन का विकास होता है। लेकिन फिर भी वे आंशिक रूप से परस्पर निर्भर होती हैं। बहुत सी स्वायत्त क्रियाएं, जैसे गुणन की क्षमता स्थायी तथा अस्थायी रूप से लुप्त हो जाती हैं। लेकिन फिर भी वे अपने मुक्त अस्तित्व तथा गुणन की क्षमता को बनाए रखती हैं। इसे हम *कोशिका संवर्धन* तकनीकी द्वारा दिखा सकते हैं। इस तकनीकी में बहुकोशिकीय जीव से कोशिका को अलग कर लेते हैं और उसे रोगाणु रहित पोषक माध्यम में नियंत्रित परिस्थितियों में उगाते हैं। कोशिका गुणन करती है जिससे कोशिका अथवा ऊतक की एक बहुत बड़ी आबादी बन जाती है जो सभी जैव प्रक्रियाओं को करने में सक्षम होती है।

एक कोशिकीय तथा बहुकोशिकीय जीव

एक कोशिकीय जीव कोशिका में निहित जिन विशिष्ट संरचनाओं की सहायता से सारी जैव प्रक्रियाएँ करते हैं, इन्हें कोशिकांग कहते हैं। कोशिका का माप इतना बड़ा अवश्य होना चाहिए कि उसमें इसके सारे अंगक आ जाएं। यदि कोशिका को सुचारू रूप से कार्य करना है तो आयतन तथा इसकी सतह का अनुपात कुछ सीमा में होना चाहिए। कोशिका के आयतन में वृद्धि के साथ-साथ कोशिका की सतह में बहुत कम वृद्धि होती है अर्थात् एक बड़ी कोशिका में छोटी कोशिका की अपेक्षा आनुपातिक सतह कम तथा आयतन अधिक होता है।

इस प्रकार बड़े आयतन वाली कोशिका जिसमें बहुत से कोशिकांग होते हैं, की सतह से सूचनाओं तथा पदार्थों का आदान-प्रदान सीमित हो जाता है। इस समस्या का आंशिक निदान कोशिका की बेलनाकार आकृति अथवा कोशिका झिल्ली पर बहुत से उद्धर्व बनने से होता है। अकेली कोशिका में विभेदन की क्षमता नहीं होती। उदाहरण के लिए कोशिका गति के लिए आनम्यता (pliability) की आवश्यकता होती है। कोशिका में अधिक पानी आने से इसे फटने से रोकने के लिए कोशिका भित्ती दृढ़ होनी चाहिए। लेकिन ये दोनों गुण एक ही कोशिका में साथ-साथ नहीं हो सकते। पादप कोशिका जिसके चारों ओर कोशिका भित्ती होती है, गति नहीं कर सकती। इसी प्रकार ल्यूकोसाइट जिसमें कोशिका भित्ती नहीं होती, पानी अन्दर आने से अत्यधिक फैल जायेगी।

एक बहुकोशिकीय जीव केवल कोशिकाओं का सरल एकत्रीकरण नहीं है। इसकी कोशिकाएं विभिन्न जैव प्रक्रियाएं करने के लिए विभिन्न होती हैं। उदाहरण के लिए कुछ कोशिकाएं बाहरी कोशिकीय पदार्थ का निर्माण करती हैं जिससे कि वे आपस में एकत्र रहें। कुछ तंत्रिकाएं संवेदों को लाने, ले जाने का कार्य करती हैं, अन्य जनन करने के लिए विशिष्ट होती है। यहां तक कि मृत कोशिकाएं भी अपनी भूमिका
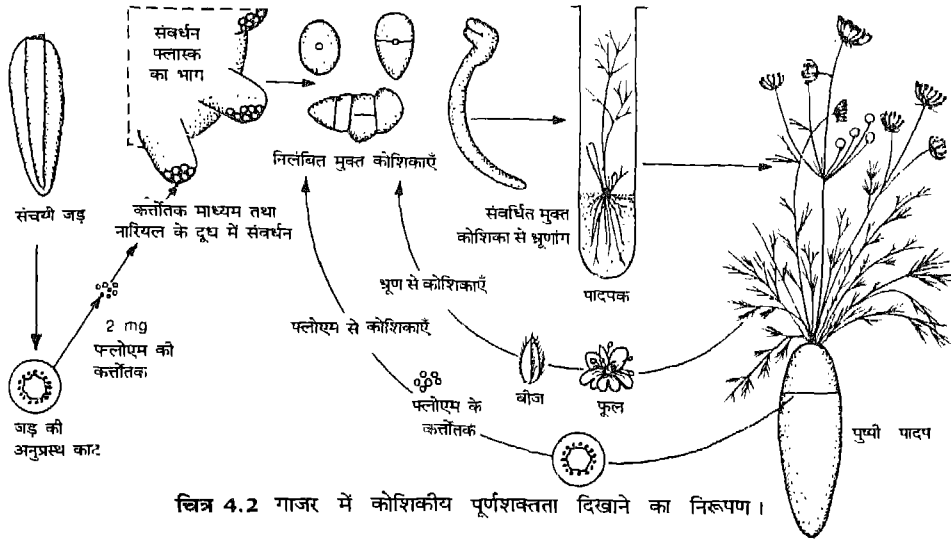
चित्र 4.2 गाजर में कोशिकीय पूर्णशक्तता दिखाने का निरूपण।

पादप कोशिकाएँ पूर्णशक्त हैं

सन् 1902 में जर्मनी के वनस्पति शास्त्री हैबरलैन्ड ने कहा था कि प्रत्येक जीवित पादप कोशिका में पूरा पौधा पुनर्योजित करने की क्षमता होनी चाहिए। इस संकल्पना को पूर्णशक्त (totipotency) कहते हैं। यह इस धारणा पर आधारित है कि जीव की प्रत्येक कोशिका निषेचित अंडे से बनती है और इसमें पुनः पूरा पौधा विकसित करने के जन्मजात गुण विद्यमान होने चाहिए। लेकिन हैबरलैन्ड का प्रयोग जिसमें उसने हरी पत्तियों से कोशिका को अलग करके उगाया था, असफल हो गया था।

सन् 1950 के अंत में एफ.सी.स्टीवर्ड तथा उसके सहयोगी ने कोरनेल विश्वविद्यालय, अमेरीका में, गाजर के साथ बहुत ही रोचक अध्ययन किया था। इन वैज्ञानिकों ने गाजर की जड़ के फ्लोएम ऊतकों जिनमें परिपक्व अविभाज्य कोशिकाएं थी, से 2 मि॰ ग्रा॰ टुकड़े (कर्त्तोतक) लिए। उन्होंने उसे तरल पोषक माध्यम जिसमें नारियल का पानी था, में उगाया। कोशिकाएं विभाजित हुईं और अलग होकर एक निलंबन बना लिया। इस नई बनी कोशिका के झुंड से जड़ें निकल गईं। तब इन्हें संवर्धन नली जिसमें वही अवयवों वाला अर्द्धठोसीय माध्यम था, में स्थानान्तरित किया गया तो, उनसे प्ररोह बना और अन्ततः पौधा बन गया। परखनली में उगाए गए पौधों को जब गमलों में लगाया गया तब उनसे नारंगी रंग की जड़ें निकलीं। इस प्रयोग से यह पता चलता है कि परिपक्व कोशिका में भी विभाजन करवाया जा सकता है और उससे पूरा पौधा प्राप्त किया जा सकता है। इसके बाद स्टीवर्ड (1963) तथा हैल्पेरिन तथा वैथरेल (1964) ने गाजर की कोशिका से हजारों कायिक भ्रूणों (डिप्लाइड कायिक कोशिकाओं से भ्रूण उगाना) को विकसित किया।

कोशिकाओं की पूर्णशक्तता अब बहुत से पादप ऊतकों जिनकी उत्पत्ति विभिन्न है, परागकोष, भ्रूण कोश, मूल, प्ररोह शीर्ष, पत्तियां, पुष्पी कलियां आदि में भी दिखाई गई है। कोशिका के इस अद्भुत गुण का उपयोग ऊतक संवर्धन द्वारा पौधों को उगने में किया जाता है।

निभाती हैं। प्राणियों की त्वचा में तथा पौधों मे कार्क जीवित कोशिकाओं की रक्षा करते हैं। जाइलम वाहिकाएं जो अनुप्रस्थ भित्तियों के घुलने से बनती हैं, पौधों में जल संवहन का कार्य करती हैं। इस प्रकार, एक बहुकोशिकीय जीव जिसमें विभिन्न प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, एक कोशिकीय जीव की अपेक्षा अधिक सक्षम है।

बहुकोशिकीय जीवों में ऐसे बहुत से क्रिया-कलाप होते हैं जिसमें बहुत सी कोशिकाएँ मिलकर कार्य करती हैं। उदाहरण के लिए हृदय बहुत सी पेशियों के समन्वय के कारण पम्प करता है। एक तंत्रिका संवेद को प्रसारित करने के लिए बहुत सी तंत्रिका कोशिकाएं कार्य करती हैं। इसकी तुलना हम रिले दौड़ से कर सकते हैं जिसमें एक धावक अपना "बैटन" दूसरे धावक को देता है। इस प्रकार कोशिका का अस्तित्व दोहरा है — अर्थात् एक जीव के रूप में तथा दूसरा समुदाय के अंग के रूप में।

बहुकोशिकीय जीव में एक कोशिकीय जीव की अपेक्षा उत्तरजीविता की क्षमता अधिक होती है। बहुकोशिकीय जीवों में यदि कुछ कोशिकाएं मर भी जाएं तब भी कुछ विशेष हानि नहीं होती। वास्तव में सैकड़ों मृत कोशिकाओं की जगह विभाजन द्वारा नई-नई कोशिकाएं ले लेती हैं। मनुष्य की त्वचा तथा आंत की भीतरी सतह से प्रतिदिन बहुत सी कोशिकाएं हटती रहती हैं। लेकिन उनके स्थान पर जल्दी ही नई-नई कोशिकाएँ आ जाती हैं। रुधिर कोशिकाओं की लगातार हानि होती रहती है और उनके स्थान पर नई कोशिकाएं आती रहती हैं। ये नई कोशिकाएं अस्थिमज्जा में बनती हैं। इसके विपरीत एक कोशिकीय जीवों में यदि कोशिका में कोई हानि होती है तो वह मर जाता है।

मनुष्य के शरीर में असंख्य कोशिकाएँ होती हैं जो एक निषेचित अंडे से बनती हैं और उन सब में एक ही प्रकार का आनुवंशिक पदार्थ होता है। फिर भी इनमें से बहुत सी कोशिकाओं में एक या अधिक क्रिया-कलाप निलम्बित हो जाता है अथवा उसकी अपरिवर्तनीय हानि हो जाती है। मनुष्य में स्थित परिपक्व लाल रुधिर कोशिकाओं में आक्सी श्वसन, डी.एन.ए. प्रतिकृति तथा आर.एन.ए. संश्लेषण की क्षमता नहीं होती। परिपक्व तंत्रिका कोशिकाएं

चित्र 4.3

पहला चित्र एक घन है जिसकी भुजाओं का माप 1 सें०मी० है। इस प्रकार इसका आयतन 1 घन सें०मी० है। इसकी सतह का क्षेत्रफल 6 वर्ग सें०मी० है। अतः इसकी सतह : आयतन का अनुपात 6:1 है।

दूसरे घन की भुजाओं का माप 2 सें०मी० अर्थात् पहले चित्र का दोगुना है। इसका आयतन 8 घन सें०मी० तथा सतह का क्षेत्रफल 24 वर्ग सें०मी० है। अतः इसकी सतह : आयतन का अनुपात 3:1 है।

यदि हम एक घन जिसकी भुजाएं पहले घन की तीन गुनी (3 सें०मी०) हैं, लें तो इसकी सतह : आयतन का अनुपात 2:1 होगा। इस प्रकार आप देखेंगे कि किस प्रकार सतह : आयतन का अनुपात बढ़ते हुए आकार के साथ घटता है।

विभाजन में अक्षम होती हैं। यकृत कोशिकाओं में तथा पेशी कोशिकाओं में माइटोटिक विभाजन की क्षमता होती है लेकिन वह कभी सामान्य रूप से विभाजित नहीं होतीं। अतः अभी भी कुछ क्रिया-कलापों के न होने के कारणों को नहीं जानते हैं।

ऊर्जा प्रवाह और सूचना प्रवाह

सभी सजीव कोशिकाएँ ऊर्जा तथा सूचना के प्रवाह पर निर्भर करती हैं। जैसा कि हमने अध्याय 2 में पढ़ा है कि ऊष्मा गतिकी के दूसरे नियम के अनुसार प्रत्येक जीव में अन्य तंत्रों की तरह अनियमित वृद्धि अथवा *एन्ट्रापी* की प्रवृत्ति रहती है। आण्विक, कोशिकीय तथा जैव स्तरों में संगठन बनाये रखने के लिए जीव एंट्रापी को कम करने के लिए वातावरण से ऊर्जा प्राप्त करता रहता है। इस कार्य के लिए जीव ऊर्जा या तो प्रकाश (फोटॉन) से, अथवा भोजन से, रसायनिक आबंध ऊर्जा के रूप में प्राप्त करता है (चित्र 4.4)।
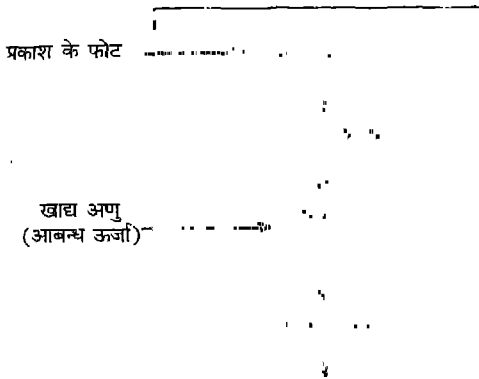
चित्र 4.4 कोशिका में ऊर्जा का प्रवाह।

सूचना-प्रवाह के दो मार्ग होते हैं। पहले मार्ग में *आनुवंशिक सूचना का प्रवाह* होता है। आनुवंशिक सूचनाएं डी.एन.ए. में होती हैं जो इन सूचनाओं को आर.एन.ए. में अनुलिपित कर देता है। आर.एन.ए. में स्थित ये सूचनाएं विशेष प्रोटीनों में आनुवादित हो जाती हैं अर्थात् डी.एन.ए. में स्थित अणु प्रोटीन के बनने के प्रकार को निर्धारित करते हैं। जो प्रोटीन बनते हैं, वे कोशिका के सभी कार्यों को नियमित
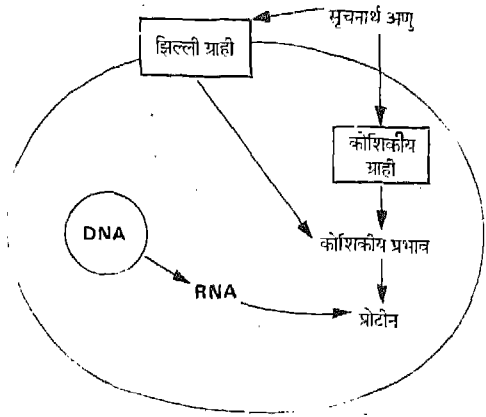
चित्र 4.5 कोशिका में सूचना का प्रवाह।

करते हैं (चित्र 4.5)। *दूसरा प्रवाह बाहरी सूचनाओं* का होता है। बाहर से आने वाली सूचनाएं हार्मोन्स जैसे अणु द्वारा कोशिका में *प्रभावित* की जाती हैं। इनमें से कुछ कोशिका के अन्दर जाकर उसकी क्रियाकलापों को प्रभावित करते हैं तथा कुछ कोशिका की सतह पर स्थित कुछ अणुओं से जुड़ जाते हैं। इन अणुओं को *ग्राही* कहते हैं। ऐसे आबंध से कोशिकीय क्रिया-कलापों में महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। ऐसे ग्राही अणुओं की रचना तथा कार्य का अध्ययन करना आधुनिक अनुसंधान की एक महत्वपूर्ण शाखा है।

कोशिकीय जीवन के लिए कोष्ठीकरण

प्रत्येक कोशिका एक कोष्ठक समझी जाती है जिसके चारों तरफ प्लाज्मा झिल्ली होती है। यह झिल्ली कोशिका में स्थित जैव पदार्थ को भीतर ही संगठित रखती है और बाह्य कोशिकीय माध्यम से अलग करती है। इससे कोशिका में अणु एकत्र रहते हैं और नियमित क्रियाएँ करते हैं। इसके विपरीत बाह्य कोशिकीय माध्यम में अणु अनियमित रूप से फैले रहते हैं और परस्पर क्रियाएँ करते हैं।

दिलचस्प बात यह है कि कोशिका का कोष्ठक बिल्कुल बन्द नहीं होता है। एक कोशिकीय जीव में प्लाज्मा झिल्ली से कोशिका तथा बाहरी माध्यम में पदार्थों का चयनात्मक आदान-प्रदान होता है।

कुछ ही अणुओं तथा आयनों को अन्दर जाने की आज्ञा मिलती है जिसके कारण कोशिका में भीतरी संगठन बना रहता है जो कि बाह्य माध्यम से बिल्कुल भिन्न है।

बहुकोशिकीय जीवों में प्लाज्मा झिल्ली, कोशिकीय पहचान बनाये रखती है। लेकिन वह अन्य कोशिकाओं से उसे पूर्णरूप से अलग नहीं रखती। जन्तुओं में प्लाज्मा झिल्ली कोशिकाओं की एक-दूसरे को पहचानने में तथा ऊतकों में एकत्र होने में सहायता करती है। प्लाज्मा झिल्ली न केवल पदार्थों का आदान-प्रदान करती है, बल्कि वह आस-पास की कोशिकाओं तथा बाहरी सूचनाओं का भी आदान-प्रदान करती है। जो जीव समुद्र में रहते हैं वे समुद्र के पानी से कुछ पदार्थों को चयन कर एकत्र कर लेते हैं। कुछ समुद्री घासों में आयोडीन एकत्र करने की क्षमता होती है। उनकी कोशिकाओं में आयोडीन की मात्रा समुद्री पानी की अपेक्षा 20 लाख गुना अधिक होती है।

कोशिका के भीतरी कोष्ठन

प्राणी, पौधे, कवक तथा प्रोटिस्ट (उदाहरण के लिए प्रोटोजोआ) की कोशिकाओं में अन्तःकोशिकीय कोष्ठ होते हैं। जिनके चारों ओर झिल्ली होती है। इन्हें झिल्लीयुक्त *अंगक* कहते हैं।ये अंगक हैं केन्द्रक, माइटोकॉन्ड्रिया, क्लोरोप्लास्ट आदि। कुछ ऐसे भी अंगक होते हैं जिनके चारों ओर झिल्ली नहीं होती। ऐसे अंगक हैं सैन्ट्रिआल तथा राइबोसोम। इन्हें कोष्ठन नहीं कहते हैं। प्रत्येक अंगक नियमित रूप से विशिष्ट कार्य करते हैं। जिस कोशिका में अंगक होते हैं उन्हें *यूकैरिआटिक कोशिका* कहते हैं (चित्र 4.6 तथा 4.8)।

जीवाणु में झिल्लीयुक्त अंग नहीं होते। यहाँ तक कि क्रोमोसोम के चारों ओर भी झिल्ली नहीं होती। ऐसी कोशिकाओं को *प्रोकेरिआटिक कोशिका* कहते हैं (चित्र 4.7)। ये अधिकांशतः वही जैव प्रक्रियाएँ करती हैं जो यूकैरिआटिक कोशिकाएँ करती हैं। अन्तः कोशिकीय कोष्ठीकरण न होने के कारण इससे पता लगता है कि प्रोकेरिआटिक कोशिकाएँ पूर्वकालीन हैं।

यूकैरिआटिक कोशिका की रचना

यूकैरिआटिक कोशिकाओं का माप तथा आकृति भिन्न होती है। एक यूकैरिआटिक कोशिका का माप प्रायः 1-2 μm से लेकर 1 मि. मी. तक होता है। बहुकोशिकीय जीवों की कोशिकाओं का माप 5-100 μm से लेकर 15-20 सें. मी. तक होता है। एक धारीदार पेशी की कोशिका 1-40 मि. मी. लम्बी तथा 30-80 मि. मी. व्यास की होती है। मनुष्य में स्थित लाल रुधिर कोशिका का व्यास 7-8 μm होता है। तालिका 4.1 में कुछ कोशिकाओं का *औसत आयतन दिया गया है।*

तालिका 4.1

कुछ कोशिकाओं का तथा विषाणु का औसत आयतन

कोशिका - प्रकार	*आयतन (घन मिली माइक्रोन)*
शुतुरमुर्ग का अंडा	1.1×10^{15}
मुर्गी का अंडा	5.0×10^{13}
मनुष्य का अंडा	1.4×10^{6}
मनुष्य का शुक्राणु	1.7×10^{1}
सबसे बड़ा जीवाणु	7.0×10^{0}
सबसे छोटा जीवाणु	2.0×10^{-2}
सबसे छोटा विषाणु	7.0×10^{-7}

एक प्ररूपी यूकैरिआटिक कोशिका (चित्र 4.6) में जैली की तरह पारभासी जीव द्रव्य होता है। इस के चारों ओर अर्द्ध तरलीय *प्लाज्मा झिल्ली* होती है। पादप कोशिका में प्लाज्मा झिल्ली के चारों ओर दृढ़ तथा संरंध्री सैल्यूलोस की भित्ती होती है (चित्र 4.8)। कोशिका भित्ती से कोशिका का निश्चित आकार बनता है और यह कोशिका को अधिक फैलने से रोकती है। केन्द्रक के बाहर स्थित तरल को *कोशिका द्रव्य* कहते हैं। कोशिका द्रव्य में बहुत से अंगक होते हैं। उन्हें रँगकर उनकी आकृति तथा रासायनिक आधार पर पहचाना जा सकता है। कोशिका का सबसे महत्त्वपूर्ण अंगक *केन्द्रक* है। इसके चारों ओर दोहरी झिल्ली होती है। केन्द्रक मुख्यतः नियंत्रण केन्द्र अथवा संगठन का स्थान है। *रसधानियों* में तरल भरा रहता है और यह झिल्ली
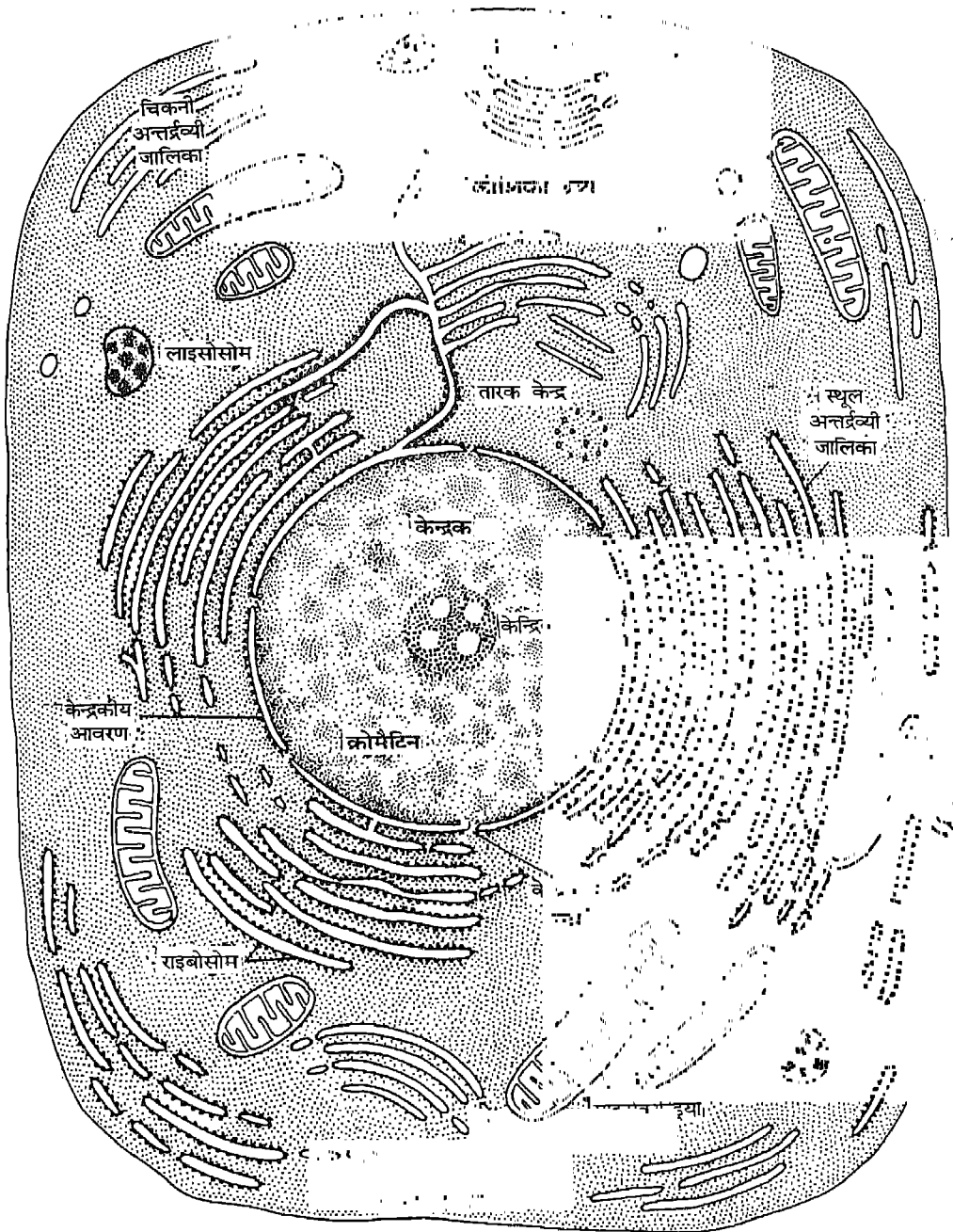
चित्र 4.6 प्राणी की यूकैरिआटिक कोशिका।
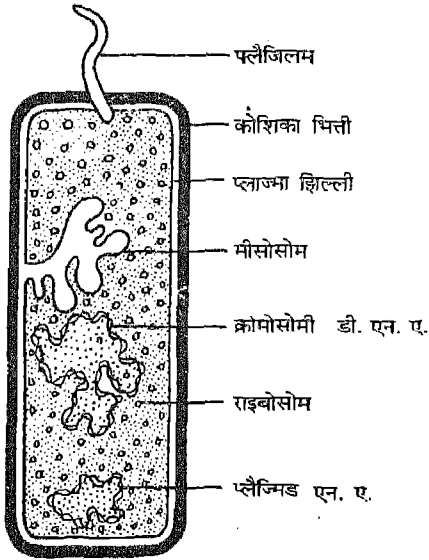
चित्र 4.7 जीवाणु की प्रोकैरिआटिक कोशिका।

चित्र 4.8 पौधे की यूकैरिआटिक कोशिका।
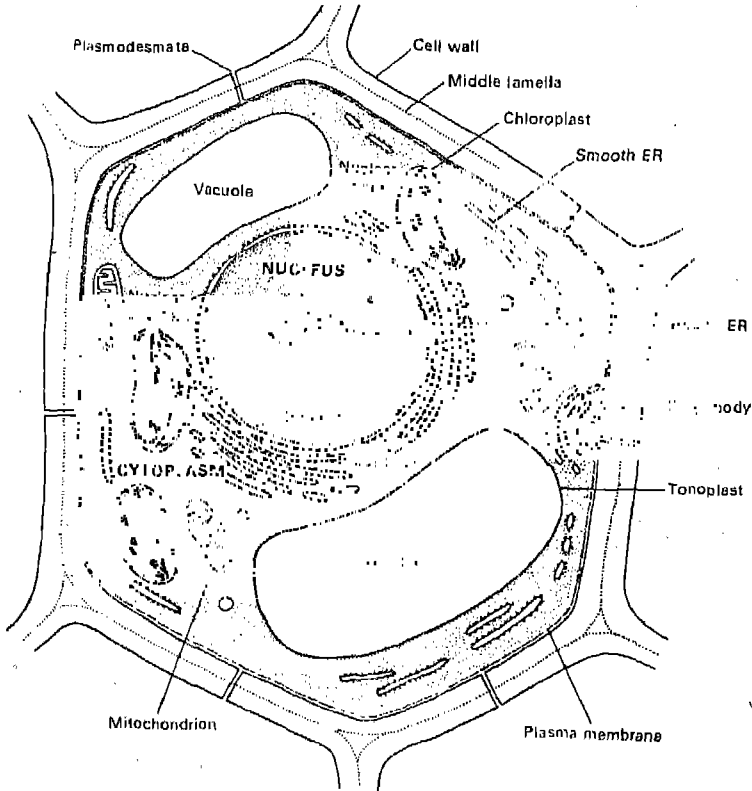
हुक की कोशिकाओं का माप

रॉबर्ट हुक (1635-1703) मूल रूप से गणितज्ञ तथा भौतिक शास्त्री थे। उन्होंने इन्स्ट्रूमेन्ट क्यूरेटर की नौकरी रायल सोसाइटी में 1662 में आरम्भ की और अगले वर्ष ही 28 वर्ष की आयु में उन्हें फैलो चुन लिया गया। यह ऐसा सम्मान है जो आज बड़े-बड़े वैज्ञानिकों को भी बड़ी मुश्किल से दिया जाता है। जब वे किसी वस्तु का अवलोकन करते थे तो गणित उनकी सहायता करता था। उन्होंने इन सुराखों की बहुत सी लाइनों को बताया (गिना) और पाया कि इन छोटी-छोटी कोशिकाओं में 3 स्कोर थे और लम्बाई में एक इन्च के अठारहवें भाग में सिरे से सिरे मिलाकर रखी हुई थीं। इस प्रकार मैंने निष्कर्ष निकाला कि वे लगभग 1100 अथवा लम्बाई में एक इन्च का लगभग हजारवें भाग से अधिक होगा और इसलिए एक वर्ग इन्च में लगभग 10 लाख, अथवा 1166400 और घन इन्च में लगभग 1 अरब 20 करोड़ अथवा 125971200। यह ऐसी संख्या है जो हमारे माइक्रोस्कोप आवयुलर से सम्भव नहीं है।

से घिरी रहती हैं। कोशिका द्रव्य में एक या अधिक गोलाकार अथवा अंडाकार रसधानियाँ होती हैं (चित्र 4.8)। परिपक्व पादप कोशिका के मध्य में एक बड़ी रसधानी होती है जो फैलकर जीव द्रव्य को प्लाज्मा झिल्ली तक सिकोड़ देता है। रसधानी की झिल्ली को *टोनोप्लास्ट* कहते हैं। आप अध्याय 9 में केन्द्रक तथा अन्य कोशिकीय संरचनाओं के विषय में विस्तार से पढ़ेंगे।

सारांश

कोशिका सिद्धान्त के अनुसार, सभी सजीव एक या एक से अधिक कोशिकाओं से बने होते हैं। कोशिका सजीव की मूल इकाई है। सभी कोशिकाएँ पूर्ववर्ती कोशिकाओं से बनी हैं।

सभी सजीवों की कोशिकाओं की रचना, आण्विक संगठन तथा जैव क्रियाएँ समान होती हैं। इससे जीवन में एकता का पता लगता है।

प्रत्येक कोशिका स्वयं पूर्ण होती है और वह स्वायत्त है। यह स्वतंत्र रूप से पोषण, श्वसन, वृद्धि, जनन तथा स्वनियमित जैसी क्रियाएँ स्वतः कर सकती है। बहुकोशिकीय जीवों में, कोशिकाओं को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं होती। उनके कुछ क्रियाकलाप सम्पादित नहीं होते। लेकिन बहुकोशिकीय जीवों के वियुक्त या एकल सजीव कोशिका का संवर्धन, पोषक माध्यम में, कई संतति तक कर सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि कोशिका ने अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं खोया है चाहे वह बहुकोशिकीय जीव में किसी विशेष ऊतक का अंग ही क्यों न हो।

एक कोशिकीय जीवों में अकेली कोशिका को समस्त जैव प्रक्रियाएँ करनी पड़ती हैं। कोशिका में स्थित विशेष संरचनाएँ जिन्हें कोशिकांग कहते हैं, कोशिका के कार्य तथा उन्हें नियमित करने में उसकी सहायता करती हैं। बहुकोशिकीय जीवों में विभिन्न प्रकार की कोशिकाएँ विभिन्न कार्य करती हैं। कोशिकाएँ आपस में मिल-जुलकर सामान्य कार्य करती हैं।

संगठित रचना तथा कार्य को बनाए रखने के लिए कोशिका को लगातार ऊर्जा-प्रवाह की आवश्यकता रहती है। कोशिका यह ऊर्जा या तो प्रकाश संश्लेषण से या भोजन से रसायन आबद्ध ऊर्जा लेती है। कोशिका लगातार प्राप्त सूचना की सहायता से अपनी जैव प्रक्रियाओं को नियमित करती है। यह डी. एन. ए. द्वारा लाई गई आनुवंशिक सूचना अथवा वातावरण से आई सूचना हो सकती है।

कोशिकीय जीवन के लिए कोष्ठीकरण बहुत आवश्यक है। प्लाज्मा झिल्लीयुक्त कोशिका कोष्ठक के रूप में होती है। पादप कोशिका में प्लाज्मा झिल्ली के चारों ओर सैल्यूलोस भित्ती होती है। यूकैरिआटिक कोशिका में बहुत से झिल्लीयुक्त अंगक अर्थात् कोष्ठक होते हैं। प्रत्येक अंगक की रचना तथा कार्य विशिष्ट होते हैं। प्रोकैरिआटिक कोशिकाओं में अन्तःकोष्ठक नहीं होते हैं।

प्रश्नावली

1. बताइए निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही (स) है तथा कौन सा गलत (ग) —
   (क) रॉबर्ट हुक ने केन्द्रक की खोज की थी।
   (ख) कोशिका बहुत से स्वतंत्र तथा बेतरतीबी से पारस्परिक क्रियाएँ करने वाले अवयवों से बनी है।
   (ग) विर्चो ने बताया कि कोशिका पूर्ववर्ती कोशिका से उत्पन्न होती है।
   (घ) एन्ट्रापी को बनाए रखने के लिए सूचनाएँ अन्दर आती रहनी चाहिए।
   (ङ) शुतुरमुर्ग का अंडा सबसे बड़ा होता है।
2. पहले दो शब्दों में संबंध देखिए और फिर चौथे स्थान पर दिए खाली स्थान को भरिए:
   (क) जीवाणु : प्रोकैरिआट : : मनुष्य : ____________
   (ख) अंग : जीव : : कोशिका : ____________
   (ग) कोशिका : प्लाज्मा झिल्ली : : रसधानी : ____________
   (घ) प्रकाश संश्लेषण : ऊर्जा : : डी. एन. ए. : ____________
3. निम्नलिखित में ठीक के आगे सही का निशान (√) लगाइए:
   (क) प्रोकैरिआटिक कोशिका का गुण है —
      (i) एक सुस्पष्ट केन्द्रकीय झिल्ली
      (ii) सुस्पष्ट क्रोमोसोम
      (iii) क्रोमेटिन पदार्थ न होना
      (iv) केन्द्रीय झिल्ली का न होना।
   (ख) कोशिका की उत्पत्ति होती है —
      (i) जीवाणु किण्वन से
      (ii) पूर्ववर्ती कोशिका से
      (iii) अजैव पदार्थ से
      (iv) पुरानी कोशिका के पुनर्जीवन से।
4. जीवों में एक प्रकार की कोशिका की अपेक्षा ऊतक का होना क्यों लाभदायक है?
5. "कोशिका जीवन की मूलभूत इकाई होती है"। इस कथन की पुष्टि करिए।
6. यदि, जैसा कि ऊष्मागतिकी का दूसरा नियम बताता है, "किसी तंत्र में मुक्त ऊर्जा कम हो जाती है", तब पृथ्वी इतने सारे जीवों को बहुत ही संगठित, और उच्च मुक्त ऊर्जा अवस्था में कैसे बनाए रखती है?
7. "सूचना-प्रवाह" से आप क्या समझते हैं? बाहरी तथा भीतरी सूचना में क्या अंतर है?
8. कोशिका सिद्धान्त किसने बनाया था? इस सिद्धान्त की मुख्य बातों का वर्णन करिए।
9. चित्र की सहायता से जन्तु तथा पादप कोशिका की रचना में तुलना करिए।
10. किस प्रकार वैज्ञानिक विधियाँ किसी सिद्धान्त को बनाने में सहायता करती हैं, व्याख्या करिए।

कोशिका के छोटे अणु

सभी कोशिकाओं की रचना तथा कार्य अणु की संरचना, उनके रासायनिक अवयवों तथा गुणों के विन्यास पर निर्भर करती है। इस अध्याय में आप पढ़ेंगे कि कोशिका छोटे-छोटे अणुओं के स्वभाव तथा उनके आयनों में कितनी समानता दर्शाती है। कोशिकीय पदार्थ का लगभग 93 प्रतिशत भाग कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन है। कुल कोशिकीय पदार्थ का 2 प्रतिशत भाग अधातु तत्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस, क्लोरीन तथा गंधक है। जबकि आयोडीन, फ्लोरीन, बोरॉन तथा सैल्नियम बहुत ही कम मात्रा में होती हैं। कोशिकीय पदार्थ का 5 प्रतिशत से भी कम भाग सात्विक तत्व जैसे कैल्सियम, पोटैशियम, सोडियम तथा मैग्नीशियम है। लौह, तांबा, कोबाल्ट, जस्ता, मैंग्नीज, मॉल्बिडनम् तथा क्रोमियम की बहुत ही कम मात्रा होती है।

कोशिकीय कुंड

कोशिका में विभिन्न प्रकार के अणुओं के संग्रह को *कोशिकीय कुंड* कहते हैं। इसमें पानी, अकार्बनिक पदार्थ तथा कार्बनिक यौगिक होते हैं। अकार्बनिक तत्व हैं लवण, खनिज, आयन तथा पानी। मुख्यतः कार्बनिक यौगिक हैं कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, एमीनो ऐसिड, प्रोटीन, न्युक्लियोटाइड, न्यूक्लिक ऐसिड तथा विटामिन। अन्तःकोशिकीय तरल में कुछ कार्बनिक अणु कोलाइडी अवस्था में होते हैं। कुछ तत्व तरल रूप में नहीं होते जैसे लिपिड झिल्ली तथा कोशिका भित्ती। जन्तुओं के कोशिकीय कुंड में ऐसी रचना होती है जो बाह्य कोशिकीय तरल से भिन्न होती है। यह विभिन्नता प्लाज्मा झिल्ली की वरणात्मक पारगम्यता के द्वारा बनी रहती है। कुछ विशेष अणुओं के आवागमन के कारण कोशिका इस कुंड को बनाए रखती है। कोशिकीय कुंड कोशिका की रचना तथा कार्य के लिए पदार्थ प्रदान करता है।

कोशिकीय कुंड में पाए जाने वाले छोटे अणुओं का अणु भार कम होता है, सरल अणु की संरचना होती है तथा प्रायः अधिक घुलनशील होते हैं। ऐसे अणु हैं — खनिज, पानी, ऐमीनो ऐसिड, शक्कर, लिपिड तथा न्यूक्लियोटाइड।। छोटे-छोटे अणुओं के संगठन से बड़े-बड़े अणु जैसे प्रोटीन, न्यूक्लिक ऐसिड तथा कुछ पालिसैकेराइड बनते हैं। इनकी रचना तथा कार्य के विषय में आप अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

कार्बोहाइड्रेट

कार्बोहाइड्रेट हमारे भोजन का मुख्य अवयव है। आप जानते हैं कि कार्बोहाइड्रेट शरीर के लिये ऊर्जा

का मुख्य स्रोत है। ये क्या यौगिक हैं? कार्बोहाइड्रेट कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन का यौगिक है। कार्बोहाइड्रेट में कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन का अनुपात वही होता है जो पानी में होता है। इसका सूत्र $C_nH_{2n}O_n$ है। कार्बोहाइड्रेट में एक से अधिक OH वर्ग होते हैं। प्रकाश संश्लेषण के समय हरे पौधे कार्बोहाइड्रेट बनाते हैं। पौधे के शुष्क भार का 80 प्रतिश्रुत भाग कार्बोहाइड्रेट है।

कार्बोहाइड्रेट को सैकेराइड अथवा शक्कर वाला यौगिक कहते हैं। सरल कार्बोहाइड्रेट सरल शक्कर अथवा मोनोसैकेराइड है जिसका सामान्य सूत्र है $C_nH_{2n}O_n$। इसका छोटे-छोटे कार्बोहाइड्रेटों में हाइड्रोजनीकरण नहीं हो सकता है। मोनोसैकेराइड में कार्बन के 3 से 7 परमाणु होते हैं। उनका वर्गीकरण कार्बन के परमाणु की संख्या के आधार पर करते हैं। मोनोसैकेराइड जिसमें कार्बन के परमाणु की संख्या 3, 4, 5, 6 तथा 7 हो, तो उन्हें क्रमशः ट्रायोस ($C_3H_6O_3$), टेट्रोस ($C_4H_8O_4$), पैन्टोस ($C_5H_{10}O_5$), हैक्सोस ($C_6H_{12}O_6$) तथा हैप्टोज ($C_7H_{14}O_7$) कहते हैं। हैक्सोस तथा पैन्टोस दोनों में ही खुली शृंखला तथा छल्लेदार होती है (चित्र 5.1)। ग्लूकोस, फ्रैक्टोस तथा गेलैक्टोस हैक्सोस के उदाहरण हैं। ये सभी सफेद क्रिस्टली, स्वाद में मीठे पदार्थ, पानी में अधिक घुलनशील होते हैं। राइबोस पैन्टोस (चित्र 5.1) तथा ग्लिसरैल्डीहाइड तथा डाइहाइड्रोक्सी एसिटोन ट्रायोस हैं। ये यौगिक कोशिका के उपापचन में बहुत महत्वपूर्ण हैं। आप इनके विषय में विस्तार से बाद में पढ़ेंगे। जन्तुओं में ग्लूकोस एक महत्वपूर्ण शर्करा है। फलों में फ्रैक्टोस सामान्य शर्करा है। डिआक्सीराइवोस न्यूक्लिक अम्ल में पाई जाने वाली डीआक्सीराइवोस पैन्टोस शर्करा है (चित्र 5.2)।

मोनोसैकेराइड के दो महत्वपूर्ण रासायनिक गुण हैं। जिस शक्कर में *एल्डीहाइड* तथा *कीटोनी* वर्ग होता है वह Cu^{++} को Cu^{+} में बदल सकते हैं। ऐसी शक्कर को *अपचायी शक्कर* कहते हैं। इसी गुण के आधार पर बैन्डिक्ट तथा फैहलिंग परीक्षण से मूत्र में ग्लूकोस का पता लगा सकते हैं। मोनोसैकेराइड के एल्डीहाइडी तथा कीटोनी वर्ग दूसरे कार्बनिक यौगिकों के एल्कोहलिक वर्ग से क्रिया करके दोनों यौगिकों को जोड़ देते हैं। इस आबन्ध को *ग्लाइकोसीडिक आबन्ध* कहते हैं। आबन्ध के जल-अपघटन द्वारा पुराना यौगिक प्राप्त किया जा सकता है।

ग्लाइकोसीडिक आबन्ध द्वारा दो मोनोसैकेराइड को जोड़ कर यौगिक कार्बोहाइड्रेट प्राप्त कर सकते हैं (चित्र 5.3)। *यौगिक कार्बोहाइड्रेट* पर ऐसिड अथवा एंजाइम द्वारा जल-अपघटन की क्रिया करके मोनोसैकेराइड प्राप्त कर सकते हैं। यौगिक कार्बोहाइड्रेट के दो मुख्य वर्ग हैं — ओलिगोसैकेराइड जिसमें मोनोसैकेराइड के कुछ अणु

विवृत शृंखला — वलयाकार
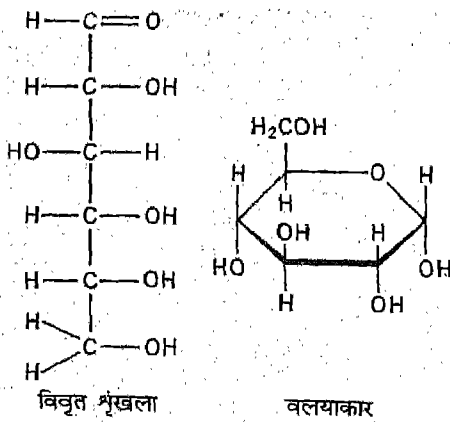
ग्लूकोस (C_6)
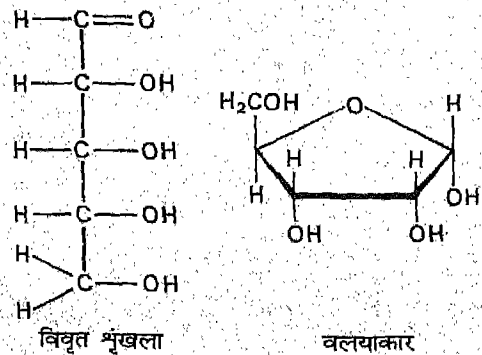
विवृत शृंखला — वलयाकार

राइबोस (C_5)

चित्र 5.1 मोनोसैकेराइड की विवृत शृंखला तथा वलयाकार
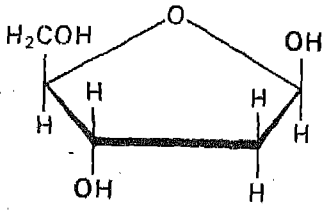
चित्र 5.2 डी. एन. ए. में स्थित डिआक्सीराइबोस का वलयाकार।
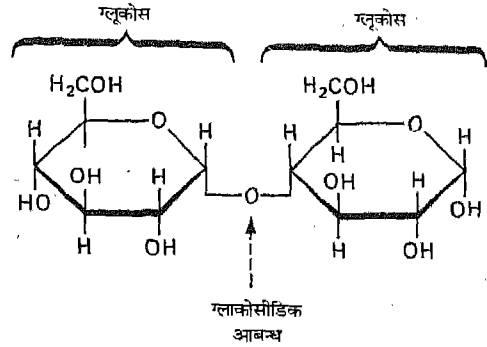
चित्र 5.3 माल्टोज, एक डाइसैकेराइड जो ग्लूकोस के दो अणुओं से बनता है।

होते हैं तथा *पालिसैकेराइड* जिसमें सरल शक्कर के सैकड़ों अणु होते हैं। आप पालिसैकेराइड के विषय में अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

डाइसैकेराइड में दो मोनोसैकेराइड होते हैं। सुक्रोज़ के एक अणु में एक ग्लूकोस का तथा एक अणु फ्रैक्टोस का होता है। सुक्रोज़ Cu^{++} को Cu^{+} में अपचयित नहीं कर सकता लेकिन यदि ग्लूकोस तथा फ्रैक्टोस प्राप्त करने के लिए इसका जल-अपघटन किया जाए तो जल-अपघटित घोल में शक्कर होती है। इसकी जांच बैन्डिक्ट घोल द्वारा कर सकते हैं। गन्ने तथा चुकन्दर में सुक्रोज़ एकत्र रहता है। मनुष्य तथा गाय के दूध में लैक्टोज़ होता है। इसमें एक अणु ग्लूकोस का तथा एक अणु गेलैक्टोस का होता है। मांडीय बीजों के अंकुरण के समय ग्लूकोस के दो अणुओं से माल्टोज बनता है (चित्र 5.3)। प्रकृति में पाई जाने वाली शर्करा में फ्रैक्टोस सबसे मीठा होता है। कोशिका भित्ती में बहुत बड़ा ओलिगो सैकेराइड होता है जो शखित हो सकता है।

छोटे कार्बोहाइड्रेट के कार्य : अपचयन क्रिया में छोटे कार्बोहाइड्रेट विशेषतः मोनोसैकेराइड का एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रकाश संश्लेषण में ट्रायोस, पैन्टोस तथा हैप्टोस मध्यवर्ती यौगिक हैं जिनसे बाद में हैक्सोज (ग्लूकोज) बनता है। प्रत्येक जीवित कोशिका में श्वसन से ग्लूकोस टूट जाता है और ऊर्जा निकलती है। बहुत से जन्तुओं में रुधिर शर्करा ग्लूकोस ही होती है। कोशिकाएँ रुधिर से शर्करा लेती हैं और उसे आक्सीकृत करके ऊर्जा प्राप्त करती हैं। स्तन ग्रन्थियाँ ग्लूकोस तथा गेलैक्टोज से दूध का लैक्टोज बनाती हैं। राइबोस तथा डिआक्सीराइबोस न्यूक्लिक एसिड तथा न्यूक्लिओटाइड अवयव हैं। ग्लूकोस का उपयोग वसा तथा ऐमीनोऐसिड के संश्लेषण में होता है मोनोसैकेराइड की बहुलता से यौगिक कार्बोहाइड्रेट बनता है ये रचनात्मक पालिसैकेराइड जैसे सैल्यूलोज तथा पादप कोशिका भित्ती के लिग्नो सैल्यूलोज, झिल्ली के ओलिगो सैकेराइड अथवा खाद्य संग्रह पालिसैकेराइड जैसे स्टार्च तथा ग्लाइकोजन होते हैं।

लिपिड

आप अपने प्रतिदिन के जीवन में लिपिड से परिचित नहीं होंगे। लेकिन आप खाद्य तेल, मक्खन, घी, मोम, प्राकृतिक रबर तथा कोलस्ट्रॉल को जानते होंगे। ये सभी पदार्थ या तो लिपिड हैं या लिपिड बाहुल्य हैं। कोशिका झिल्ली, पादप वर्णक गाजर में पाया जाने वाला कैरोटीन, टमाटर में पाया जाने वाला लाइकोपिन, विटामिन ए, ई तथा के, मैथोल तथा यूक्लिप्ट्स तेल सभी इसी वर्ग में आते हैं। लिपिड की रचना विभिन्न होती है लेकिन उनके कुछ सामान्य गुण समान होते हैं। उन में कार्बन, हाइड्रोजन तथा कभी-कभी आक्सीजन पाई जाती है। लिपिड में कार्बन की अपेक्षा आक्सीजन के परमाणुओं की संख्या हमेशा कम होती है। कभी-कभी इसमें फास्फोरस, नाइट्रोजन तथा गंधक की भी कुछ मात्रा होती है। लिपिड पानी में नहीं घुलती है लेकिन यह अध्रुवी घोलक जैसे क्लोरोफोर्म तथा बेन्जीन में घुल जाती है।

वसीय एसिड कार्बनिक एसिड होते हैं। इसमें हाइड्रोकार्बन की एक शृंखला होती है और इसके सिरे पर कार्बोक्सिल वर्ग (COOH) होता है (चित्र 5.4)। यदि कार्बन के बीच दो आबंध न हों तो वसीय एसिड को *संतृप्त* कहते हैं। जैसे पामिटिक एसिड (16C) तथा स्टैरिक एसिड (18C)। असंतृप्त वसीय एसिड में शृंखला के कार्बन के बीच दो आबन्ध होते हैं। 18 कार्बन वाले असंतृप्त एसिड जैसे ओलिक,

लिनोलिक तथा लिनोलेनिक में क्रमश : 1, 2, तथा 3 द्विगुणक आबन्ध होते हैं। असंतृप्त वसीय एसिड का गलनांक संतृप्त वसीय एसिड से कम होता है। लिपिड में वसीय एसिड प्राय एस्टर के रूप में होता है। जैसे एसिड तथा अम्ल क्रिया करके लवण बनाते हैं, उसी प्रकार कार्बनिक एसिड एल्कोहल से क्रिया करके एस्टर बनाते हैं।

$$CH_3\,(CH_2)_{16}\,COOH$$
स्टैरिक एसिड
$$CH_3\,(CH_2)_7\,CH = CH\,(CH_2)_7\,COOH$$
ओलिक एसिड
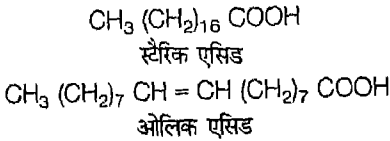
चित्र 5.4 संतृप्त तथा असंतृप्त वसीय एसिड।

चित्र 5.5 एक ट्राइग्लिसराइड वसा।

वसा वसीय एसिड तथा ग्लिसरोल (ग्लिसरीन) के एस्टर हैं (चित्र 5.5)। ग्लिसरोल का प्रत्येक अणु वसीय अम्ल के तीन अणुओं से क्रिया कर सकता है। ग्लिसरोल के अणु से जुड़ने वाले वसीय अम्ल के अणुओं की संख्या के आधार पर एस्टर मोनो-, डाइ- अथवा ट्राई-ग्लिसराइड हो सकते हैं। जो वसा सामान्य तापक्रम पर सरल हो उसे *तेल* कहते हैं। तेल असंतृप्त वसीय एसिड हैं और इनका ग्लनांक कम होता है जैसे मूंगफली का तेल, रेपसीड तथा सरसों का तेल, तिल का तेल तथा सैफ्लावर तेल। आपने वनस्पति तेलों के विज्ञापनों के विषय में पढ़ा होगा जो बहुअसंतृप्त होने का दावा करते हैं। इसका अर्थ यह है कि इन तेलों में स्थित वसीय एसिडों में एक से अधिक द्विगुणित आबन्ध होते हैं। डाक्टर ऐसे तेलों को खाने की सिफारिश ऐसे लोगों को करते हैं जिनका रुधिर में कोलस्ट्रॉल बढ़ गया हो या जो हृदय की किसी बीमारी से पीड़ित हों। ऐसा इसलिए है कि बहुअसंतृप्त वसीय एसिड का अनुपात संतृप्त वसीय एसिड की अपेक्षा बढ़ाने से खाने में वसा की मात्रा बढ़ाए बिना रुधिर के कोलस्ट्राल की मात्रा को कम किया जा सकता है। हाइड्रोजनीकरण से असंतृप्त एसिड संतृप्त एसिड में बदल जाते हैं और तेल ठोस वसा (वनस्पति तथा मारजेरिन) बन जाता है।

मोम लिपिड का एक अन्य वर्ग है। यह वसीय एसिड तथा एल्कोहल की लम्बी शृंखला से मिलकर बनता है। संरक्षण में मोम बहुत महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह जन्तुओं की खाल तथा बालों एवं पौधों की पत्तियों, फलों तथा तनों पर पानी में न घुलने वाली एक परत बनाता है।
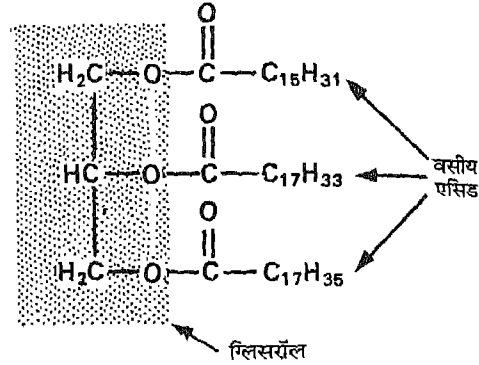
कोशिका में और भी अन्य प्रकार के लिपिड होते हैं। इनमें सामान्य है *फास्फोलिपिड।* इस लिपिड में न केवल वसीय एसिड तथा एल्कोहल होते हैं बल्कि फास्फेट भी होता है। इसीलिए इसे फास्फोलिपिड कहते हैं। कुछ फास्फोलिपिड में नाइट्रोजनी यौगिक जैसे कोलाइन भी होता है। फास्फोलिपिड में ध्रुवीय वर्ग का जलरागी तथा अध्रुवीय का जलभीत दोनों ही होते हैं। वसीय एसिड की हाइड्रोकार्बन शृंखलाएँ अणु की *अध्रुवीय पूँछ* हैं। फास्फेट तथा नाइट्रोजनी/अनाइट्रोजनी वर्ग अणु का *ध्रुवीय सिर* बनाते हैं (चित्र 5.6)। जलीय माध्यम में बहुत से फास्फोलिपिड अणु दोहरी परत में सजे रहते हैं। (चित्र 5.7)। इससे ध्रुवीय अथवा अध्रुवीय वर्गों का पता लग जाता है। लिपिड की दोहरी परत कोशिका झिल्ली की एक इकाई है (अध्याय 8 देखें)। लिपिड का दूसरा वर्ग *ग्लाकोलिपिड* है। इसमें एक या एक से अधिक सरल शर्करा होती है।

उपरोक्त लिपिड मुख्यतः सीधी सरल शृंखला वाले यौगिक हैं। लिपिड का एक तीसरा वर्ग भी होता है जो सीधी सरल शृंखला वाला यौगिक नहीं है। ऐसे यौगिक को *स्टेरॉल* कहते हैं। आपने कोलेस्टेरॉल के विषय में सुना होगा। यह मनुष्य के शरीर में होता है। स्टेरॉल में हाइड्रोकार्बन छल्ले तथा
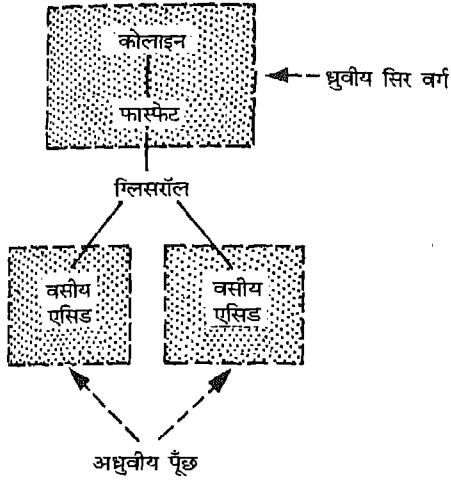
चित्र 5.6 एक फास्फोलिपिड अणु (लैक्टिन) जिसमें ध्रुवीय सिर वर्ग तथा अध्रुवीय पूँछ दिखाई गई है।
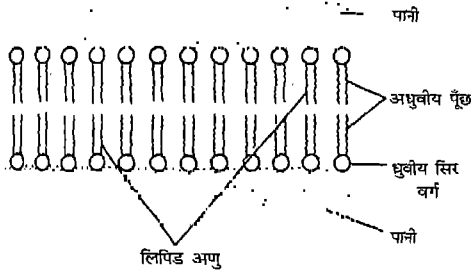
चित्र 5.7 जलीय माध्यम में लिपिड की दोहरी सतह।
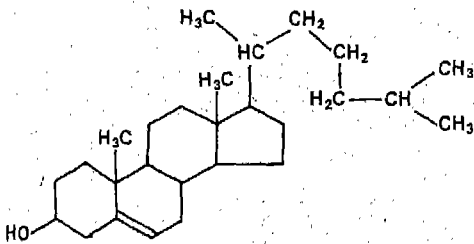
चित्र 5.8 कोलेस्टरॉल

हाइड्रोकार्बन की एक लम्बी पार्श्व शृंखला होती है। कोलेस्टेरॉल (चित्र 5.8) केवल जन्तुओं में पाया जाता है। यह या तो मुक्त अवस्था में होता है या वसीय एसिड के साथ *कोलेस्टेरॉल एस्टर* के रूप में पाया जाता है। कोलेस्टेरॉल हार्मोन जैसे प्रोजेस्टरॉन, टेस्टोस्टीरॉन, एस्टराडिओल तथा कोर्टीसोल का पूर्वगामी भी है। कोलेस्टेरॉल और इसके एस्टर पानी में नहीं घुलते हैं। इसलिए यदि रुधिर में इनकी मात्रा बढ़ जाए तो ये शिराओं तथा धमनियों में जम जाते हैं। इससे उच्चरक्त चाप तथा हृदय रोग हो जाते हैं। अन्य स्टेरॉयड यौगिक हैं *डायोसजेनिन* जिसे यैम (डाइआस्कोरिया) नामक पौधे से बनाया जाता है। इसका उपयोग निरोधक गोलियाँ बनाने में किया जाता है।

लिपिड के कार्य : पौधों तथा जन्तुओं दोनों में वसा एकत्र रहती है। तेलीय बीजों जैसे मूंगफली, सरसों, गोला तथा अरंड में वसा एकत्र रहती है जो अंकुरण के समय भ्रूण को भोजन प्रदान करती है। इन बीजो से निकले तेल का उपयोग भोजन बनाने तथा अन्य कामों में किया जाता है। जन्तुओं में वसा की बूँदें *एडिपोसाइट* पर होती हैं। मनुष्य के लिए वसा ऊर्जा प्रदान करने का सांद्रित संसाधन है। आवश्यकतानुसार ऊर्जा प्राप्त करने के लिए इसका आक्सीकरण होता है। त्वचा के नीचे तथा अन्य अंगों के चारों ओर वसा स्थित होने के कारण शरीर में गर्मी की हानि नहीं हो पाती तथा बाहरी चोट से भी बचाव रहता है।

फास्फोलिपिड, ग्लाइकोलिपिड तथा स्टेरॉल मुख्यतः रचनात्मक लिपिड हैं। ये झिल्ली के मुख्य अवयव हैं। जन्तुओं में कोलेस्टेरॉल मुख्य स्टेरॉल हैं। यह जन्तु कोशिका झिल्ली को बनाता है तथा इसका उपयोग स्टेरॉइड हार्मोन, विटामिन डी तथा पित्त लवण बनाने में भी होता है।

ऐमीनो एसिड

वृद्धि तथा विकास के लिए प्रोटीन बहुत आवश्यक है। प्रोटीन ऐमीनो एसिड का दीर्घ अणु है। पौधे तथा कुछ सूक्ष्मजीव अकार्बनिक नाइट्रोजन से ऐमीनो एसिड बना सकते हैं (इकाई 5 देखें)। लेकिन जन्तु

अकार्बनिक नाइट्रोजन का उपयोग नहीं कर सकते। इसलिए वे आवश्यक ऐमीनो प्राप्त करने के लिये प्रत्यक्ष (शाकाहारी) तथा परोक्ष (मांसाहारी) पौधों पर निर्भर करते हैं।

ऐमीनो एसिड एक छोटा अणु है जिसमें कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन तथा नाइट्रोजन तथा कुछ गंधक भी होते हैं। वे मोनोकार्बोक्सलिक (एक ऐमीनोवर्ग) अथवा डाइ-कार्बोक्सलिक (दो ऐमीनो वर्ग) होते हैं। ''ए''-कार्बन ''सी'' - कार्बोक्सिल से आगे होता है। ऐमीनो एसिड के ए-कार्बन की चार संयोजकता में प्राय : एक ऐमीनो वर्ग (NH_2), एक कार्बोक्सिल (COOH) वर्ग, एक हाइड्रोजन परमाणु तथा एक पार्श्व शृंखला (चित्र 5.9) होती है। पार्श्व शृंखला ध्रुवीय या अध्रुवीय (चित्र 5.10) हो सकती है।
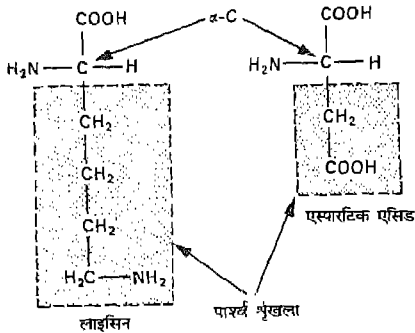
चित्र 5.9 क्षारीय तथा अम्लीय ऐमीनो एसिड की पार्श्व शृंखला।

COOH — H_2N—C—H — CH_3
एलेनिन (अध्रुवीय)

COOH — H_2N—C—H — CH_2 — CH_2 — COOH
ग्लूटामिक एसिड
(ध्रुवीय)

COOH — H_2N—C—H — H_2COH
सैराइन
(ध्रुवीय)
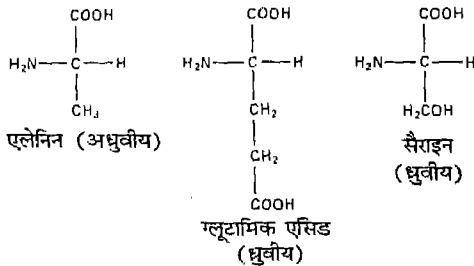
चित्र 5.10 ध्रुवीय तथा अध्रुवीय ऐमीनो एसिड के उदाहरण।

एक मूल ऐमीनो वर्ग क्षारीय होता है तथा एक मुक्त कार्बोक्सिल वर्ग अम्लीय होता है। लाइसीन तथा आरजीनीन *क्षारीय ऐमीनो एसिड* हैं क्योंकि इनमें दो ऐमीनो वर्ग तथा एक कार्बोक्सिल वर्ग होता है (चित्र 5.9)। ग्लुटामिक एसिड (ग्लुटामेट) तथा ऐस्पार्टिक एसिड (ऐस्पारटेट) में एक ऐमीनो वर्ग तथा दो कार्बोक्सिल वर्ग होते हैं इसलिए इन्हें *अम्लीय एमीनो एसिड* वर्ग में रखते हैं। ऐलेनीन, ग्लाइसिन, वेलाइन तथा फिनाइलऐलेनीन *उदासीन ऐमीनो एसिड* हैं क्योंकि इनमें एक ऐमीनो तथा एक कार्बोक्सिल वर्ग होता है।

प्रोटीन में पाए जाने वाले ऐमीनो एसिड की सूची
ग्लाइसिन, ऐलेनीन, सैराइन, सिस्टीन, ऐस्पार्टिक एसिड, ग्लुटामिक ऐसिड, ऐस्पेराजिन, ग्लुटामिन, मिथोओनीन, थ्रिओनीन, वेलाइन, ल्यूसिन, आइसोल्यूसिन, लाइसिन, हिस्टोडिन, आरजीनीन, फिनायलऐलानीन, टायरोसिन, ट्रिप्टोफेन, तथा प्रोलाइन।

पेप्टाइड आबन्ध से दो ऐमीनो एसिड जुड़े रहते हैं। इस प्रकार बहुत से ऐमीनो एसिड *पेप्टाइड आबन्ध* से जुड़कर एक लम्बी शृंखला बना देते हैं (चित्र 5.11)। यदि थोड़े एमीनो एसिड जुड़े हैं तो उसे पेप्टाइड कहते हैं। प्रोटीन एक दीर्घ अणु है जिसमें बहुत से ऐमीनो एसिड होते हैं। वे ऐमीनो एसिड छोटे पेप्टाइड से कई गुणों में भिन्न होते हैं। आप प्रोटीन की रचना तथा कार्य के बारे में विस्तार से अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

एमीनो एसिड के कार्य : प्रोटीन की इकाई होने के अतिरिक्त कुछ विशेष एमीनो एसिड विभिन्न जैविक सक्रिय यौगिक भी बनाते हैं। उदाहरण के लिए, टायरोसिन थायरोक्सिन, एड्रानलिन, तथा त्वचा वर्णक मैलानिन में परिवर्तित हो जाता है। ग्लाइसिन हीम बनाने में अपना योगदान देता है और ट्रिप्टोफेन विटामिन निकोटिनामाइड तथा पादप हार्मोन इन्डोल-3-एसीटिक एसिड बनाने में योगदान देता है। ऐमीनो वर्ग निकाल देने के बाद बहुत से एमीनो एसिड की कार्बन की शृंखला से ग्लुकोस बन जाता है। कार्बोक्सिल ग्रुप को कार्बन डाइआक्साइड के रूप में निकालने से ऐमीनो एसिड से जैव सक्रिय ऐमीनो जैसे हिस्टामीन बनते हैं।
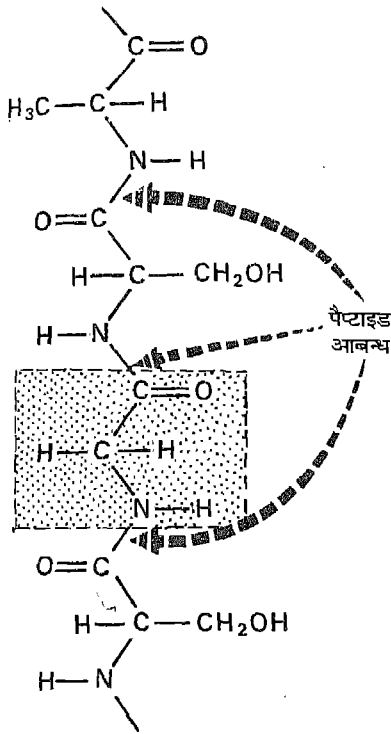
चित्र 5.11 ऐमीनो एसिड के पैप्टाइड आबन्धों को दिखाने के लिए पैप्टाइड का एक भाग। एक ऐमीनो एसिड को बाक्स में दिखाया गया है।

न्यूक्लिओटाइड

यह छोटे जटिल अणुओं का समूह है जो कोशिका में सूचना प्रसारण का कार्य करता है। यह न्यूक्लिक एसिड की इकाई होती है। यह ऊर्जा स्थानांतरण तंत्र में भी भाग लेता है।

न्यूक्लिओटाइड में कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन तथा फास्फोरस होता है। प्रत्येक न्यूक्लिओटाइड में एक चक्रीय नाइट्रोजनी क्षार, एक पेन्टोज तथा एक से तीन फास्फेट वर्ग होते हैं। न्यूक्लिओटाइड में स्थित नाइट्रोजनी क्षार में या तो प्यूरिन होता है या पिरिमिडीन होता है। मुख्य प्यूरीन हैं एडीनीन तथा ग्वानीन। मुख्य पिरिमिडीन हैं थायमीन, साइटोसिन तथा यूरेसिल (चित्र 5.12)। राइबोस अथवा डिआक्सी राइबोस, पेन्टोज है। इसलिए न्यूक्लिओटाइड को राइबोन्यूक्लिओटाइड अथवा

एडेनीन प्यूरिन गुयानीन

साइटोसीन यूरेसिल थायमीन
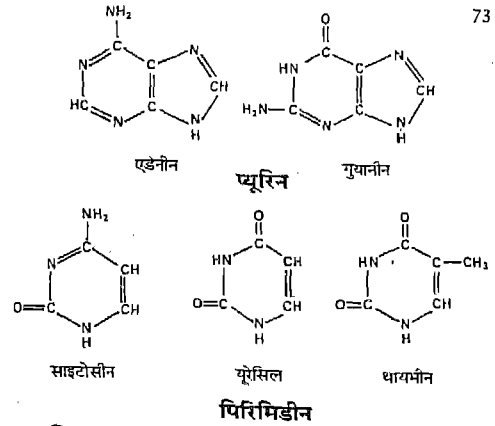
पिरिमिडीन

चित्र 5.12 कुछ प्यूरिन तथा पिरिमिडीन क्षार।

डिआक्सी राइबोन्यूक्लिओटाइड कहते हैं। इनके क्रमशः उदाहरण हैं ऐडेनिलिक एसिड (AMP) तथा डिआक्सी ऐडेनिलिक एसिड (d - AMP)। राइबोन्यूक्लिक एसिड (RNA) की इकाई राइबोन्यूक्लिओटाइड तथा डिआक्सी राइबोन्यूक्लिक एसिड (DNA) की इकाई डिआक्सी राइबोन्यूक्लिओटाइड होती है। पेन्टोज शक्कर तथा नाइट्रोजनी क्षार मिलकर *न्यूक्लिओसाइड* बनाते हैं। उदाहरण के लिए ऐडिनोसिन एक न्यूक्लिओसाइड है जिसमें ऐडेनीन तथा राइबोस होता है। इसलिए न्यूक्लिओटाइड को *राइबोन्यूक्लिओटाइड* तथा *डिआक्सीराइबोन्यूक्लिओटाइड* कहते हैं।

न्यूक्लिओटाइड न्यूक्लिओसाइड के मोनो-,डाइ- अथवा ट्राइफास्फेट हैं। उदाहरण के लिए ऐडेनिलिक एसिड अथवा ऐडिनोसिन मोनोफास्फेट (AMP), ऐडिनोसिन डाइ-फास्फेट (ADP) तथा ऐडिनोसिन ट्राइ फास्फेट (ATP) सभी ऐडेनीन न्यूक्लिओटाइड हैं। न्यूक्लिओटाइड जिसमें एक से अधिक फास्फेट हो, उसे उच्च न्यूक्लिओटाइड कहते हैं। जैसे ए.टी.पी. तथा ए.डी.पी. (चित्र 5.13)। इसी प्रकार अन्य प्यूरिन तथा पिरिमिडीन भी उच्च न्यूक्लिओटाइड बना सकते हैं।

प्यूरिन तथा पिरिमिडिन के उच्च न्यूक्लिओटाइड मुक्त अवस्था में होते हैं। जैसे ए.टी.पी. तथा ए.डी.पी.। उनका तीसरा तथा दूसरा फास्फेट आबन्ध प्रति अणु जलअपघटन होने पर लगभग 8 कि० कै० अथवा अधिक मुक्त ऊर्जा देता है। यह ऊर्जा सहसंयोजी आबन्ध के जल अपघटन होने से कई

गुना अधिक है। इसलिए उच्चतर न्यूक्लिओटाइड के फास्फेट आबन्ध को *उच्च ऊर्जा वाला* आबन्ध कहते हैं (चित्र 5.13)।

निकोटिनएमाइड तथा राइबोफ्लेविन विटामिन के न्यूक्लिओटाइड (तालिका 5.1) मुक्त अथवा विशेष प्रोटीन से संयुक्त होते हैं। वे न्यूक्लिक एसिड बनाने में भाग नहीं लेते। बल्कि वे आक्सीकारक एंजाइम के साथ कोशिका में आक्सीकरण प्रक्रिया में भाग लेते हैं।

न्यूक्लिओटाइड के कार्य: प्यूरीन तथा पिरिमिडीन न्यूक्लिओटाइड बहुलकीकरण द्वारा न्यूक्लिक एसिड बनाते हैं। उच्चतर प्यूरीन तथा पिरिमिडीन न्यूक्लिओटाइड, विशेषतः ए. टी. पी. अपने फॉस्फेटी आबन्ध में ऊर्जा संचित करते हैं। ये प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन क्रियाओं में बनते हैं। ए टी पी के फॉस्फेटी आबन्ध के जल अपघटन से ऊर्जा निकलती है जो ऊर्जा पर आश्रित क्रियाओं तथा प्रक्रियाओं को सम्पन्न करती है। निकोटिन एमाइड तथा राइबोफ्लेविन ऑक्सीकारक एंजाइम के सहएंजाइम हैं।
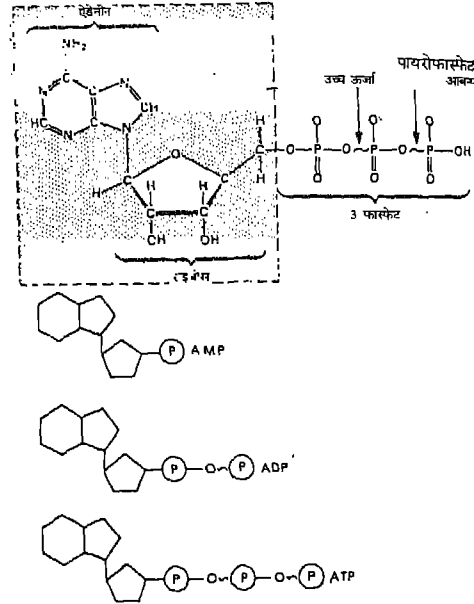
चित्र 5.13 ऐडेनीन के राइबोन्यूक्लिओटाइड — उच्च ऊर्जा आबन्ध को दिखाते हैं।

तालिका 5.1

निकोटिनएमाइड तथा राइबोफ्लेविन न्यूक्लिओटाइड

विटामिन	न्यूक्लिओटाइड	घटक
निकोटिनएमाइड	निकोटिनएमाइड ऐडेनीन डाइ न्यूक्लिओटाइड अथवा NAD⁺	निकोटिनएमाइड - राइबोस फास्फेट-फास्फेट - राइबोस एडेनीन
	निकोटिनएमाइड ऐडेनीन डाइ न्यूक्लिओटाइड फास्फेट अथवा NADP⁺	निकोटिनएमाइड - राइबोस - फास्फेट - फास्फेट - फास्फोराइबोस - ऐडेनीन
राइबोफ्लेविन	फ्लेविन मोनोन्यूक्लिओटाइड अथवा FMN	राइबोफ्लेविन - फास्फेट
	फ्लेविन ऐडेनीन डाइन्यूक्लिओटाइड अथवा FAD	राइबोफ्लेविन - फास्फेट-फास्फेट राइबोस - ऐडेनीन।

खनिज लवण

सजीवों में खनिज लवण कार्बनिक तथा अकार्बनिक अणुओं तथा आयनों के घटक के रूप में होते हैं। शरीर के सारे तरल से आयन के रूप में स्थित खनिज लवण की मात्रा तथा जटिल रूप में पाये जाने वाले लवण की मात्रा में संतुलन रहता है। जन्तुओं के शरीर में पाए जाने वाले मुख्य लवण हैं — कैल्सियम, फास्फोरस, सोडियम, क्लोरीन, मैग्नीशियम तथा सल्फर। कुछ अन्य खनिज जिनकी मात्रा कम होती है वे हैं — लोहा, ताँबा, कोबाल्ट, मैंगनीज, मॉलिबडेनम, जस्ता, फ्लोरीन, आयोडीन तथा सेलीनीयम। पादप वृद्धि के लिए आवश्यक खनिज लवण वर्गों में विभक्त होते हैं। खनिज लवण जिनकी मात्रा अधिक चाहिए, उन्हें गुरूपोषक कहते हैं। गुरूपोषक हैं फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्सियम, मैग्नीशियम, सल्फर तथा लोहा। जो खनिज लवण

कम मात्रा में चाहिए उन्हें लघु पोषक कहते हैं। ये हैं — मैंगनीज़, कोबाल्ट, जस्ता, बोरान, ताँबा, मॉलिबडेनम तथा क्लोरीन। पादप पोषण के विषय में आप विस्तार से इकाई 5 में पढ़ेंगे। एक ही खनिज लवण कई विभिन्न कार्यों में भाग लेते है। उनके कार्यों तथा तत्वों का नीचे वर्णन किया गया है।

खनिज लवण जो कोशिका रचना के भाग हैं :

कोशिका रचना में बहुत से खनिज लवण काम आते हैं। सल्फरयुक्त एमीनो एसिड प्रोटीन के बनाने में भाग लेता है। कैल्सियम फास्फेट से मिलकर हड्डियों तथा दातों को ताकत देता है। हड्डियों में कैल्शियम तथा फास्फोरस की इतनी अधिक मात्रा होती है कि उसे उर्वरक के रूप में उपयोग करते हैं। अकशेरुकी में कैल्सियम कार्बोनेट बाह्य कंकाल बनाते हैं। जबकि मॉलस्क के कवच को जलाकर चूना बनाते हैं। पौधों में कैल्सियम पैक्टेट मध्य पट्टिका बनाता है। लिपिड तथा न्यूक्लिओटाइड बनाने में फास्फोरस की उपयोगिता का वर्णन पहले ही कर चुके हैं। मैग्नीशियम भी हड्डियों तथा दाँतों को मजबूत बनाने में सहायता करता है।

खनिज लवण जैव प्रक्रिया पदार्थों में भाग लेते हैं : तुम जानते हो कि लौह की कमी के कारण शरीर में अरक्तता हो जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि इससे हीमोग्लोबिन संश्लेषण नहीं हो पाता। लौह पोरफाइरिन नामक वर्णक से मिलकर हीम बनाता है। हीम विभिन्न प्रोटीनों से जुड़ जाता है और एक श्वसन वर्णक बनाता है जो श्वसन में सहायता करता है। इस वर्णक में ऑक्सीजन ले जाने वाले लाल रक्ताणु के वर्णक हीमोग्लोबिन तथा ऑक्सीजन को संचित करने वाले वर्णक पेशी कोशिकाओं के मायोग्लोबिन भी आते हैं। साइ-टोक्रोम हीम प्रोटीन के कॉम्प्लेक्स हैं। और ये ऑक्सीकारक एंजाइम का कार्य करते हैं। आप इसके विषय में विस्तार पूर्वक अध्याय 10 में दिये गये कोशिकीय श्वसन में पढ़ोगे। पादप वर्णक क्लोरोफिल मैग्नीशियम तथा पोरफाइरिन एवं लम्बी लिपिड पूंछ का काम्प्लेक्स हैं।

स्तन धारियों में आयोडीन अकार्बनिक आयोडाइड, रुधिर में प्रोटीन आबन्ध आयोडीन तथा थायरायड हार्मोन के रूप में पाई जाती है।

भोजन में आयोडीन की कमी होने के कारण थायरायड की क्रिया कम हो जाती है और थायरायड ग्रन्थि *(ग्वाइटर)* बढ़ जाती है। भारत में उत्तरी पहाड़ियों के क्षेत्र की मिट्टी में आयोडीन की कमी है। इसीलिए वहाँ पर पैदा होने वाली फसलों तथा पीने के पानी में भी आयोडीन की कमी पाई जाती है। इसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों में ग्वाइटर का रोग हो जाता है। इस रोग पर नियंत्रण पाने के लिए वहाँ आयोडीनयुक्त खाने का नमक दिया जाता है।

खनिज लवण तथा एंजाइम क्रिया : एंजाइम क्रिया में खनिज लवण की मात्रा ट्रेस में ही चाहिए। उदाहरण के लिए ओलीगोसैकेराइड तथा ग्लाइकोप्रोटीन बनाने में एंजाइम की क्रिया के लिए मैंगनीज़ की आवश्यकता होती है। माइटोकॉन्ड्रिया में मैंगनीज़ बहुत अधिक होता है। नाइट्रोजिनेज द्वारा नाइट्रोजन स्थिरीकरण में मॉलिबडेनम आवश्यक है। साइटोक्रोम ऑक्सिडेस में ताँबा होता है। बहुत से एंजाइम विशेषतः जो ए.टी.पी. का उपयोग करते हैं, उन्हें मैग्नीशियम की आवश्यकता होती है।

खनिज लवण के अन्य कार्य : सोडियम तथा पोटेशियम शरीर में तरल की मात्रा का संतुलन बनाए रखते हैं। बाह्य कोशिकीय तथा अन्तः कोशिकीय तरल पदार्थ का आयतन इन्हीं दोनों की सांद्रता के परासरण प्रभाव द्वारा बना रहता है। इन्हीं दोनों आयनों द्वारा झिल्ली विभव भी बना रहता है। आप इन दोनों कार्यों का विस्तृत वर्णन कोशिका झिल्ली में पढ़ेंगे। Na^+ तथा K^+ आयन तंत्रिका कोशिका में विद्युत संवेदन भी भेजते हैं। कैल्सियम तथा मैग्नीशियम तंत्रिकाओं तथा पेशियों की उत्तेजना को कम करते हैं। कोशिका तथा बाह्य कोशिका तरल में डाइवेसिक फास्फेट तथा मोनोवेसिक फास्फेट क्रमशः तेज अम्ल तथा क्षार को उदासीन कर देते हैं। इस प्रकार वे कोशिकीय तरल में हाइड्रोजन की सांद्रता को नियंत्रित करते हैं और *अम्लीय-क्षार बफर* के रूप में काम करते हैं।

पानी

जीवन के लिए पानी अद्‌भुत है। आपने अध्याय 2 तथा 3 में पानी के महत्व के विषय में पढ़ा है।

सजीवों में पानी की बहुत अधिक मात्रा होती है। मनुष्य में शरीर के पानी का लगभग 55 प्रतिशत (20-22 लीटर) भाग कोशिका में होता है। पानी का शेष भाग बाह्य कोशिकीय तरल जैसे रुधिर, ऊतक तरल तथा लिम्फ के रूप में होता है। पानी एक छोटा अणु है जो झिल्ली में से प्रवाह करता है।

सजीवों में पानी घोलक के रूप में कार्य करता है। बहुत से अणु हाइड्रोजन से आबन्धित होकर कुछ समय के लिए वृहदाणु बनाते हैं। *हाइड्रोजन आबन्ध* एक असह-संयोजी आबन्ध है। बहुत से पानी के परमाणु के हाइड्रोजन आबन्ध एक जालक सा बना देते हैं (चित्र 5.14)। पानी के परमाणुओं में हाइड्रोजन आबन्ध जल्दी-जल्दी टूटने तथा जुड़ने से तरलता बनी रहती है। पानी में घुलने के लिए किसी पदार्थ को पहले हाइड्रोजन आबन्धित होना पड़ता है। विलेय का जलरागी ध्रुवीय वर्ग ही पानी के साथ हाइड्रोजन आबन्ध बना सकता है। इस प्रकार ध्रुव अणु पानी के जाल से जुड़ता है और उसमें घुल जाता है। पानी की इस घोलक क्रिया के कारण ध्रुवीय घोलक जैसे ग्लुकोस घुल जाता है। यह विसरण विधि द्वारा कोशिका द्रव्य में एकसमान आ जाता है। यहाँ से यह बाह्य कोशिका तरल में स्थानान्तरित हो जाता है।

जलरागी का अध्रुवीय वर्ग पानी से नहीं जुड़ सकता। इसीलिए अध्रुवीय अणु जैसे वसा पानी में नहीं घुली। और वसा को ध्रुवीय अणु के साथ-साथ पानी में स्थानांतरित होना पड़ता है।

पानी अणु के स्वरूप को बनाए रखता है तथा सजीव पदार्थ के रचनात्मक संगठन को स्थिर रखता है। जलीय शरीर में तरल, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक एसिड कुंडलित हो जाते हैं और त्रिविम आकार का बन जाता है जो जैव प्रक्रियाओं के लिए अति उत्तम है। पानी तथा फास्फोरस लिपिड अणु में पारस्परिक क्रिया फास्पोलिपिड को झिल्ली की लिपिड की दोहरी परत में सजा देती है (चित्र 5.7)।
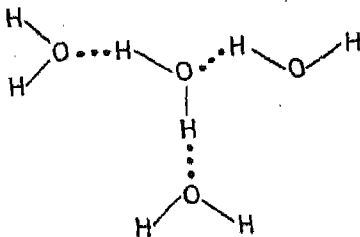
चित्र 5.14 पानी के अणु में हाइड्रोजन आबन्ध।

पानी से तापक्रम के अनुसार दो आयन H^+ तथा OH^- बनते हैं। प्रोटीन, न्यूक्लिक एसिड तथा फास्फोलिपिड पानी से लेने अथवा पानी को देने से एक विशेष आयनी अवस्था बनाते हैं। खनिज लवण का भी पानी की उपस्थिति में आयनीकरण होता है।

पानी एक अच्छा विलायक होने के कारण रासायनिक प्रक्रियाओं का एक उत्तम माध्यम है। विलेय अणु तथा आयन आपस में मिलकर एक दूसरे के बहुत समीप आ जाते हैं। पानी एक अभिकारक है और यह रासायनिक प्रक्रियाओं के लिए H^+ तथा OH^- प्रदान करने का अच्छा साधन है। प्रकाश संश्लेषण के समय पानी क्लोरोफिल को इलैक्ट्रान देता है और आक्सीकृत होकर आक्सीजन का अणु बनता है।

पानी से सजीव के शरीर में भीतरी वातावरण बना रहता है। कुछ पदार्थ जैसे बाइ-कार्बोनेट (HCO_3), कार्बोनिक एसिड, डाइबेसिक फास्फेट (HPO^{2}_{4}) तथा मोनो बेसिक फास्फेट (H_2PO_4) एसिड तथा क्षार को उदासीन कर सकते हैं। कोशिका द्रव्य तथा बाह्य कोशिका तरल में घोल के रूप में रह सकते हैं। एसिड तथा क्षार शरीर के तरल से मिलते हैं और तरल में पाए जाने वाले पदार्थों से क्रिया करके उदासीन हो जाते हैं। पानी में घोलक के गुण होने के कारण यह pH को बनाए रखते हैं। पानी की उच्च विशिष्ट ऊष्मा तथा गतिमान होने के कारण शरीर में ताप समान रूप से रहता है। त्वचा तथा पौधों की सतह से संवहन तथा विकिरण द्वारा पानी ऊष्मा की भी हानि करता है। पानी के वाष्पीकरण की उच्च गुप्त ऊष्मा अतिरिक्त ऊष्मा को पसीने का वाष्पीकरण करके निकालता है। इससे *शरीर का तापक्रम स्थिर रहता है।* मूत्र द्वारा अपशिष्ट पदार्थों के बाहर निकलने से होमियोस्टेसिस बना रहता है।

सारांश

कोशिका में छोटे अणु कार्बोहाइड्रेट जैसे मोनोसैकेराइड, लिपिड, ऐमीनो एसिड, न्यूक्लिओटाइड, खनिज लवण तथा पानी होते हैं। वृहदाणु हैं — पॉलिसैकेराइड, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक एसिड।

कोशिकाओं में ग्लूकोस ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। यह जन्तुओं के रुधिर शर्करा में भी होता है। इसका लैक्टोस, ग्लाइकोजन, स्टार्च, वसा तथा ऐमीनो एसिड बनाने में उपयोग होता है। राइबोस तथा डिआक्सीराइबोस न्यूक्लिओटाइड तथा न्यूक्लिक एसिड के निर्माण में आवश्यक हैं। मोनोसैकेराइड बहुलकी होकर रचनात्मक पॉलिसैकेराइड जैसे सैल्यूलोज तथा ओलीगोसैकेराइड बनाते हैं।

कोशिका में विभिन्न प्रकार के लिपिड पाए जाते हैं। वसा ग्लिसरॉल तथा लम्बी शृंखला वाले वसीय एसिड का ऐस्टर है। वसा में बहुत ऊर्जा संचित रहती है। असंतृप्त वसा का गलनांक संतृप्त वसा से कम होता है। फास्फोलिपिड तथा ग्लाइकोलिपिड में क्रमशः फास्फेट तथा कार्बोहाइड्रेट होता है। ध्रुवीय तथा अध्रुवीय वर्ग जलीय माध्यम में लिपिड की दोहरी परत पर फास्फोलिपिड की संज्ञा देते हैं। फास्फोलिपिड, ग्लाइकोलिपिड तथा स्टेरॉल रचनात्मक लिपिड हैं और झिल्ली के घटक हैं। स्टेरॉल से स्टेरायड हारमोन तथा विटामिन ''डी'' बनते हैं।

ऐमीनो एसिड में ऐमीनवर्ग तथा कार्बोक्सिलिक एसिड होता है। वे जुड़कर पेप्टाइड बनाते हैं। ऐमीनो एसिड की बहुलता के कारण से प्रोटीन बनता है। वे कुछ यौगिक जैसे ग्लुकोस, हिस्टानीन, कुछ जन्तु में पाए जाने वाले हारमोन, मेलानीन, हीम, निकोटिनएमाइड बनाते हैं।

न्यूक्लिओटाइड में नाइट्रोजन की क्षार, एक पैन्टोज तथा एक या अधिक फास्फेट वर्ग होते हैं। प्यूरिन तथा पिरिमिडीन बहुलकीकरण से डी.एन.ए. तथा आर.एन.ए. बनाते हैं। प्यूरिन तथा पिरिमिडीन के उच्चतर न्यूक्लिओटाइड में उच्च ऊर्जा वाले फास्फेटी आबन्ध होते हैं। जैव प्रक्रिया के लिए ऊर्जा ए.डी.पी. तथा ए.टी.पी से मिलती है। निकोटिनएमाइड तथा राइबोफ्लेविन के न्यूक्लिओटाइड कुछ आक्सीकृत एंजाइमों के सह-एंजाइम के रूप में कार्य करते हैं।

कोशिका के लिए कुछ खनिज लवण भी आवश्यक होते हैं। इनकी आवश्यकता रचनात्मक ढांचा बनाने अथवा जैव सक्रिय अणु के घटक के रूप में होती है। कैल्सियम तथा फास्फोरस के लवण हड्डियों, दांतों तथा बाह्य कंकाल में संचित रहते हैं जिसके कारण ये कठोर तथा शक्तिशाली होते हैं।

सोडियम तथा पोटेशियम शरीर में तरल के संतुलन को बनाए रखते हैं तथा तंत्रिका कोशिका में विद्युत संवेदनाओं का संवहन करते हैं।

मैग्नीशियम क्लोरोफिल में होता है। यह बहुत से एंजाइम की क्रिया के लिए आवश्यक है। लौह श्वसनी वर्णक जैसे हीमोग्लोबिन तथा मायोग्लोबिन का आवश्यक घटक है। आयोडीन थायरॉयड हारमोन के लिए आवश्यक है। मैंगनीज़ की आवश्यकता बहुत से एंजाइमों की क्रिया में होती है।

पानी ध्रुवीय अणु का घोलक है। वृहदाणु जैव सक्रिय संरूपण तथा झिल्ली की दोहरी लिपिड की परत पर फास्फोलिपिड का सजना, पानी पर ही निर्भर करता है। रासायनिक क्रिया के लिए पानी एक अच्छा माध्यम है। H^+ तथा OH^- प्रदान करके यह बहुत सी क्रियाओं में भाग लेता है। पानी शरीर के तरल में खनिज को आयन के रूप में रखता है। पानी का आयनीकरण होकर शरीर के तरल को हाइड्रोजन आयन प्रदान करता है।

प्रश्नावली

1. निम्नलिखित में से कौन सा भिन्न वर्ग से संबंध रखता है?
   (क) राइबोस, सुक्रोज, ग्लूकोस, फ्रैक्टोस
   (ख) स्टेरॉल, मोम, वसीय एसिड, ऐमीनो एसिड
   (ग) तेल, स्टेरॉल, मोम, वसा
   (घ) न्यूक्लिओटाइड, न्यूक्लिओसाइड, केन्द्रक, डी. एन. ए.
2. अन्तर लिखिए :
   (क) ओलीगोसैकेराइड तथा पॉलिसैकेराइड
   (ख) संतृप्त तथा असंतृप्त वसीय एसिड
   (ग) अपचय शक्कर तथा अनअपचय शक्कर
   (घ) न्यूक्लिओटाइड तथा न्यूक्लिओसाइड
3. स्तम्भ 1 को स्तम्भ 2 से मिलाइए :

(अ) *स्तम्भ 1*	*स्तम्भ 2*
(क) हैक्सोज	1. संतृप्त वसा
(ख) ए. टी. पी.	2. न्यूक्लिओसाइड
(ग) लैक्टोज	3. डाइसैकेराइड
(घ) वनस्पति	4. फ्रैक्टोस
(ङ) मैग्नीशियम	5. क्लोरोफिल
	6. न्यूक्लिओटाइड

(ब) *स्तम्भ 1*	*स्तम्भ 2*
(क) राइबोस	1. सुक्रोज
(ख) फ्रैक्टोस	2. कोलेस्टेरॉल
(ग) ग्लिसरॉल	3. न्यूक्लिक एसिड
(घ) ऐमीनो एसिड	4. वसीय एसिड
(ङ) कैल्सियम	5. प्रोटीन
	6. बाह्य कंकाल

4. निम्नलिखित कार्बोहाइड्रेट को सरल रासायनिक रचना के क्रम में लिखिए —
   फ्रैक्टोस, स्टार्च, ओलीगोसैकेराइड, माल्टोस, ट्रायोज
5. निम्नलिखित के प्राकृतिक स्रोतों तथा उनके घटक इकाइयों की सूची बनाइए —
   (क) सुक्रोज (ख) लैक्टोज (ग) ए. टी. पी. (घ) वसा
6. सजीवों में लिपिड के कार्य क्या हैं?
7. निम्नलिखित का वर्णन करिए —
   (क) लवण पानी में घुलते हैं।
   (ख) जलीय माध्यम की सतह पर फास्फोलिपिड एक पतली परत बनाते हैं।
   (ग) ऐमीनो एसिड क्षारीय हो सकते हैं।
8. तेल पानी में नहीं घुलता। इसका वैज्ञानिक वर्णन करिए।
9. जीवों में निम्नलिखित खनिज लवणों का महत्त्व बताइए —
   मैग्नीशियम, फास्फोरस, आयोडीन, सोडियम, लोहा
10. किसी सजीव के जीवन में पानी के महत्त्व को बताइए।
11. जन्तु की रचना को बनाए रखने के लिए खनिज लवणों का क्या महत्त्व है?
12. कोशिका उपापचयन में ए. टी. पी. का क्या कार्य है? चित्रों की सहायता से वर्णन करिए कि इसकी रचना किस प्रकार से कार्य करने में सक्षम है।

अध्याय 6

कोशिकीय वृहदणु

पिछले अध्याय में आपने छोटे अणुओं जैसे शक्कर, ऐमीनो एसिड तथा न्यूक्लिओटाइड के विषय में पढ़ा था। ये बहुलकीकरण से बड़े अणु वृहदणु बनाते हैं। जैव दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण वृहदणु हैं — पॉलिसैकेराइड, प्रोटोन तथा न्यूक्लिकएसिड। इन अणुओं का अणुभार बहुत अधिक होता है और ये शाखीय तथा अशाखीय होते हैं।

पॉलिसैकेराइड

पॉलिसैकेराइड मोनोसैकेराइड के बहुलक हैं। ये शाखीय तथा **अशाखीय** लम्बी अणु श्रृखंला हैं। स्टार्च, सैल्यूलोस तथा ग्लाइकोज़न में एक प्रकार का मोनोसैकेराइड-ग्लूकोस (चित्र 6.1) होता है। अन्य कुछ जैसे ऐगार में एक से अधिक प्रकार के मोनोसैकेराइड होते हैं। पॉलिसैकेराइड कार्य के आधार पर दो प्रकार के होते हैं।

भोजन-संचित पॉलिसैकेराइड

स्टार्च मुख्यतः चावल, गेहूँ तथा अन्य दाने वाली फसलों, लेग्यूम (फलियों), आलू, टैपिओका तथा केले में होता है (चित्र 6.2)। यह प्रकाश संश्लेषण के समय बनता है तथा ऊर्जा देने के लिए संचित रहता है। स्तनधारियों में ग्लूकोजन यकृत तथा पेशियों में ऊर्जा देने के लिए संचित रहता है। पॉलिसैकेराइड के रूप में जमा होने वाले कार्बोहाइड्रेट के दो लाभ होते हैं। उनके बनते समय मोनोसैकेराइड से बहुत से पानी के अणु निकल जाते हैं। यह अधिक वस्तु को संघनित करके संचय करता है। कार्बोहाइड्रेट की अपेक्षा पॉलिसैकेरॉइड को संचय करना आसान है। आवश्यकता पड़ने पर पॉलिसैकेराइड पर एंजाइम क्रिया करके उसे तोड़ देते हैं और ऊर्जा देते हैं।

रचनात्मक पॉलिसैकेराइड

पौधे सैल्यूलोस बनाते हैं और इसका उपयोग कोशिका भित्ती बनाने में करते हैं। जैव मंडल में सैल्यूलोस एक बहुत अधिक मात्रा में मिलने वाला जैव यौगिक है। लकड़ी तथा कपास में इसकी मात्रा बहुत अधिक होती है। सैल्यूलोस तंतुमयी पॉलिसैकेराइड है और इसमें खिंचाव शक्ति अधिक होती है। काइटिन भी एक पॉलिसैकेराइड है। यह कीटों, केकड़ा तथा झींगे के बाह्य कंकाल पर होता है। काइटिन सैल्यूलोस के ही समान होता है लेकिन इसकी इकाई ग्लूकोस नहीं होती है बल्कि एक ऐसा ही अणु होता है जिसमें नाइट्रोजन होता है (एन. एसिटिल ग्लूकोस एमीन)।
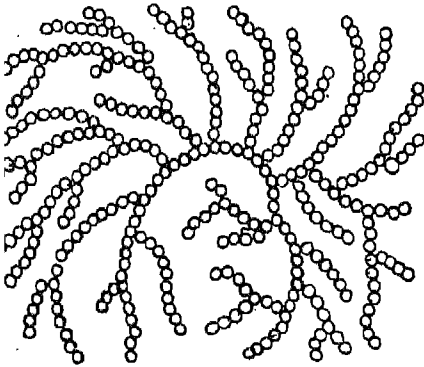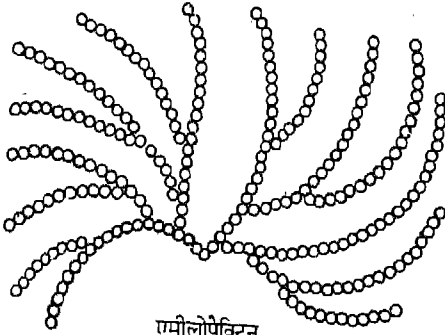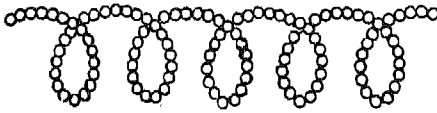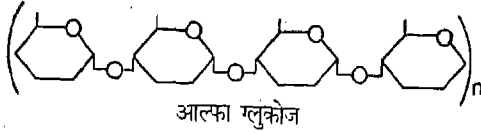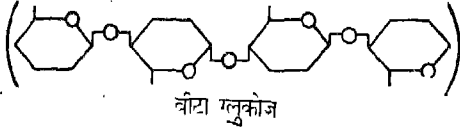
चित्र 6.1 पॉलिसैकेराइड में ग्लूकोस अणुओं के सजने का क्रम। बीटा ग्लुकोस सैल्युलोस में होता है, आल्फा ग्लूकोस एमीलोज, एमीलोपैक्टिन तथा ग्लाइकोजन में होता है।
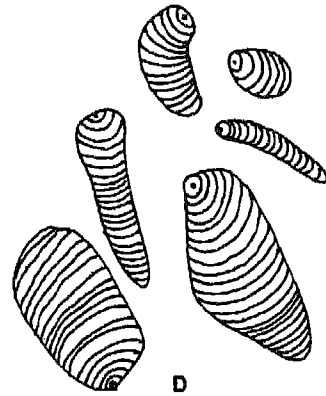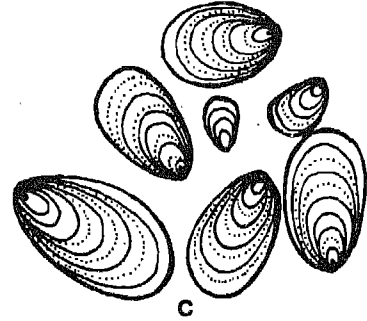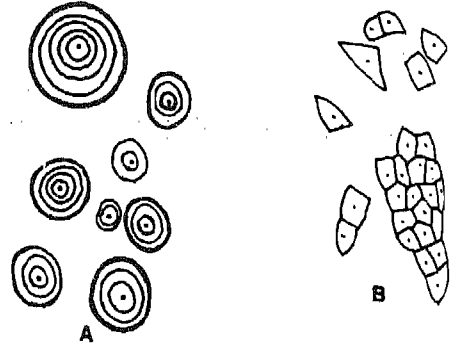
चित्र 6.2 (A) गेहूँ (B) चावल (C) आलू तथा (D) केले से प्राप्त स्टार्च

यद्यपि काइटिन नर्म होता है लेकिन कैल्शियम कार्बोनेट या अन्य प्रोटीन के साथ-साथ मिलकर कठोर हो जाता है। पॉलिसैकेराइड पानी में नही घुलते। इसी गुण के कारण वे अपनी रचना को बनाए रखते हैं और जीवों की रचना को सुदृढ़ करते हैं।

सैल्यूलोस

पौधों में सैल्यूलोस मुख्य रचनात्मक पॉलिसैकेराइड है। सैल्यूलोस के एक अणु में 6000 ग्लूकोस होते हैं। कपास के तंतु में सबसे अधिक (90 प्रतिशत) सैल्यूलोस होता है। लकड़ी में 25 से 50 प्रतिशत सैल्यूलोस तथा शेष हेमीसैल्यूलोस *अथवा लिग्निन* होता है। आदिकाल से मनुष्य आश्रय, ईंधन, औजारों आदि के लिए सैल्यूलोस युक्त पदार्थों पर ही निर्भर रहा है। कपास, लिनेन तथा पटसन के तन्तुओं का उपयोग कपड़े तथा रस्सियां बनाने में किया जाता है। *रेयन* के कृत्रिम तन्तु बनाने के लिए सैल्यूलोस को क्षार में घोला जाता है। अन्य रसायनों से क्रिया करके सैल्यूलोस *सैल्यूलोसएसिटेट* (इसका उपयोग फैब्रिक्स, सैल्यूलोस युक्त प्लास्टिक में करते हैं), *सैल्यूलोसनाइट्रेट* (इसका उपयोग नोदक विस्फोट में करते हैं) तथा *कार्बोक्सी मिथाइल सैल्यूलोस* (इसे आइसक्रीम, प्रसाधनों तथा दवाइयों में चिकनापन लाने के लिए मिलाते हैं) बना सकते हैं। सैल्यूलोस पर जल अपघटन की क्रिया करके घुलनशील शक्कर बनाई जा सकती है। इस शक्कर पर सूक्ष्मजीव *क्रिया करके* इथेनॉल, बुटानोल, एसिटोन, मीथेन *तथा अन्य* उपयोगी रसायन बनाए जा सकते हैं।

मनुष्य के भोजन में सैल्यूलोस मोटे चारे के रूप में काम करता है। पाचन तंत्र को सुचारू रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक है। मनुष्य में ऐसे एंजाइम नहीं होते जो सैल्यूलोस पर क्रिया कर सकें। कुछ रुमिनैन्ट जैसे गाय सैल्यूलोस को पचा सकती है क्योंकि इसमें कुछ ऐसे सूक्ष्मजीव होते हैं जो सैल्यूलोस को तोड़कर पाचन योग्य बना देते हैं। घोंघे तथा दीमक भी सैल्यूलोस पर निर्भर हैं। उनकी भी आहार नाल में सैल्यूलोस को पचाने के लिए सूक्ष्म जीव होते हैं।

म्यूकोपॉलिसैकेराइड

पौधों से निकले चिकने पदार्थ को म्यूसिलेज कहते हैं। जब आप इसबगोल के बीजों को भिगोते हैं या भिन्डी काटते हैं तब कुछ चिकना सा पदार्थ निकलता है। यह *म्यूसिलेज पॉलिसैकेराइड* है जो गैलेक्टोज तथा मैनोज से बनता है। कुछ समुद्री घास से भी म्यूसिलेज जैसे ऐगार, एल्जीनिक एसिड तथा केरीजीनिन बनते हैं। ये आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

म्यूकोपॉलिसैकेराइड जीवाणु की कोशिका भित्ती जन्तुओं के संयोजी ऊतकों तथा शरीर के तरल पदार्थ में होती हैं। ये प्रोटीन को कोशिका भित्ती तथा संयोजी ऊतकों में बांधते हैं और पानी को अंतराली स्थानों पर यह स्नायु तथा कंदरा को चिकनाहट देते हैं। आंखों में स्थित काचाभ द्रव तथा साइनोविऐल तरल में भी *म्यूकोपॉलिसैकेराइड* होता है। *हायलूरॉनिक एसिड* संयोजी ऊतकों तथा कोशिका भित्ति में होता है। किरेटिन सल्फेट तथा कॉन्ड्रियोटीन सल्फैट कार्टिलेज, कार्निया, तथा त्वचा में होता है। ये इनको शक्ति तथा लचीलापन देता है।

प्रोटीन

जीवों में प्रोटीन सबसे महत्त्वपूर्ण वृहदणु है। ग्रीक भाषा में प्रोटीन का अर्थ है प्राथमिक महत्त्व। मनुष्य के शरीर में हजारों प्रकार के प्रोटीन होते हैं। प्रोटीन विभिन्न प्रकार के कार्य करती है। प्रोटीन कार्टिलेज, संयोजी ऊतक बनाती है, रुधिर, तथा पेशियों में आक्सीजन पहुँचाती है, एंजाइम द्वारा जैव क्रियाएं बढ़ती हैं, प्रतिरक्षी के रूप में संक्रामक रोगों से रक्षा करती है, शरीर की गति में सहायता करती है तथा हार्मोन के रूप में उपापचयन को नियंत्रित करती है।

प्रोटीन ऐमीनो एसिड के बहुलक हैं। प्रोटीन अणु बहुत से ऐमीनो एसिड में पेप्टाइड आबन्ध द्वारा एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। इसमें ऐमीनो एसिड का कार्बोक्सिल वर्ग दूसरे ऐमीनो एसिड के ऐमीनो वर्ग से जुड़ता है। विशेष प्रोटीन के लिए उनके बनने का क्रम भी विशेष होता है। 20 ऐमीनो एसिड से ही सभी प्रोटीन बनते हैं।

पेप्टाइड शृंखला में ऐमीनो एसिड के सजाने से प्रोटीन की *प्राथमिक रचना* बनती है। प्रोटीन की प्राथमिक रचना महत्त्वपूर्ण तो है लेकिन कार्यशील नहीं है। कार्यशील होने के लिए प्रोटीन को विशेष त्रिविमीय रचना में बनना पड़ता है। एक कार्यशील प्रोटीन में एक या इससे अधिक पॉलिपेप्टाइड शृंखलाएं होती हैं। शृंखला में ऐमीनो एसिड का क्रम यह निर्धारित करता है कि कहां पर शृंखला मुड़ेगी अथवा झुकेगी और कहां पर बहुत सी लम्बाइयां एक दूसरे से मिलेंगी। हाइड्रोजन आबन्ध बनने से पेप्टाइड शृंखला का *द्वितीयक रचना* का रूप हो जाता है। जब शृंखला कुंडलित होती है तब उसे *हैलिक्स* कहते हैं। जब दो या इससे अधिक शृंखलाएं अंतर अणु हाइड्रोजन आबन्ध से एक दूसरे से जुड़ती हैं, तब ऐसी रचना को *लहरिया शीट* कहते हैं (चित्र 6.3)। बाल के किरेटिन में हेलिकल रचना होती है तथा सिल्क के तन्तु में लहरिया।

क्रियाशील होने के लिए बड़े प्रोटीन जैसे हीमोग्लोबिन अथवा एंजाइम में और अधिक कुंडलियाँ होती हैं। इसे *तृतीयक रचना* कहते हैं (चित्र 6.4)। प्रोटीन में कुंडलियाँ इस प्रकार सजी रहती हैं कि अध्रुवीय एमीनो एसिड की पाश्वींय शृंखला अन्दर की ओर छिपी रहती है और ध्रुवीय पाश्वींय शृंखला बाहर की ओर होती है। प्रोटीन के नियम संरूपण से दूर-दूर स्थित ऐमीनो एसिड की पाश्र्व शृंखलाएं भी समीप आ जाती हैं। इस प्रकार प्रोटीन सक्रिय स्थान जैसे एंजाइम बनते हैं। प्रोटीन का संरूपण तापक्रम तथा रासायनिक पदार्थों से बदला जा सकता है। इस प्रकार प्रोटीन के कार्य चंचल हैं और उसे नियमित किया जा सकता है।

> जलीय माध्यम में प्रोटीन में उसी अणु पर धनायनी तथा ऋणायनी दोनों वर्ग होते हैं। प्रोटीन की आयनी अवस्था माध्यम की pH पर निर्भर करती है। प्रोटीन जिसमें क्षारीय ऐमीनो एसिड होता है जैसे लाइसिन तथा आर्जीनीन में धनायन होता है और वे 7.4 फीजियोलोजिकल pH *(क्षारीय प्रोटीन)* पर क्षार की तरह कार्य करती हैं, उदाहरण है न्यक्लिओप्रोटीन के हिस्टोन। इसी प्रकार प्रोटीन जिसमें अम्लीय ऐमीनो एसिड होता है, अम्ल की तरह कार्य करती है जैसे अधिकतर रुधिर प्रोटीन *(अम्लीय प्रोटीन)*।

रचना के आधार पर प्रोटीन सरल तथा संयुग्मी दो प्रकार की होती है। *सरल प्रोटीन* में केवल ऐमीनो एसिड होते हैं। उनमें से कुछ छोटे गोलाकार अणु होते हैं जो पानी में घुलनशील होते हैं और गरम करने पर संयुग्मी नहीं होते (जैसे हिस्टोन)। जैसे-जैसे अणु का माप बढ़ता जाता है, यह कम घुलनशील हो जाता है और इसकी ऊष्मा स्कन्दता बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए बड़ी गोलाकार प्रोटीन (जैसे अंडे का एल्ब्यूमीन, सीरम ग्लोब्यूलिन तथा चावल एवं गेहूं का ग्लूटेलिन) ऊष्मा से स्कन्दित हो जाता है। तन्तुमयी प्रोटीन का अणु लम्बा तथा पानी में अघुलनशील होता है (जैसे त्वचा का किरेटिन, तथा संयोजी ऊतकों का कोलैजन)।

संयुग्मी प्रोटीन सरल प्रोटीन तथा अप्रोटीन, जिसे *प्रास्थेटिक समूह* कहते हैं, (न्यूक्लियोप्रोटीन में न्यूक्लिक एसिड प्रास्थेटिक समूह है) के मिलने से बनती है।
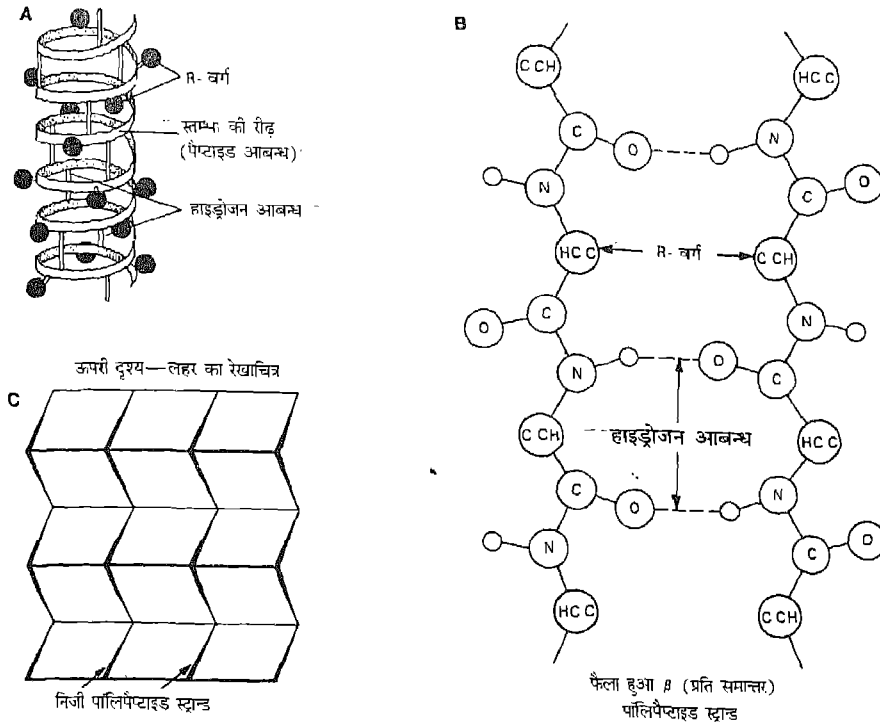
चित्र 6.3 प्रोटीन की द्वितीयक रचना (A) α- स्तम्भ में पालिसैकेराइड शृंखलाओं का सजना (B),(C) β- लहरिया शीट।
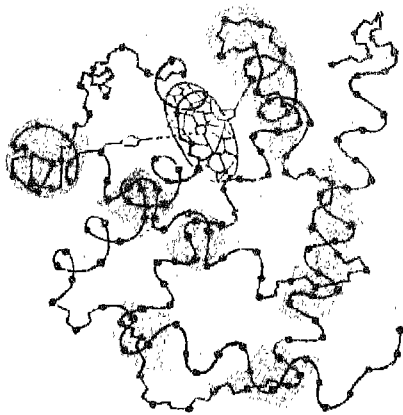
चित्र 6.4 प्रोटीन की तृतीयक रचना (मायोग्लोबिन)

प्रोटीन के कार्य

कुछ प्रोटीन कोशिका भित्ती, कोशिकांग, कोशिका-द्रव्य, बाह्य कोशिकीय आधात्री तथा तन्तु की रचनात्मक घटक हैं। किरेटिन बाल, त्वचा, नाखून, सींग, पंख तथा ऊन का मुख्य अवयव है। उपास्थि कोलैजन की बनी होती है। पौधों में परागकणों की भित्ती में प्रोटीन पाया जाता है।

बहुत सी प्रोटीन *एंजाइम* की तरह कार्य करती हैं जो विशिष्ट रासायनिक अभिक्रियाएँ करते हैं। उपापचयन में एंजाइम महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एंजाइम का विस्तृत वर्णन अगले अध्याय में दिया गया है।

कुछ प्रोटीन संवाहक का काम करती हैं। ये प्रोटीन झिल्ली के बाहर या शरीर तरल में विशिष्ट अणुओं के बाँधने तथा स्थानान्तरण का कार्य करती

संयुग्मी प्रोटीन का वर्गीकरण

संयुग्मी प्रोटीन का वर्गीकरण उनके प्रास्थेटिक समूह के अनुसार किया जाता है। इनके कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं :

न्यूक्लिओप्रोटीन : राइबोसोम तथा क्रोमोसोम का न्यूक्लिक एसिड प्रोटीन सम्मिश्रण।

मेटलोप्रोटीन : मेटल-प्रोटीन सम्मिश्रण (लौह प्रोटीन सम्मिश्रण जैसे फेरीटीन)।

क्रोमोप्रोटीन : वर्णक प्रोटीन सम्मिश्रण (हीमोग्लोबिन तथा साइटोक्रोम)।

फास्फोप्रोटीन : फास्फेट प्रोटीन सम्मिश्रण (दूध का केसीन)।

लिपोप्रोटीन : लिपिड प्रोटीन सम्मिश्रण जो झिल्ली में होता है।

ग्लाइकोप्रोटीन तथा म्यूकोप्रोटीन : कार्बोहाइड्रेड-प्रोटीन सम्मिश्रण जैसे म्यूसीन तथा प्लाज्मा झिल्ली की कुछ प्रोटीन।

हैं। हीमोग्लोबिन तथा मायोग्लोबिन क्रमशः रुधिर तथा पेशियों में आक्सीजन पहुँचाती हैं। पौधों में P-प्रोटीन फ्लोएम द्वारा कार्बनिक पदार्थों का स्थानान्तरण करती हैं। बहुत सी प्रोटीन *ग्राही* के रूप में कार्य करती हैं। ये विशेष सूचनात्मक अणु, जैसे हार्मोन जो कोशिका में आते हैं, से जुड़ जाती हैं और कोशिकीय कार्यों को प्रभावित करती हैं। *हार्मोन* जैसे इंसुलिन तथा पैराथायरॉयड हारमोन भी प्रोटीन हैं जो उपापचयन को नियमित करते हैं। *संकुचनशील प्रोटीन* जैसे एक्टिन तथा मायोसिन कोशिका की गति तथा चलन में भाग लेती हैं। प्रतिरक्षियाँ जो शरीर के रक्षा तन्त्र में भाग लेती हैं, वे भी प्रोटीन हैं। संचित प्रोटीन के उदाहरण हैं अंडे का एल्ब्यूमिन तथा बीजों (गेहूं का ग्लूटिन) में स्थित प्रोटीन।

न्यूक्लिक एसिड

न्यूक्लिक एसिड एक बहुत बड़ा अणु है जिसके भिन्न-भिन्न कार्य होते हैं। ये दो प्रकार का होता है — 1. *डि-ऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड* अथवा डी.एन.ए. तथा 2. *राइबोन्यूक्लिक एसिड* अथवा आर.एन.ए.। डी.एन.ए. प्रायः केन्द्रक में होता है लेकिन माइटोकॉन्ड्रिया तथा क्लोरोप्लास्ट में भी होता है। यह आनुवंशिक पदार्थ है और जीव के विकास के लिए ऐच्छिक सूचना इसमें रहती है। आर.एन.ए. मुख्यतः केन्द्रक में उत्पन्न होता है और कोशिका द्रव्य में आ जाता है। आर.एन.ए. केन्द्रक से सूचना प्राप्त करके राइबोसोम को देता है। राइबोसोम में प्रोटीन संश्लेषण होता है। आर.एन.ए. तीन प्रकार के होते हैं: (1) राइबोसोमी आर.एन.ए. जो राइबोसोम में होता है। (2) दूत आर.एन.ए. जो केन्द्रक में उत्पन्न होता है और प्रोटीन संश्लेषण की सूचना देता है। प्रत्येक प्रोटीन के लिए एक विशेष दूत आर.एन.ए. होता है। (3) *स्थानान्तरण* आर.एन.ए. दूत आर.एन.ए. से छोटा होता है। इसका कार्य है कोशिका द्रव्य से प्रोटीन संश्लेषण के ऐमीनो एसिड एकत्र करना।

न्यूक्लिक एसिड विशालकाय होते हैं तथा वे प्यूरीन और पिरिमिडीन न्यूक्लिओटाइड के बहुलक हैं। न्यूक्लिओटाइड फास्फेट वर्ग से क्रम में जुड़े रहते हैं, जिसमें एक न्यूक्लिओटाइड के पेन्टोज शर्करा का पांचवा कार्बन C^5(5 -C) अगले न्यूक्लिओटाइड के पेन्टोज शर्करा के तीसरे कार्बन C^3(3 -C) से न्यूक्लिओटाइड की दोहरी श्रृंखला होती है जबकि आर. एन. ए. में एक श्रृंखला होती है। डी.एन.ए. के न्यूक्लिओटाइड के क्षार में ऐडेनीन (A), थायमीन (T), गुआनीन (G) तथा साइटोसिन (C) होते हैं। आर. एन. ए. में क्षार A, G, C तथा यूरेसिल (U) होते हैं। यूरेसिल थायमीन के स्थान पर होता है। न्यूक्लिक हैं। यूरेसिल थायमीन के स्थान पर होता है। न्यूक्लिक एसिड का मुख्य स्तम्भ एकान्तर रूप से सजे पेन्टोज तथा फास्फेट वर्ग का होता है। डी.एन.ए. में पेन्टोज शर्करा डिआक्सी राइबोस ($C_5H_{10}O_4$) होती है जबकि आर.एन.ए. में राइबोस ($C_5H_{10}O_5$)। इसके स्तम्भ पर क्षार लगे रहते हैं। दोहरे स्तम्भ वाले

चित्र 6.5 आर.एन.ए. पॉलिन्यूक्लिओटाइड स्ट्रान्ड

डी.एन.ए. में विपरीत स्तम्भ वाले क्षार हाइड्रोजन आबन्ध द्वारा विशेष संबंध से जुड़े रहते हैं। A हमेशा T से जुड़ता है तथा G हमेशा C से। इस पूरकता को *क्षार युग्मन सिद्धान्त* कहते हैं।

डी.एन.ए. के प्रत्येक स्तम्भ में हजारों डिआक्सी-राइबो न्यूक्लिओटाइड होते हैं जो एक दूसरे से जुड़े रहते हैं (चित्र 6.6)। इसके एक सिरे को 5' सिरा कहते हैं। अन्तिम डिआक्सी राइबोन्यूक्लिओटाइड के सिरे पर डिआक्सी राइबोस शर्करा का पांचवा कार्बन 5'-C मुक्त होता है। स्तम्भ के दूसरे सिरे को 3' सिरा कहते हैं, क्योंकि इसमें अन्तिम न्यूक्लिओटाइड के डिआक्सी राइबोस का तीसरा कार्बन 3'-C मुक्त होता है। डी.एन.ए. अणु में दोनों स्तम्भ एक-दूसरे के प्रति *समांतर* होते हैं। अर्थात् प्रत्येक स्तम्भ का 5' सिरा दूसरे स्तम्भ के 3 सिरे के पास होगा।

डी.एन.ए. के दोनों स्तम्भ कुंडलित होकर द्विकुंडली इस प्रकार बन जाते हैं जैसे घुमावदार सीढ़ी। इसमें शक्कर फास्फेट की इकाइयाँ स्तम्भ पर होती हैं तथा हाइड्रोजन-आबन्धित क्षार युग्ल पैड़ी की तरह सजती है। इसे डी.एन.ए. का *वाटसन-क्रिक मॉडल* कहते हैं (चित्र 6.6)।

सजीव जगत में डी.एन.ए. के अद्भुत अणु हैं। यही एक अणु ऐसा है जो प्रतिकृत हो सकता है। सभी सजीवों में डी.एन.ए. होता है जो एक आनुवंशिक पदार्थ है। कुछ जन्तुओं तथा सभी पादप विषाणुओं में आर.एन.ए. आनुवंशिकी पदार्थ है। चूँकि न्यूक्लिओटाइड का वही क्रम एक संतति से दूसरी संतति में जाता है तो क्या आप नहीं सोचते कि *आपके* डी.एन.ए. का कुछ भाग वही नहीं है जो आज से लाखों वर्ष पूर्व जीवों में था।
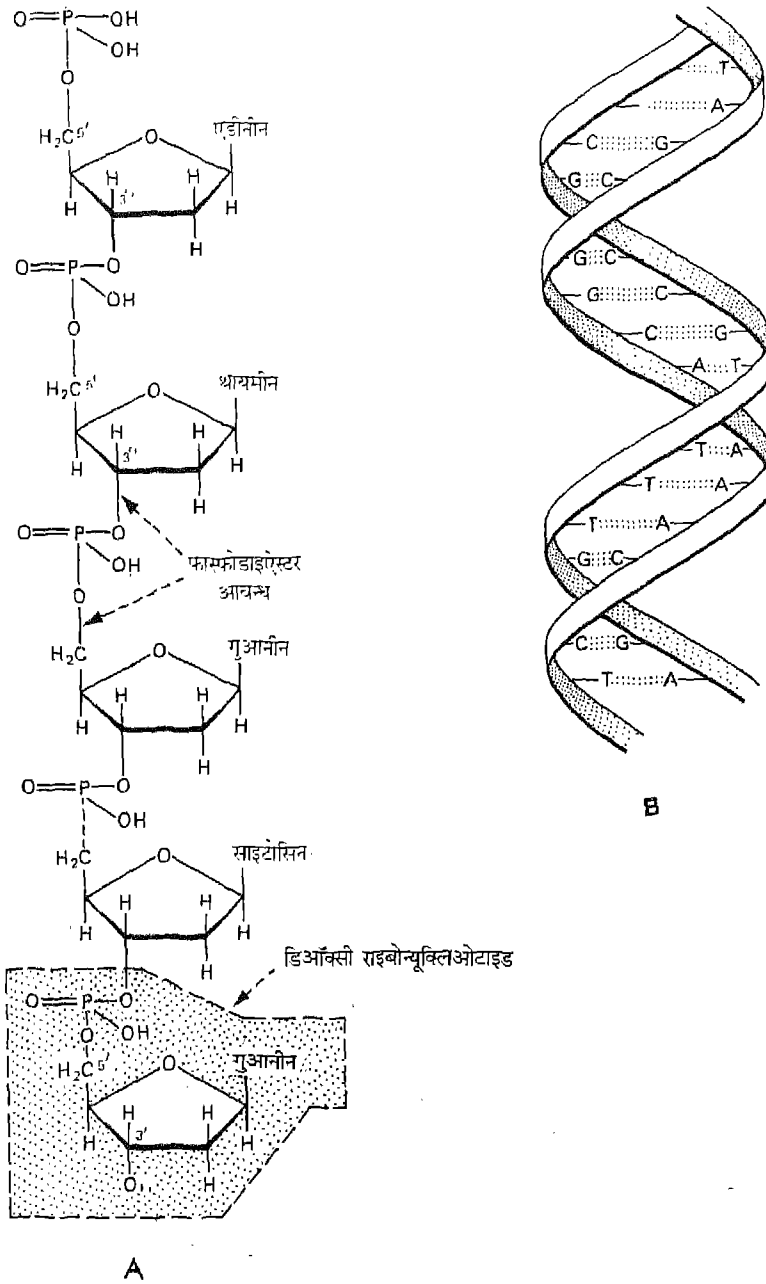
चित्र 6.6 A. डी.एन.ए. का पॉलिन्यूक्लिओटाइड स्ट्रान्ड
B. वाटसन-क्रिक का डी.एन.ए. द्विरतम्भ मॉडल

सारांश

पॉलिसैकेराइड, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक एसिड कोशिका के वृहदणु हैं। ये क्रमशः शक्कर, ऐमीनो एसिड तथा न्यूक्लिओटाइड के बहुलक हैं। उनका आण्विक भार अधिक होता है, और उनमें आयनी समूह तथा दोनों ध्रुवीय तथा अध्रुवीय समूह होते हैं। इन्हीं कारणों से जलीय माध्यम में वृहदणु का विशेष नियम तथा संरूपण होता है। इन अणुओं की जैव प्रक्रियाएं त्रिविमीय आकृति पर निर्भर करती हैं।

पॉलिसैकेराइड लम्बे अथवा शाखीय होते हैं। यह एक या एक से अधिक प्रकार के मोनोसैकेराइड के बहुलक हैं। खाद्य पॉलिसैकेराइड जैसे स्टार्च तथा ग्लाइकोजन कोशिकाओं में संचित रहते हैं जो विघटित होकर ऊर्जा देते हैं। अन्य जैसे सैल्यूलोस रचनात्मक पॉलिसैकेराइड हैं।

प्रोटीन ऐमीनो एसिड से बनती है। सरल प्रोटीन में केवल ऐमीनो एसिड होते हैं। संयुग्मी प्रोटीन में ऐमीनो एसिड के अतिरिक्त अप्रोटीनी प्रास्थैटिक समूह भी होता है।

प्रत्येक प्रोटीन में पेप्टाइड श्रृंखलाएं होती हैं इनमें ऐमीनो एसिड का विशिष्ट क्रम होता है। (प्राथमिक रचना)। हाइड्रोजन आबन्ध द्वारा पेप्टाइड श्रृंखलाएं कुंडलित होती हैं अथवा लहरिए दार शीट होती हैं (द्वितीय रचना)। ध्रुवीय तथा अध्रुवीय ऐमीनो एसिड के क्रम के आधार पर प्रोटीन अणु विशिष्ट ढंग से कुन्डलित होकर जिवम आकृति का बन जाता है (तृतीय रचना)। केवल जब प्रोटीन जिवम आकृति में आ जाता है तभी वह क्रियाशील होता है।

न्यूक्लिक एसिड जैसे डिआक्सी राइबोन्यूक्लिक एसिड (डी०एन०ए०) तथा राइबोन्यूक्लिक एसिड (आर०एन०ए०) प्यूरीन तथा पिरिमिडिन न्यूक्लिओटाइड के बहुलक हैं। डी०एन०ए० अणु में एडीनीन, गुआनीन, साइटोसीन तथा थायमिन के डिआक्सी राइबोन्यूक्लिओटाइड होते हैं। डी०एन०ए० द्विकुंडलीय होता है (वाटसन-क्रिक मॉडल)। इसके दो स्तम्भ प्रति समान्तर होते हैं। इन दोनों स्तम्भों पर पूरक प्यूरीन तथा पिरिमिडीन क्षार हाइड्रोजन से जुड़े रहते हैं (क्षार युग्मन सिद्धांत)। डी०एन०ए० आनुवंशिक पदार्थ है जो एक संतति से दूसरी संतति में जाता है।

आर०एन०ए० अणु में एक राइबोन्यूक्लिओटाइड, एडीनीन, गुआनीन, साइटोसिन तथा यूरेसिल होता है। आर०एन०ए० तीन प्रकार का होता है: राइबोसोमी आर०एन०ए०, दूत आर०एन०ए० तथा स्थानान्तरण आर०एन०ए०। ये आर०एन०ए० प्रोटीन संश्लेषण में विभिन्न कार्य करते हैं।

प्रश्नावली

1. रिक्त स्थान भरिए :
   (क) डी०एन०ए० में यूरेसिल के स्थान पर ________ होता है।
   (ख) राइबोसोमी आर०एन०ए० का कार्य ________ करता है।
   (ग) किरेटिन ________ प्रोटीन है।
   (घ) द्विस्तम्भी रचना ________ में पाई जाती है।
   (ङ) कार्बोहाइड्रेट सैल्यूलोस अणु ________ है।
   (च) डी०एन०ए० का द्विस्तम्भी मॉडल ________ तथा ________ ने सुझाया था।
   (छ) न्यूक्लिक एसिड के जल अपघटन से प्यूरीन, शक्कर, ________ तथा ________ प्राप्त होते हैं।
   (ज) ________ तथा ________ संचय पॉलिसैकेराइड हैं।
2. पहले दो शब्दों के संबंधों को देखिए। उसके बाद चौथे खाली स्थान में उचित शब्द लिखिए :

(क) ऐमीनो एसिड :	प्रोटीन	: :	न्यूक्लिओटाइड :	________
(ख) पौधे :	मंड	: :	स्तनधारी :	________
(ग) α- स्तम्भ :	प्रोटीन	: :	द्विस्तम्भ :	________

3. निम्नलिखित के लिए सही चुनिए :

(क) दूत आर०एन०ए० बहुलक है :

(i) डिऑक्सी राइबोन्यूक्लिओसाइड

(ii) राइबोन्यूक्लिओसाइड

(iii) डिआक्सी राइबोन्यूक्लिओटाइड

(iv) राइबोन्यूक्लिओटाइड

(ख) निम्नलिखित में से संचित प्रोटीन है

(i) किरेटिन

(ii) कोलैजन

(iii) ग्लूटेलिन

(iv) हीमोग्लोबिन

(ग) डी०एन०ए० तथा आर०एन०ए० में निम्नलिखित के कारण अंतर है :

(i) शर्करा तथा क्षार

(ii) शर्करा तथा फास्फेट

(iii) फास्फेट तथा क्षार

(iv) केवल शर्करा

(घ) प्रोटीन की प्राथमिक रचना निम्नलिखित के कारण है :

(i) हाइड्रोजन आबन्ध

(ii) पेप्टाइड आबन्ध

(iii) S-S सहलग्नता

(iv) आयनिक आबन्ध

4. निम्नलिखित पॉलिसैकेराइड के प्राकृतिक .. स्रोत, मोनो सैकेराइड इकाई तथा कार्य की एक सूची बनाइए :
स्टार्च, ग्लाइकोजन तथा सैल्यूलोस

5. प्रोटीन के चार कार्य लिखिए और एक प्रोटीन का नाम लिखिए जो प्रत्येक कार्य करती है।

6. तुम्हें डी.एन.ए., आर.एन.ए. तथा दोनों में निम्नलिखित कहां मिलेंगे :
(क) राइबोस (ख) डिआक्सीराइबोस (ग) ऐडेनीन (घ) यूरेसिल (ङ) गुआनीन

7. एक ऐसा तत्व बताओ जो हमेशा प्रोटीन में होता है लेकिन सभी कार्बोहाइड्रेट तथा वसा में नहीं होता। एक अन्य तत्व बताओ जो प्रायः प्रोटीन में होता है लेकिन सभी कार्बोहाइड्रेट में नहीं होता?

9. प्रोटीन को जैव बहुलक कहते हैं। वर्णन करो।

10. यद्यपि सभी प्रोटीन समान ऐमीनोएसिड से बनते हैं, बताओ तुम्हारे शरीर में स्थित प्रोटीन कुत्ते में स्थित प्रोटीन से भिन्न क्यों हैं?

11. प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक प्रोटीन की रचना में अन्तर स्पष्ट करो।

अध्याय 7

एंजाइम

अध्याय 4 में आपने पढ़ा है कि सूक्ष्मदर्शीय कोशिका में विशेष भाग विभिन्न कार्य करते हैं। आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि एक ही समय में हजार से अधिक विभिन्न अभिक्रियाएँ होती हैं। ये सभी अभिक्रियाएँ 20 मिली माइक्रोन क्षेत्र में ही होती हैं। कोशिका ये सभी अभिक्रियाएँ करने में कैसे सक्षम होती है? इन सभी क्रियाओं को प्रारम्भिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है जिसे *सक्रियित ऊर्जा* कहते हैं।

कभी कभी पदार्थ की कम मात्रा भी बड़ी बड़ी तथा महत्त्वपूर्ण अभिक्रियाओं को प्रभावित करती है। अभिक्रिया के समाप्त होने पर पदार्थ की मात्रा तथा विशेषता में कोई अन्तर नहीं आता। ऐसे पदार्थ को *उत्प्रेरक* कहते हैं। ऐसी घटना को *उत्प्रेरण* कहते हैं। यदि अभिक्रिया की दर बढ़ जाती है तो उत्प्रेरण लाभदायक है और यदि दर कम हो जाती है तो हानिकारक। कार्बनिक तथा आकार्बनिक दोनों ही प्रकार के पदार्थ उत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हैं

कोशिका में अभिक्रिया की दर तथा प्रवीणता विशेष अणु पर निर्भर करती हैं जिसे *एंजाइम* कहते हैं। एंजाइम जैव उत्प्रेरक है। डी. एन. ए. में एंजाइम बनाने के लिए आवश्यक सूचना एकत्र रहती है। जब किसी विशेष प्रक्रिया के लिए किसी विशेष एंज़ाइम की आवश्यकता होती है तो कोशिका इस सूचना को उपयोग करती है।

सजीव कोशिकाएं एंजाइम को बनाती हैं। लेकिन कोशिका से बाहर निकालने के बाद भी एंजाइम की उत्प्रेरण क्रिया बनी रहती है। रैनेट की गोलियों में गाय के बछड़े के पेट से निकाला रैनिन नामक एंज़ाइम होता है। इन गोलियों का उपयोग दूध से कैसीन निकालने में करते हैं। इसका उपयोग विभिन्न कार्यों तथा खाद्य सामग्री में करते हैं।

सभी एंज़ाइम प्रोटीन से बनते हैं लेकिन सभी प्रोटीन एंजाइम नहीं हैं। बहुत से एंजाइमों में एक अप्रोटीनी भाग भी होता है जिसे *प्रास्थैटिक समूह* कहते हैं। ये समूह एंजाइम से जुड़े रहते हैं। कुछ प्रास्थैटिक समूह धातु के यौगिक होते हैं। उदाहरण के लिए लौह-पोरफाइरिन सम्मिश्रण साइटोक्रोम का प्रास्थैटिक समूह है। इसके अतिरिक्त एंजाइम की क्रिया करने के लिए कुछ कार्बनिक यौगिकों तथा आकार्बनिक आयनों की भी आवश्यकता होती है।

एंजाइम की खोज

एंजाइम की खोज बड़े आश्चर्यजनक ढंग से हुई। सन् 1897 में जर्मनी के एक वैज्ञानिक एडवार्ड बुकनर औषधि उपयोग के लिए यीस्ट का रस निकाल रहे थे। यह रस कुछ समय बाद खराब हो गया। इसको बचाने के लिए उन्होंने शक्कर डाल दी। उन्हें यह देखकर हैरानी हुई कि शक्कर का किण्वन होकर एल्कोहल बन गया। पास्चर यह पहले ही बत्ता चुके थे कि यीस्ट की जीवित कोशिकाएं किण्वन को बढ़ाती हैं। बुकनर ने बताया कि किण्वन के लिए जीवित कोशिकाएं ही आवश्यक नहीं हैं। इस यीस्ट के रस से किण्वन कर सकते हैं जिसे 'एंजाइम' शब्द का नाम दिया। इसका साहित्यिक अर्थ है 'यीस्ट में' लेकिन अब सामान्यतः इसे जैव उत्प्रेरक कहते हैं।

ये एंजाइम के साथ शिथिल युग्मित होते हैं। इन्हे *सहकारक* कहते हैं। विटामिन निकोटिनामाइड (NAD) तथा राइबोफ्लेविन (FAD) के न्यूक्लिओटाइड जैविक सहकारक हैं अथवा माइटोकॉन्ड्रिया में स्थित आक्सीकारक एंजाइम के *सह-एंजाइम* हैं। इनके अतिरिक्त कुछ धातु, विशेषतः जिनकी मात्रा बहुत कम होती है, भी एंजाइम की क्रिया को बढ़ाती हैं। लौह कैटालेज की उत्प्रेरक प्रक्रिया में सहकारक है।

सभी एंजाइमों की एक विशेष त्रिविमीय रचना होती है, जिसके एक भाग को *सक्रिय बिन्दु* या *स्थान* कहते हैं। एक एंजाइम में एक से अधिक सक्रिय स्थान होते हैं। सक्रिय स्थान 'बिन्दु पथ' का काम करता है जिसमें *स्बस्ट्रेट* ऐसा जुड़ जाता है जैसे ताले में चाबी (चित्र 7.1)। जिस स्थान पर स्बस्ट्रेट जुड़ता है उसे स्बस्ट्रेट बन्धन स्थान कहते हैं। स्बस्ट्रेट के बन्धन से सक्रिय ऊर्जा कम हो जाती है तथा अभिक्रिया आरम्भ हो जाती है (चित्र 7.2)। जब
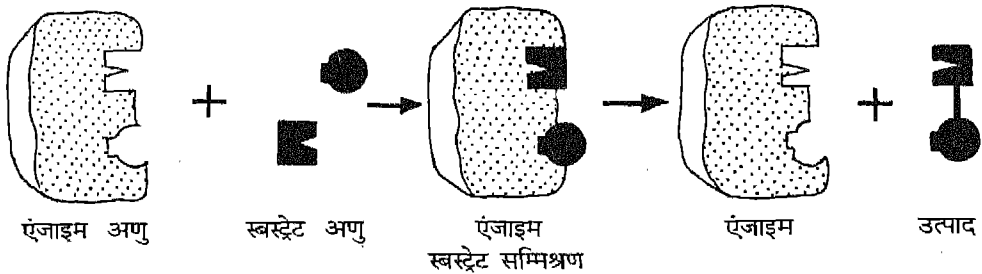
चित्र 7.2 एंजाइम क्रिया की चाबी-ताला परिकल्पना
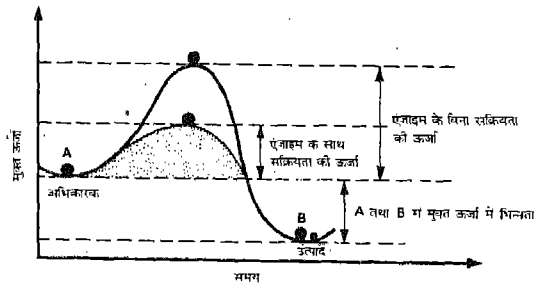
चित्र 7.2 एंजाइम उत्प्रेरित तथा अनुत्प्रेरित क्रिया के लिए आवश्यक सक्रिय ऊर्जा

अभिक्रिया पूरी हो जाती है तब एंजाइम उत्पाद को छोड़ देता है और यह एंजाइम पुनः उत्प्रेरण के लिए तैयार हो जाता है। एंजाइम कितनी जल्दी अभिक्रिया करता है? कार्बोनिक एनहाइड्रेज एंजाइम जो तीव्रतम एंजाइम माना जाता है, का एक अकेला अणु प्रति मिनट कार्बन डाइआक्साइड के 3 करोड़ 60 लाख (36×10^6) अणुओं का जलअपघटन कर सकता है।

$$CO_2 + H_2O \xrightarrow{\text{कार्बोनिक एनहाइड्रेज}} H_2CO_3$$
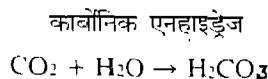
अनुत्प्रेरक प्रक्रिया की अपेक्षा उत्प्रेरक क्रिया एक करोड़ गुना अधिक है।

आइए अब हम अकार्बनिक उत्प्रेरक तथा एंजाइम में समानता तथा असमानता देखें।

क्रियाकलाप : दो परखनलियों में 2 मि. ली. हाइड्रोजन परआक्साइड (H_2O_2) का घोल लीजिए। एक परखनली में थोड़ा सा मैंग्नीज डाइआक्साइड (MnO_2) का पाउडर डालिए तथा दूसरी परखनली में यकृत या आलू का छोटा सा टुकड़ा। गर्मियों के दिनों में इन परखनलियों को सामान्य ताप पर और सर्दियों में गरम पानी (लगभग 38° से. ग्रे.) के बीकर में रखिए। दोनों परखनलियों में से आक्सीजन के बुलबुले निकलेंगे। इस प्रकार मैंग्नीज डाइआक्साइड तथा कोशिका एंजाइम (परआक्सीडेज अथवा उत्प्रेरक) दोनों ही हाइड्रोजन परआक्साइड पर क्रिया करके आक्सीजन निकाल सकते हैं। इस प्रयोग को दुबारा करिए लेकिन इस बार इसमें उबालकर ठंडा किया हुआ मैंग्नीज डाइआक्साइड का घोल तथा यकृत अथवा आलू के टुकड़े डालिए। गैस के बुलबुले मैंग्नीज डाइआक्साइड वाली परखनली से निकलते हैं लेकिन यकृत अथवा आलू के टुकड़े वाली परखनली से गैस के बुलबुले नहीं निकलते। इस प्रयोग से यह पता चलता है कि ऊष्मा से एंजाइम निष्क्रिय हो जाते हैं लेकिन अकार्बनिक उत्प्रेरक पर ऊष्मा का प्रभाव नहीं रहता।

अकार्बनिक उत्प्रेरक तथा एंजाइम में समानता

1. क्रिया के बाद अकार्बनिक उत्प्रेरक तथा एंजाइम के रसायन तथा विशेषता में कोई अंतर नहीं आता और उनका उपयोग पुनः किया जा सकता है।
2. स्बस्ट्रेट की मात्रा की अपेक्षा इन दोनों की मात्रा की आवश्यकता बहुत कम होती है।
3. ये परिवर्तनीय क्रिया के संतुलन को नहीं बदलते।
4. ये किसी प्रक्रिया को प्रारंभ नहीं करते बल्कि ये उस क्रिया की दर को बढ़ावा देते हैं।
5. ये अभिकारक के साथ मिलकर एक अल्पावधि वाला सम्मिश्रण बनाते हैं।

अकार्बनिक उत्प्रेरक तथा एंजाइम में असमानता

	अकार्बनिक उत्प्रेरक	*एंजाइम*
1.	छोटा अणु अथवा सरल खनिज आयन	प्रोटीनी, जिसकी रचना जटिल तथा त्रिविमीय होती है।
2.	विविध क्रियाओं को उत्प्रेरित कर सकता है।	एक या कुछ स्बस्ट्रेटों पर विशेष उत्प्रेरक क्रिया कर सकता है।

3. किसी भी नियमक अणु द्वारा नियमित नहीं होता।	विशेष अणु द्वारा नियमित हो सकता है जो बदल सकता है। एंजाइम की क्रिया को नियमित कर सकता है।
4. तापक्रम तथा pH के प्रति अधिक संवेदनशील नहीं होते।	तापक्रम तथा pH के प्रति अधिक संवेदशील होते हैं।

एंजाइम का वर्गीकरण

पहले एंजाइम के बहुत से नाम थे। एंजाइम जैसे टायलिन (सेलीवरी एमीलेज), पैप्सिन तथा ट्रिप्सिन से उनकी क्रियाओं का पता नहीं लगता। अन्य एंजाइम जैसे एमीलेज, सुक्रेज, प्रोटिएज तथा लाइपेज का नामकरण उनके स्बस्ट्रेट जिस पर वे क्रिया करते हैं, के आधार पर किया गया है। ये एंजाइम क्रमश : एमीलोज (स्टार्च), सुक्रोज, प्रोटीन तथा लिपिड पर क्रिया करते हैं। कुछ अन्य एंजाइम का नाम उनके स्रोत के आधार पर किया गया जैसे पपीते से प्राप्त होने वाले एंजाइम का नाम पपैन, पाइनएपिल से प्राप्त होने वाले ब्रोमीलिन (ब्रोमीलिएसी कुटुम्ब से संबंधित)। कुछ एंजाइम जैसे डी.एन.ए. पॉलिमिरेज कुछ विशेष क्रियाओं जैसे बहुलक को बनाते हैं। वैज्ञानिक भाषा समान बनाए रखने के लिए एंजाइम का वर्गीकरण तथा नाम इंटरनेशनल कोड ऑफ एंजाइम नामकरण के अनुसार करते हैं।

एंजाइम के नाम में दो भाग होते हैं। उसके नाम के अन्त में एज लगता है। पहला भाग स्बस्ट्रेट से संबंध रखता है तथा दूसरा भाग क्रिया से। उदाहरण के लिए ग्लुटामेट पाइरूबेट ट्रांसऐमीनेज़ एंजाइम ग्लुटामेट स्बस्ट्रेट से ऐमीनो समूह को अन्य स्बस्ट्रेट पाइरूवेट में बदल देता है। यद्यपि टायलिन, ट्रिप्सिन नाम भी अभी तक प्रचलित हैं।

एंजाइम को 6 मुख्य वर्गों में रखते हैं :

वर्ग 1. आक्सीडो रिडक्टेज : ये स्बस्ट्रेट का आक्सीकरण अथवा अनाक्सीकरण करते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं — डिहाइड्रोजिनेज जो स्बस्ट्रेट से हाइड्रोजन निकालते हैं। आक्सीडेज जो स्बस्ट्रेट में आक्सीजन मिलाते हैं अथवा इलैक्ट्रान निकालते हैं जैसे साइटोक्रोम आक्सीडेज साइटोक्रोम का आक्सीकरण करता है।

वर्ग 2. ट्रांसफिरेज : ये स्बस्ट्रेट के किसी विशेष वर्ग को अन्य वर्ग में बदल देते हैं। प्रक्रिया में स्थानांतरित रासायनिक वर्ग मुक्त अवस्था में नहीं होता, जैसे ग्लुटामेट पाइरूवेट ट्रांस ऐमीनेज।

वर्ग 3. हाइड्रोलेज : ये पानी की सहायता से बड़े अणुओं को छोटे-छोटे अणुओं में तोड़ देता है (जल अपघटन)। बहुत से पाचक एंजाइम इस वर्ग में आते हैं — जैसे एमीलेज जो स्टार्च का जल अपघटन करता है।

वर्ग 4. लाइसेज : ये विशेष सह-आबन्ध को तोड़ते हैं और जल अपघटन के बिना ही वर्ग को हटा देते हैं जैसे हिस्टिडीन डिकार्बोक्सिलेज हिस्टिडीन के C-C आबन्ध को तोड़कर कार्बन डाइआक्साइड तथा हिस्टेमिन बनाते हैं।

वर्ग 5. आइसोमेरेज : ये आइसोमर को बनाने के लिए आण्विक रचना को पुनः सजाते हैं जैसे फास्फोहैक्सोज आइसोमेरेज ग्लुकोस-6-फास्फेट को फ्रक्टोज-6-फास्फेट में बदल देता है (दोनों ही हैक्सोज फास्फेट हैं)।

वर्ग 6. लाइजेज : ये एंजाइम दो स्बस्ट्रेटों को सह आबन्ध से जोड़कर एक बड़ा अणु बनाते हैं। इसके लिए ऊर्जा ए.टी.पी. के जल अपघटन से प्राप्त होती है। पाइरूवेट कार्बोक्सिलेज पाइरूवेट तथा कार्बन-डाइआक्साइड को जोड़कर ए.टी.पी. के खर्चे पर ऑक्सेलोएसीटेट बनाते हैं।

एंजाइम के गुण

(क) विशिष्टता : प्रत्येक एंजाइम केवल किसी विशिष्ट स्बस्ट्रेट या स्बस्ट्रेटों के विशिष्ट वर्ग को उत्प्रेरित करता है। स्बस्ट्रेट की विशिष्टता को निम्न विधि से प्रदर्शित कर सकते हैं

क्रिया-कलाप : दो परखनलियों में तीन मि.ली. बैनेडिक्ट का घोल लीजिए जिसमें क्युपरिक सल्फेट मिला हो। एक परखनली में 1 मिली (1%) स्टार्च का घोल डालिए तथा दूसरी में 1 मिली (1%) सुक्रोज का घोल। घोल को कुछ मिनट के लिए उबालिए। किसी भी घोल में कोई अन्तर नहीं हुआ। इसका अर्थ यह हुआ कि स्टार्च तथा सुक्रोज दोनों ही अनअपचायी कार्बोहाइड्रेट हैं। कोई भी Cu^{++} को Cu^{+} में नहीं बदल सका। दो परखनलियां लीजिए और उसमें लार डालो। एक परखनली में स्टार्च डालिए तथा दूसरी में डालिए। दोनों परखनलियों को एक घंटे तक सामान्य तापक्रम पर रखा रहने दीजिए। यदि क्रिया सर्दी के मौसम में कर रहे हों तो परखनलियों को 38 से.ग्रे. वाले गरम पानी में रखिए। दोनों परखनलियों में बैनेडिक्ट का घोल डालिए। अब परखनलियों को कुछ मिनट तक गर्म करिए। स्टार्च वाली परखनली में नीला रंग पीले अथवा लाल तलछट में बदल जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि लार में स्थित सेलिवरी एमीलेज से स्टार्च जल अपघटित करके अपापचय शक्कर में बदल दिया है। एंजाइम Cu^{++} को Cu^{+} में अपघटित कर देता है जिससे क्युप्रस आक्साइड (Cu_2O) का रंगीन तलछट बन जाता है। सुक्रोज वाली परखनली में कोई अन्तर नहीं आया। इसका अर्थ है कि सेलिवरी एमीलेज सुक्रोज पर प्रभाव नहीं डालता। इसमें कोई भी अपापचय शक्कर नहीं बनती और इसीलिए बैनेडिक्ट के घोल का रंग भी नहीं बदलता।

(ख) ईष्टतम तापक्रम : एंजाइम प्रायः तापक्रम के संकरे दायरे में ही काम करता है। यह प्रायः सजीव के शरीर के तापक्रम पर कार्य करता है। उदाहरण के लिए मनुष्य में पाए जाने वाले एंजाइम शरीर के सामान्य तापक्रम पर कार्य करते हैं। प्रत्येक एंजाइम की क्रिया क्षमता विशेष तापक्रम पर सबसे अधिक होती है। ऐसे विशेष तापक्रम को ईष्टतम तापक्रम कहते हैं। ईष्टतम तापक्रम के कम या अधिक होने से एंजाइम के कार्य करने की क्षमता भी कम हो जाती है। अधिक तापक्रम पर एंजाइम को निष्क्रिय अवस्था में अस्थायी तौर पर संरक्षित रख सकते हैं। आप जानते हैं कि जमाव बिन्दु पर खाद्य सामग्री को संरक्षित करते हैं। इसका कारण यह है कि न तो कोई सूक्ष्मजीवी और न ही भोजन में स्थित कोई एंजाइम इतने कम तापक्रम पर भोजन को खराब कर सकते हैं। जैसा कि आप पहले देख चुके हैं कि उच्च तापक्रम पर एंजाइम नष्ट हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि इस तापक्रम पर प्रोटीन विकृत हो जाती है। इसी कारण कुछ कोशिकाएं 45°C से अधिक तापक्रम सहन कर सकती हैं। कुछ ताप प्रतिरोधी स्पीशीज जैसे सूक्ष्म जीवों में ताप प्रतिरोधी एंजाइम होते हैं जो गरम झरनों जिनका तापक्रम लगभग 100° सें.ग्रे. होता है, में रहते हैं।

(ग) ईष्टतम pH : प्रत्येक एंजाइम की क्रिया की दर विशिष्ट pH पर सबसे अधिक होती है यह ईष्टतम pH कहलाती है। ईष्टतम pH कम या अधिक होने पर क्रिया की दर भी कम या अधिक होती है। कोशिका में पाए जाने वाले बहुत से एंजाइम उदासीन pH पर बहुत अच्छा कार्य करते हैं। कुछ पाचक एंजाइम अम्लीय अथवा क्षारीय माध्यम में कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए आमाशय में प्रोटीन को पचाने वाला पेप्सिन नामक एंजाइम का ईष्टतम 2.0 pH होता है। अन्य प्रोटीन पाचक एंजाइम ट्रिप्सिन जो ग्रहणी में होता है, उसका क्षारीय माध्यम में ईष्टतम pH 8.5 है।

> निष्क्रिय अवस्था में स्रावित पेप्सिन को पेप्सिनोजन कहते हैं। निष्क्रिय पेप्सिनोजन आमाशय में जठरीय हाइड्रोक्लोरिक एसिड अथवा पूर्ववर्ती पेप्सिन द्वारा अपघटित होकर सक्रिय पेप्सिन बन जाता है।

क्रिया-कलाप : दो परखनलियों में (1%) 2 मि० ली० स्टार्च लीजिए। दोनों परखनलियों में लार डालिए। एक परखनली में तनु हाइड्रोक्लोरिक एसिड डालो। दोनों परखनलियों को सामान्य ताप पर रख दीजिए। (सर्दियों में 38° सें.ग्रे. तापक्रम चाहिए) । उसके बाद प्रत्येक परखनली में एक बूंद तनु आयोडीन का घोल डालो। आप देखेंगे कि एसिड वाली परखनली में नीला रंग हो गया क्योंकि लार की स्टार्च पर एसिड की उपस्थिति में कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। दूसरी परखनली में लार ने स्टार्च को जलअपघटित कर दिया इसलिए उसमें नीला रंग नहीं आया। इसका अर्थ यह हुआ कि लार में स्थित एमीलेज एंजाइम लार के pH पर स्टार्च को जल अपघटित कर सकता है जबकि अम्लीय pH पर नहीं।

भोजन के साथ आमाशय में गया सेलिवरी एमीलेज आमाशय में हाइड्रोक्लोरिक एसिड होने के कारण निष्क्रिय हो जाता है।

(घ) एंजाइम स्बस्ट्रेट सम्मिश्रण: प्रत्येक एंजाइम (E) पर स्बस्ट्रेट को बांधने वाले सक्रिय स्थान होते हैं। इस कारण एक उच्च क्रियाशील एंजाइम स्बस्ट्रेट सम्मिश्रण बनता है। यह सम्मिश्रण अल्पावधि के लिए बनता है और इसका विघटन होकर एक नया उत्पाद (P) तथा अपरिवर्तित एंजाइम बनते हैं।

$$E + S \rightleftharpoons ES \rightarrow EP \rightarrow E + P$$

अल्पावधि
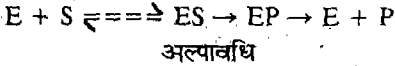
उत्प्रेरण के लिए एंजाइम का स्बस्ट्रेट से मिश्रण बनना आवश्यक है। एंजाइम की स्बस्ट्रेट से जितनी अधिक बंधुता हो, उतनी ही अधिक उत्प्रेरक क्रिया होगी।

(ङ) स्बस्ट्रेट सान्द्रता का प्रभाव: स्बस्ट्रेट की सान्द्रता (S) बढ़ने के साथ साथ सबसे पहले एंजाइम की क्रिया दर (V) भी बढ़ती है। लेकिन V का बढ़ना कम होता जाता है जब S बढ़ता है। अन्ततः एक बिन्दु ऐसा आता है जब क्रिया की दर सबसे अधिक होती है और स्बस्ट्रेट सान्द्रता बढ़ाने पर भी क्रिया की दर और अधिक नहीं बढ़ती (चित्र 7.3)। इसका कारण यह है कि एंजाइम के अणु सबस्ट्रेट के अणुओं से कम होते हैं। स्बस्ट्रेट की सान्द्रता बढ़ाने पर एंजाइम के सभी अणु संतृप्त हो जाते हैं। स्बस्ट्रेट के अणुओं के साथ जुड़ने के लिए एंजाइम का कोई भी अणु शेष नहीं रहता।
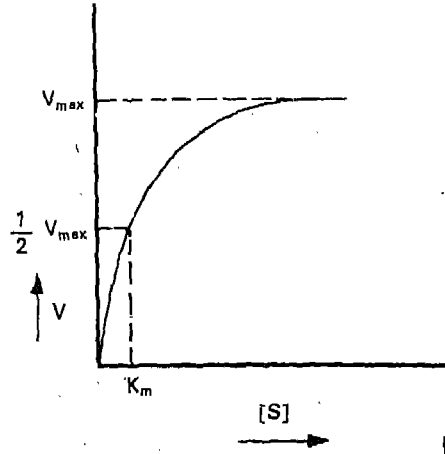
चित्र 7.3 एंजाइम की क्रिया दर पर स्बस्ट्रेट की सांद्रता का प्रभाव।
V max: सबसे अधिक गति

जिस स्बस्ट्रेट सान्द्रता पर सबसे अधिक दर की आधी दर आ जाए उसे एंजाइम का माइकेल नियम (Km) कहते हैं (चित्र 7.3)। स्बस्ट्रेट के साथ एंजाइम की बंधुता को नापने का यह एक मापदंड है। जितना Km कम होगा उतनी ही स्बस्ट्रेट एंजाइम बंधुता अधिक होगी। प्रत्येक एंजाइम की बंधुता अधिक होगी। प्रत्येक एंजाइम की बंधुता विभिन्न स्बस्ट्रेट के साथ भिन्न होगी। इसलिए विभिन्न स्बस्ट्रेट के साथ Km का मूल्य भी भिन्न होगा। प्रोटिएज विभिन्न प्रोटीनों पर क्रिया करता है। इसी प्रकार प्रोटिएज का Km मूल्य भी प्रोटीन के प्रकार पर निर्भर करता है।

एंजाइम क्रिया का संदमन

एंजाइम क्रिया का संदमन चार विभिन्न विधियों से कर सकते हैं। प्रोटीन की विकृति द्वारा होने वाले एंजाइम के संदमन के विषय में आप पहले ही पढ़ चुके हैं। अन्य तीन विधियां जिनसे एंजाइम का संदमन होता है,वे निम्नलिखित हैं—

(क) प्रतिस्पर्धीय संदमन : स्बस्ट्रेट की आण्विक रचना से मिलते-जुलते पदार्थ की उपस्थिति से एंजाइम की क्रिया दर कम या संदमित हो सकती है। ऐसे संदमी को उस एंजाइम का प्रतियोगी संदमी कहते हैं। स्बस्ट्रेट के बहुत समान होने के कारण संदमी स्बस्ट्रेट से एंजाइम के स्बस्ट्रेट आबन्ध स्थानों से प्रतियोगिता करता है (चित्र 7.4)। जिसके कारण वे स्बस्ट्रेट से उत्प्रेरित नहीं कर पाते हैं और एंजाइम की कार्यक्षमता कम हो जाती है जैसे मेलोनेट सक्सीनेट डिहाइड्रोजिनेज एंजाइम को संदमित कर देता है। मेलोनेट रचना की दृष्टि में सक्सीनेट डिहाइड्रोजिनेज के समान है (चित्र 7.4)। इसकी तुलना हम इस प्रकार कर सकते हैं जैसे कोई ताला ऐसी चाबी से जाम हो जाता है जो मूल चाबी के समान है। ऐसे प्रतियोगी संदमियों का उपयोग प्रायः जीवाणु में बनने वाला फोलिक एसिड का प्रतियोगी संदमी सल्फाड्रग्स है क्योंकि वे p- एमीनो बेन्जोइक एसिड के प्रति स्थायी है। इस प्रकार संश्लेषण की अगली क्रिया नहीं हो पाती।

(ख) अप्रतिस्पर्धीय संदमन : सायनाइड किसी भी सजीव को मार देता है। सायनाइड माइटोकान्ड्रिया में मिलने वाले एंजाइम साइटोक्रोम ऑक्सीडेज का संदमी है। साइटोक्रोम आक्सीडेज कोशिकीय श्वसन के लिए अति आवश्यक है। यह एंजाइम की अप्रतियोगी संदमी का उदाहरण है। इसमें संदमी (सायनाइड) की रचना तथा स्बस्ट्रेट साइटोक्रोम की रचना में कोई समानता नहीं है और यह स्बस्ट्रेट के आबन्ध स्थान से नहीं जुड़ता बल्कि एंजाइम के अन्य स्थान से जुड़ता है (चित्र 7.5)। इस प्रकार अप्रतियोगी में स्बस्ट्रेट निरोधी आबन्ध तो होता है लेकिन कोई उत्पाद नहीं बनता।

(ग) ऐलोस्टेरिक मॉडुलेशन अथवा पुनर्निवेश संदमन : कुछ एंजाइमों की क्रिया, विशेषतः जो क्रिया श्रृंखला बनाने में (उपापचयी भाग) भाग लेतें हैं, आन्तरिक रूप से नियमित होती है। कुछ पदार्थ, जो अन्य एंजाइमों के उत्पाद हैं विशेषतः जिनका आण्विक भार कम होता है, वे आगे श्रृंखला में संदमी का काम करते हैं। ऐसा माडुलक पदार्थ एंजाइम के विशेष स्थान से जुड़ जाता है जो स्बस्ट्रेट के जुड़ने वाले स्थान से भिन्न होता है। यह आबन्ध एंजाइम की क्रिया को कम या अधिक कर देता है। ऐसे एंजाइम को *ऐलोस्टेरिक एंजाइम* कहते हैं जैसे हैक्सोकाइनेज जो ग्लाइकोलिसिस में ग्लुकोस को ग्लुकोस-6 फास्फेट में बदल देता है। ऐलोस्टेरिक
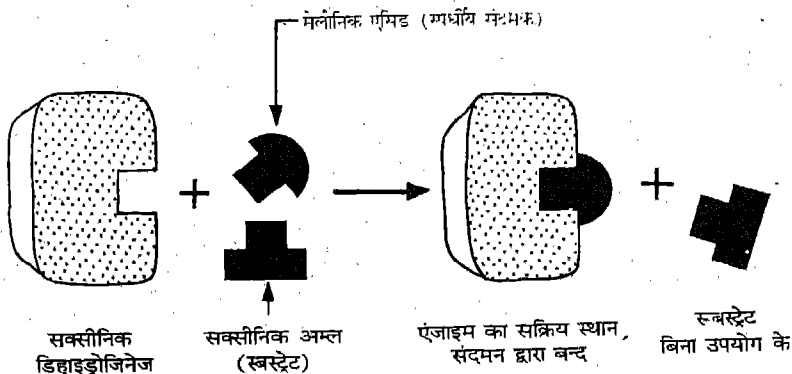
चित्र 7.4 एंजाइम क्रिया में प्रतिस्पर्धीय संदमन।
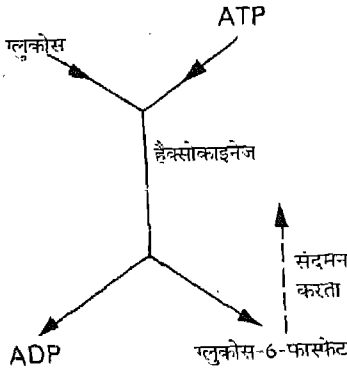
के प्रभाव से एंजाइम की क्रिया में कमी आने को पुनर्निवेश संदमन कहते हैं जैसे ग्लुकोस-6 फास्फेट द्वारा हैक्सोकाइनेज का ऐलोस्टेरिक संदमन (चित्र 7.5)।

चित्र 7.5 पुनर्निवेश मे ऐलोस्टेरिक संदमन

साराश

सजीव जगत अपनी कार्य क्षमता एंजाइम की उपस्थिति के कारण बनाए रखता है। एंजाइम जैव उत्प्रेरक है जो जीवित कोशिकाओं में संश्लेषित होता है और ये मुख्यतः प्रोटीन है। कुछ में अप्रोटीनी भाग, जिसे प्रास्थैटिक समूह अथवा सह एंजाइम कहते हैं, होता है। कुछ को कार्य करने के लिए सहकारक जैसे खनिज आयन की आवश्यकता होती है। क्रिया के अनुसार एंजाइम को विभिन्न वर्गों में रखा गया है जैसे आक्सीडोरिडक्टेज, ट्रांसफरेज, हाइड्रोलेज, लाइसेज, आइसोमेरेज तथा लाइगेज।

एंजाइम की बहुत ही कम मात्रा की आवश्यकता होती है और क्रिया समाप्ति पर इसका न तो उपयोग होता है और न ही उसमें कोई परिवर्तन होता है। ये ऊर्जा की आवश्यकता को कम करके क्रिया की दर बढ़ा देते हैं। एंजाइम की उत्प्रेरित क्रियाएं अनुत्प्रेरित क्रियाओं की अपेक्षा लाखों गुना तीव्रता से होती हैं।

एंजाइम की त्रिविमीय रचना एंजाइम को अकार्बनिक उत्प्रेरक की अपेक्षा अधिक सक्रिय बना देती है। प्रायः एंजाइम एक विशिष्ट स्बस्ट्रेट पर ही क्रिया करता है। प्रत्येक एंजाइम इष्टतम pH तथा तापक्रम पर कार्य करता है। उच्च तापक्रम पर एंजाइम मर जाता है। कम तापक्रम पर एंजाइम को निष्क्रिय अवस्था में अस्थायी तौर पर संरक्षित कर सकते हैं। एंजाइम की क्रिया को स्बस्ट्रेट की सान्द्रता से भी नियंत्रित कर सकते हैं। स्बस्ट्रेट एंजाइम के विशेष स्थान से जुड़ जाता है। एंजाइम स्बस्ट्रेट मिश्रण उसी समय अपघटित हो जाता है जिससे उत्पादन या अपरिवर्तीय एंजाइम बनता है।

कभी कभी कोई पदार्थ जो रचना में स्बस्ट्रेट से मिलते जुलते हैं, एंजाइम की क्रिया को संदमित करते हैं। ये पदार्थ स्बस्ट्रेट के आबन्ध स्थानों पर जुड़ जाते हैं। इसे प्रतिस्पर्धीय संदमन कहते हैं। प्रतिस्पर्धीय संदमन ऐसे पदार्थ से बनते हैं जिनकी रचना स्बस्ट्रेट की रचना के समान नहीं होती। एंजाइम की प्रतिक्रिया में बने उत्पाद एंजाइम की क्रिया का संदमन कर देते हैं जिससे ऐलोस्टेरिक मॉडुलेशन अथवा पुनर्निवेश संदमन बनते हैं।

प्रश्नावली

1 उचित शब्दों से रिक्त स्थानों को भरिए :

(क) जैव रासायनिक क्रियाओं को नियमित करने वाले उत्प्रेरक को ____________ कहते हैं।

(ख) एंजाइम के साथ एक विटामिन ____________ रूप से जुड़ा रहता है।

(ग) जिस अणु पर एंजाइम क्रिया करते हैं उसे ____________ कहते हैं।

(घ) जो एंजाइम पानी की अनुपस्थिति में यौगिक को विघटित कर देते हैं उन्हें ____________ कहते हैं।

(ङ) कोई यौगिक जो स्बस्ट्रेट की रचना के समान हो वह —————— ———का कार्य करता है।

2. निम्नलिखित में से सही उत्तर के आगे सही का चिन्ह (✓) लगाइए :

(क) सहएंजाइम है

(i) हमेशा प्रोटीन

(ii) प्रायः एक धातु

(iii) हमेशा अकार्बनिक यौगिक

(iv) प्रायः एक विटामिन

(ख) एंजाइम प्रायः क्रिया करता है

(i) एक ही pH तथा इष्टतम तापक्रम पर

(ii) एक ही pH लेकिन विभिन्न इष्टतम तापक्रम

(iii) विभिन्न pH लेकिन एक ही इष्टम तापक्रम

(iv) विभिन्न pH तथा विभिन्न इष्टतम तापक्रम

(ग) पुनर्निवेश संदमन का अर्थ है एंजाइम की क्रिया दर पर

(i) स्बस्ट्रेट का प्रभाव

(ii उत्पाद का प्रभाव

(iii) एंजाइम सान्द्रता का प्रभाव

(iv) बाहरी यौगिक का प्रभाव

(घ) एंजाइम की क्रिया का ताला-चाबी के सिद्धांत के लिए निम्न में से कौन सा सबसे अच्छा प्रमाण है?

(i) सभी विगलित एंजाइम में प्रोटीन है।

(ii) यौगिक जिनकी रचना स्बस्ट्रेट की रचना के समान है, क्रिया को नियोजित करते हैं।

(iii) सजीवों में एंजाइम होते हैं जो कुछ क्रियाओं की दर बढ़ाते हैं।

(iv) एंजाइम किसी क्रिया की दिशा को बताते हैं।

3. निम्नलिखित एंजाइम किस प्रकार की उत्प्रेरण क्रिया करते हैं :

(क) हाइड्रोलेज (ख) डीहाइड्रोजिनेज (ग) लाइसेज (घ) ट्रांसफ़िरेज

4. एंजाइम के उस भाग का क्या नाम है जिस पर उत्प्रेरक क्रियाएँ होती हैं?

5. एंजाइम की प्रतिस्पर्धीय संदमन कैसे बनती है? ऐसे संदमन किस प्रकार उपयोगी हैं?

6. एंजाइम की प्रतिस्पर्धीय संदमन ऐलोस्टेरिक संदमन से किस प्रकार भिन्न है?

7. प्रतिक्रिया की ऊर्जा आवश्यकता के लिए एंजाइम क्या करता है? यदि एंजाइम इस प्रकार की भूमिका न निभाए तो क्या होगा?

8. एंजाइम के तीन मुख्य गुण बताइए।

9. एंजाइम का नामकरण कैसे करते हैं? आजकल एंजाइम का कैसे वर्गीकरण किया गया है?

10. भोजन संरक्षण में तापक्रम क्या भूमिका निभाता है? इसका वर्णन करिए।

अध्याय 8
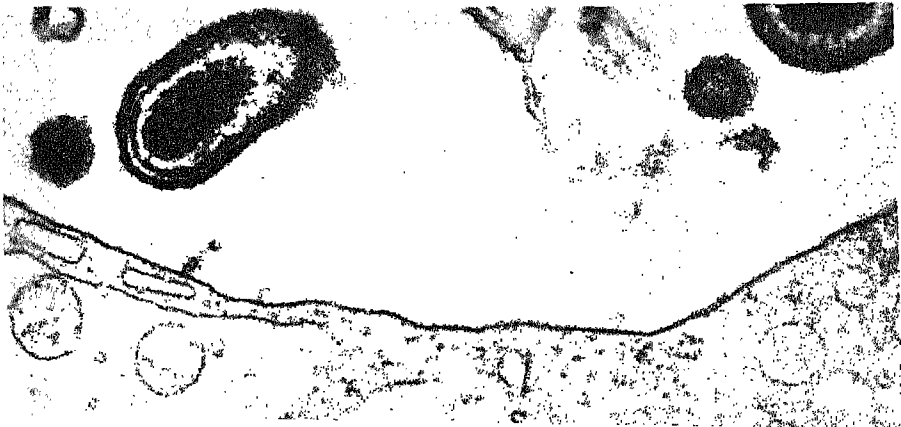
कोशिका झिल्लियाँ

आप जानते हैं कि सभी कोशिकाएँ एक पतली झिल्ली से घिरी रहती हैं जिसे *प्लैज्मा* कहते हैं। इसके अतिरिक्त यूकेरियोटिक कोशिकाओं में अंतः कोशिकीय झिल्लियाँ भी होती हैं जो रसधानी तथा अन्य कोशिकाओं को ढके रखती हैं। प्लैज्मा झिल्ली तथा उपकोशिकीय झिल्लियों को *जैव झिल्लियाँ* कहते हैं।

झिल्लियाँ कोशिकाओं का कोष्ठीकरण करती हैं। ये कोष्ठ अन्तर्वस्तुओं को वाह्य वातावरण से बिल्कुल अलग नहीं करते बल्कि झिल्ली से, पदार्थों तथा सूचनाओं का आदान-प्रदान होता रहता है। झिल्ली से कुछ पदार्थों का आदान-प्रदान हो सकता है तथा कुछ का नहीं (*वरणात्मक पारगम्यता*)। झिल्ली में से अणु भी संवाहित होते हैं। ये अणु विशिष्ट पदार्थों से जुड़ते हैं और उन्हें निर्देशित दिशा में झिल्ली के पार ले जाते हैं। इस प्रकार झिल्ली कोष्ठों के बीच वरणात्मक आदान-प्रदान करती है। परिणामस्वरूप वे पास के कोष्ठों में अणुओं के विभिन्न वितरण को बनाए रखती हैं।

झिल्ली की अर्धतरल अवस्था झिल्लियों के *गतिक परिवर्तन* बनाने में सक्षम है। वे लगातार नई-नई बनती रहती हैं, नष्ट होती रहती हैं, फैलती रहती हैं, कुंडलित होती रहती हैं तथा गतिशील रहती हैं। इसके परिणामस्वरूप आकृति, माप, तथा कार्य में परिवर्तन होते हैं।

इकाई झिल्ली सिद्धान्त

चूँकि जैव झिल्लियाँ बहुत पतली होती हैं और उन्हें देखना भी कठिन होता है इसलिए उनकी रचना के विषय में प्रारम्भिक सूचनाएं उनके भौतिक रासायनिक गुणों से प्राप्त हुई हैं। सन् 1930 के अन्तिम दिनों में डेनीली तथा डावसन ने बताया कि प्लैज्मा झिल्ली लिपिड की बनी होती है जिसके दोनों ओर प्रोटीन की एक-एक अछिन्न परत होती है। लिपिड अणु धरातल के समकोण पर सजे रहते हैं। इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से झिल्ली की भीतरी रचना का पता लगा है। इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी में प्रत्येक झिल्ली में तीन परतें दिखाई पड़ती हैं जिनमें बाहरी दो परतें काले (इलैक्ट्रान घनापन) रंग की तथा इनके बीच में एक परत हल्के रंग की है (चित्र 8.1)। ये दो बाहरी परतें प्रोटीन तथा बीचवाली परत फास्फोलिपिड की बनी हैं। इसी कारण इसे *इकाई झिल्ली* कहते हैं।

प्लैज्मा झिल्ली तथा कोशिकांग झिल्ली एक ही तरह का कार्य करती हैं क्योंकि इनकी मूल रचना समान होती है। इन समानताओं के होने के साथ साथ विभिन्न झिल्लियों में रचनात्मक, भौतिक-रासायनिक तथा कार्यात्मक विभिन्नता होती है। उदाहरण के लिए लिपिड तथा प्रोटीन का अनुपात 1:0.8 से लेकर 1:4 तक हो सकता है। इसलिए इकाई झिल्ली सिद्धान्त पूर्णरूप से लागू नहीं हो सकता।
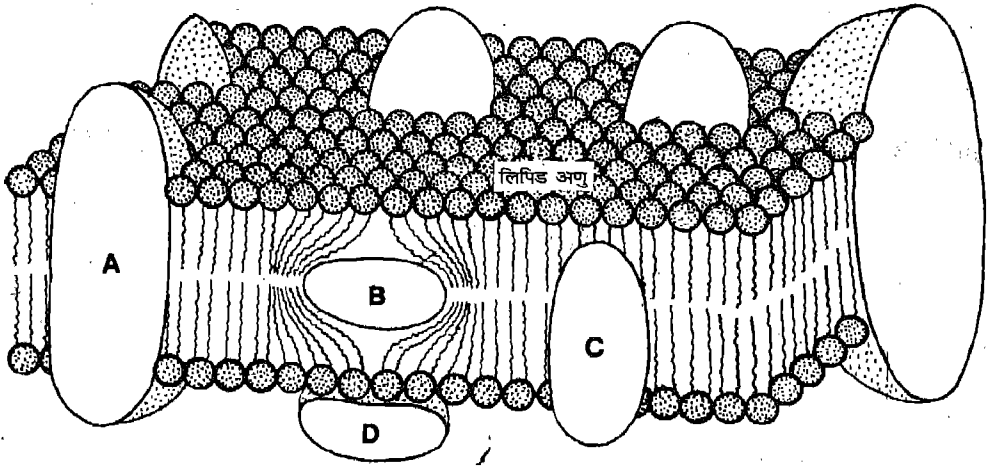
चित्र 8.1 झिल्ली संरचना का फ्लूइड मोजैक मॉडल। A,B तथा C समाकल प्रोटीन हैं तथा D परिधीय प्रोटीन है

फ्लूइड मोजैक मॉडल

सन् 1970 के आसपास सिंगर तथा निकॉलसन ने सभी तथ्यों का विश्लेषण करने के बाद *फ्लूइड मोजैक मॉडल* को सुझाया (चित्र 8.1)। इस मॉडल में भी केन्द्र में लिपिड की दोहरी परत होती है जो फास्फोलिपिड की बनी होती है। इनके गोलाकार ध्रुवीय सिर बाहरी सतह की ओर होते हैं। प्रत्येक अणु की दो अध्रुवीय पूंछ अन्दर की ओर होती है। इस प्रकार के क्रम में एक जल अवरोधी-अवरोधक बन जाता है जिससे केवल लिपिड में घुलने वाले पदार्थ ही गुजर सकते हैं। (अध्याय 5 में बताया गया था कि ध्रुवीय सिर जलरागी होते हैं जबकि अध्रुवीय पूंछ जलभीरू)।

क्रिया-कलाप : लिपिड झिल्ली को दिखाने तथा उसका महत्व बताने के लिए चुकन्दर की जड़ की एक काट लीजिए और उसे बैंजीन में रखिए। लगभग आधे घंटे बाद जड़ की कांट को बैंजीन से बाहर निकालिए। उसे पेपर से सुखा लीजिए। अब काट को आधे घंटे के लिए पानी में रखिए। पानी का रंग लाल हो जाता है क्योंकि पानी में घुलनशील वर्णक जड़ की कोशिकाओं से बाहर आ जाते हैं। यदि चुकन्दर की जड़ को बैंजीन में डाले बिना ही पानी में रख दें तो पानी का रंग लाल नहीं होगा। इससे सिद्ध होता है कि प्लैज्मा झिल्ली तथा टोनोप्लास्ट जो कोशिका में वर्णक को रखते हैं, लिपिड के बने होते हैं। बैंजीन झिल्ली के लिपिड को घोल लेती है जिससे कि कोशिका में स्थित वर्णक बाहर आ सकें।

प्रोटीन या तो लिपिड की तह में अंतःस्थापित रहती है (समाकल प्रोटीन) अथवा सतह पर जुड़ी रहती है (परिधीय प्रोटीन)। परिधीय प्रोटीन को झिल्ली से आसानी से हटाया जा सकता है। लेकिन समाकल प्रोटीन को प्राप्त करने के लिए झिल्ली को विखंडित करना पड़ता है।

ऐसा सोचा जाता है कि कुछ बड़ी, गोलाकार समाकल प्रोटीन जो लिपिड के दोनों तरफ उभरी रहती हैं, उनमें कुछ नलिकाएं होती हैं जिनमें से पानी में घुलनशील पदार्थ गुजर सकते हैं। कुछ मोटी समाकल प्रोटीन लिपिड की दोहरी परत में आंशिक रूप से धंसी रहती हैं और केवल उनकी एक तरफ ही दिखाई पड़ती है।

कुछ झिल्लीय लिपिड तथा समाकल प्रोटीन, ओलिगो-सैकेराइड से जुड़े रहते हैं। ऐसे ओलिगोसैकेराइड बाह्य प्लैज्मा झिल्ली की सतह से बाह्य तरल में निकले रहते हैं। कोशिकाएं आपस में ग्लाइको प्रोटीन तथा ग्लाइको लिपिड के आधार पर

एक दूसरी कोशिकाओं को पहचान लेती हैं। इस प्रक्रिया को प्रयोगों द्वारा भी दिखाया गया है। ऐसे ही एक प्रयोग में विभिन्न ऊतकों से कुछ कोशिकाएं ली गईं और उन्हें अच्छी तरह मिलाकर पोषक माध्यम पर उगाया गया। कोशिकाएं धीरे-धीरे दूर हटती गईं, जब तक कि उन्हें अपनी ही प्रकार की कोशिकाएं नहीं मिल गईं। इसके कारण विशिष्ट प्रकार के ऊतकों के विभिन्न गुच्छे बन गए। कोशिकाओं का अपने ही प्रकार की कोशिका पहचानने का गुण रुधिर वर्ग, प्रतिरक्षी, अनुक्रिया, कैंसर तथा प्रतिरोपित अंगों को अस्वीकार करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

झिल्ली में कुछ विशिष्ट प्रोटीन होती है जिसे *झिल्ली ग्राही* कहते हैं, जो पदार्थों के प्रवाह तथा सूचना को नियंत्रित करती है। इस प्रक्रिया में यह कोशिका सतह तक पहुंचने वाले विशिष्ट अणु से जुड़ जाती है। उदाहरणतः कुछ ग्राही ऐड्रिनलीन जैसे हार्मोन से जुड़ जाती है।

कुछ झिल्ली प्रोटीन एंजाइम की तरह कार्य करती है। प्रत्येक झिल्ली में कार्य के अनुसार विभिन्न प्रकार के एंजाइम होते हैं। उदाहरणतः माइटोकॉन्ड्रिया की झिल्ली में इलैक्ट्रान संवाहक एंजाइम होते हैं जो श्वसन में भाग लेते हैं।

फ्लूइड मोजैक मॉडल के लेखकों ने इसे "लिपिड के समुद्र में प्रोटीन के प्लावी बर्फ" की संज्ञा दी है। झिल्ली की तरलता को बहुत ही सरल प्रयोग द्वारा दिखा सकते हैं (चित्र 8.2) दो विभिन्न कोशिकाओं को लेबल करिए, एक को लाल प्रतिदीप्तिशील रंग से तथा दूसरी को हरे रंग से। अब दोनों कोशिकाओं को जोड़िए। उसी समय जुड़ी हुई कोशिका को माइक्रोस्कोप से देखिए। आप देखेंगे कि कोशिका का आधा भाग हरा तथा आधा भाग लाल है। कुछ देर बाद 37° सें० पर यह देखा गया कि लाल तथा हरा रंग आपस में बिलकुल मिल गया है। ऐसा तभी सम्भव है जब लिपिड फ्लूइड हो और लेबल की हुई प्रोटीन इसमें गति कर सके। इसकी तरलता इससे भी सिद्ध होती है कि जब जुड़ी हुई कोशिका को उसी समय 0° सें० पर रखा गया तो रंग आपस में नहीं मिले। लिपिड कम तापक्रम पर ठोस बन जाते हैं और अपनी तरलता खो देते हैं। तरलता 37° सें० पर रखने से पुनः आ जाती है और रंग आपस में फिर मिल जाते हैं।

झिल्ली सवंहन

झिल्लियाँ अंगकों तथा कोशिका द्रव्य के बीच तथा कोशिका
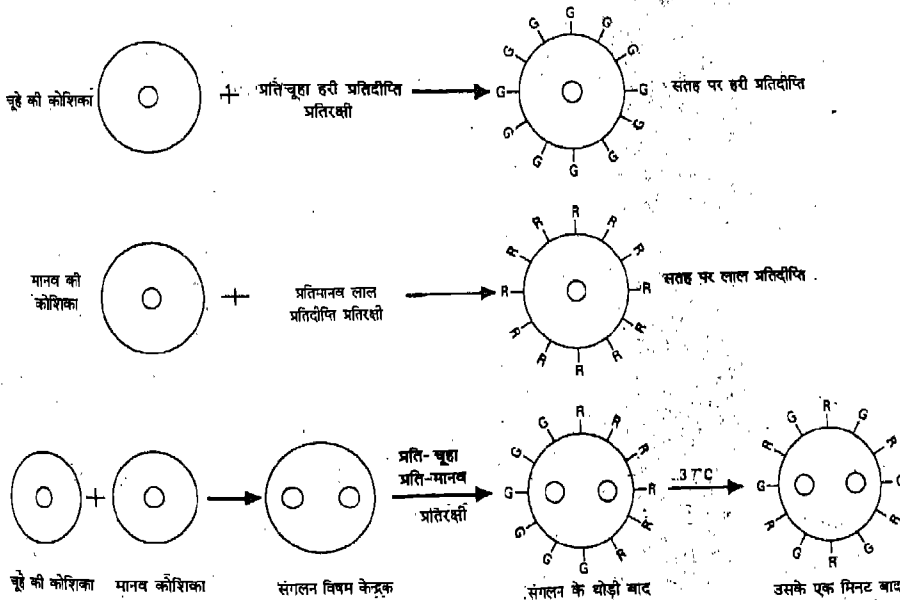
चित्र 8.2 प्लैज्मा झिल्ली में प्रवाह को दिखाने का प्रयोग

तथा बाह्य कोशिकीय तरल के बीच एक भौतिक सीमा बनाती हैं। ये *वरणात्मक पारगम्य* होती हैं। झिल्ली से पदार्थों का आदान-प्रदान निष्क्रिय भौतिक प्रक्रिया जैसे परासरण तथा विसरण से अथवा सक्रिय सवंहन द्वारा होता है।

(क) *निष्क्रिय संवहन :* इस प्रकार के संवहन में न तो सक्रियता की और न ही किसी ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

(i) *विसरण* में विलेय अथवा गैस के कण लगातार गतिशील रहते हैं। इस प्रक्रिया में पदार्थ अपने सांद्र क्षेत्र से कम सांद्र क्षेत्र की ओर जाते हैं अर्थात् अपनी ही सांद्रता को कम करते हैं। इससे ये पारगम्य झिल्ली से गुजर सकते हैं। यदि एक कपड़े के थैले में कॉपर सल्फेट (नीला थोथा) बाँधकर पानी के बीकर में रखें तो पानी जो थैले के बिलकुल पास होगा, उसी समय नीला हो जाएगा। इसके बाद यह रंग पानी में फैलना आरम्भ करता है और यह तब तक फैलता है जब तक कि सारा पानी समान रूप से नीले रंग का न हो जाए। इससे यह पता चलता है कि घुलित कॉपर सल्फेट थैले के छिद्रों से बाहर निकल कर विसरित हो जाता है और पानी का रंग एक जैसा हो जाता है (चित्र 8.3)।

पानी में घुलने वाले बहुत से विलेय तथा आयन जैसे K^+, Cl^- तथा HCO_3^- झिल्ली के छिद्रों में भरे पानी के द्वारा विसरित हो जाते हैं। इसके लिए यह महत्वपूर्ण है कि छिद्रों का व्यास विसरित होने वाले पदार्थों के कणों के व्यास से बड़ा होना चाहिए। कोई आयन, समान चार्ज में सांद्र की ओर से विपरीत चार्ज में सांद्र की ओर विसरित होता है। झिल्ली के दोनों ओर इस विद्युत चार्ज की विभिन्नता को *विद्युत ग्रेडिएन्ट* कहते हैं। उदाहरणतः K^+ झिल्ली की धन विद्युत की सांद्रता की ओर से ऋण विद्युत की सांद्रता की ओर जाता है। परिणामस्वरूप, कोई आयन अपनी ही *विद्युत रासायनिक ग्रेडिएन्ट*, इसकी सांद्रता का परिणामी तथा विद्युत ग्रेडिएन्ट को कम करता है।

गैस का कुल विसरण हमेशा इसके दाब ग्रेडिएन्ट पर निर्भर करता है। यदि दो गैसों के मिश्रण को किसी पारगम्य झिल्ली से अलग कर दें तो प्रत्येक गैस उच्च दाब से कम दाब की ओर विसरित हो जाएगी। कोशिकीय श्वसन में आक्सीजन बाह्य कोशिकीय तरल से कोशिका में विसरित हो जाती है, क्योंकि बाह्य कोशिकीय तरल में इसका दाब, कोशिका की अपेक्षा अधिक है। कार्बन डाइऑक्साइड कोशिका से बाहर आ जाती है क्योंकि कोशिका में इसका दाब बाह्य कोशिकीय तरल से अधिक है।

(ii) *परासरण* में विलायक के अणु विलेय के कम सांद्र क्षेत्र से विलेय के अधिक सांद्र क्षेत्र की ओर अर्धपारगम्य झिल्ली के द्वारा जाते हैं। जीवों में प्रायः विलायक पानी ही होता है। पानी अपने अधिक सांद्र क्षेत्र से कम सांद्र क्षेत्र की ओर जाता है जिससे कि झिल्ली के दोनों ओर विलेय की सांद्रता समान हो जाए।

परासरण को किसी जन्तु की झिल्ली जैसे मछली के ब्लैडर की झिल्ली अथवा अंडे की झिल्ली से दिखा सकते हैं। ये झिल्लियां सुक्रोस के लिए अपारगम्य होती हैं लेकिन पानी के लिए पारगम्य हैं। इस झिल्ली को किसी थिसल फ़नल के मुंह पर बांध देते हैं। फनल को अब उलट कर इसमें शक्कर का सांद्र घोल भर देते हैं। फिर इसे पानी से भरे बीकर में रख देते हैं (चित्र 8.4)। पानी का स्तर फनल में बढ़ जाता है क्योंकि परासरण से पानी इसमें गमन करता है। फनल में पानी तब तक चढ़ता है जब तक कि फनल के स्तम्भ में द्रव स्थैतिक दाब और पानी को अन्दर आने से नहीं रोक देता। झिल्ली के दोनों ओर सांद्रता में विभिन्नता होने के बावजूद भी ऐसा होता है। इस अवस्था में, पानी के अणुओं द्वारा लगाया गया दाब जो द्रव स्थैतिक दाब को संतुलित कर दे, *परासरण दाब* कहलाता है। जब ऐसी स्थिति आ जाती है तब पानी के अणु दोनों ओर समान रूप से आ-जा सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विलायक का परासरण दाब,

चित्र 8.3 पानी से भरे बीकर में कॉपर सल्फेट का विसरण दिखाने का प्रयोग
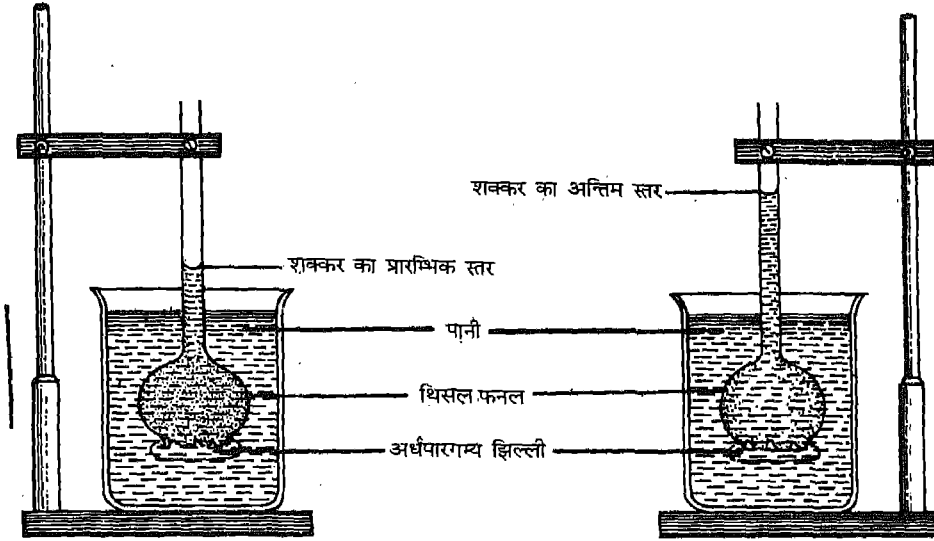
चित्र 8.4 परासरण

द्रव स्थैतिक दाब के बीच तथा शुद्ध विलेय के बीच, का वह अन्तर है जो विलेय से पानी के परासरण प्रवाह को, अर्धपारगम्य झिल्ली से विलायक की ओर जाने से रोक दे। जो विलायक जितना सांद्र होगा उसका परासरण दाब भी उतना ही अधिक होगा।

कोशिका के बाह्य परासरण वातावरण को इसकी *परासरता* के संदर्भ में वर्णित कर सकते हैं। जब कोशिका झिल्ली के दोनों ओर पानी तथा विलेय की सांद्रता समान हो तो ऐसे विलायक को *समपरासारी* कहते हैं। ऐसे विलायक में झिल्ली द्वारा पानी के अणुओं की गति नहीं होती। सोडियम क्लोराइड का 0.9 प्रतिशत तथा ग्लुकोस का 5 प्रतिशत, मनुष्य का लाल रुधिर कोशिकाओं के लिए सम परासारी है। विलायक, जिसमें विलेय की सांद्रता भीतरी कोशिकीय तरल की अपेक्षा कम हो, तो उसे *अल्प परासारी* कहते हैं और जिसमें विलेय की सांद्रता अधिक हो, उसे *अतिपरासारी* कहते हैं।
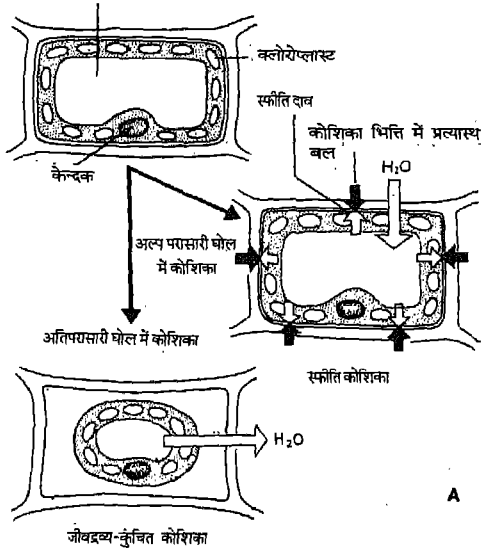
जब किसी कोशिका को अल्प परासारी घोल में रखते हैं, तब पानी *अंतःपरासरण* विधि द्वारा कोशिका में जाता है। जन्तुओं में अंतःपरासरण से कोशिका फट भी जाती है, क्योंकि कोशिका के फूलने पर झिल्ली कोशिका में स्थित पदार्थों पर दाब सहन नहीं कर पाती। उदाहरणार्थ लाल रुधिर कोशिकाओं को जब पानी में रखते हैं तो ऐसा ही होता है कि वे फट जाती हैं और एक प्रतिक्रिया छाया सी रह जाती है। पौधे में झिल्ली नहीं फटती इसमें कोशिका भित्ती होती है।

चित्र 8.5 पादप कोशिका तथा प्राणी कोशिका में अतिपरासारी घोल का प्रभाव
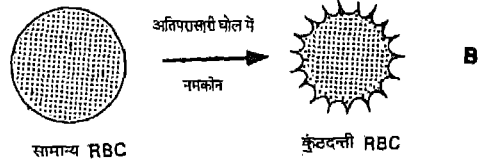
आपने देखा होगा कि जब कटी हुई ककड़ी पर नमक छिड़कते हैं तो पानी बाहर निकलता है। अतिपरासारी के कारण बहिःपरासरण विधि द्वारा पानी बाहर निकलता है। यदि किसी पादप कोशिका को अतिपरासारी घोल में रखें तो प्लैज्मा झिल्ली सहित कोशिका द्रव्य कोशिका भित्ती से अलग हो जाता है। इसका कारण यह है कि रसधानी (रिक्तिका) से पानी बाहर निकल जाता है। रिक्तिका सिकुड़ जाती है लेकिन फिर भी कोशिका द्रव्य से घिरी रहती है। इस प्रक्रिया को जीव *द्रव्य कुंचन* कहते हैं (चित्र 8.5)। लाल रुधिर कणिका बहिःपरासरण के कारण सिकुड़ जाती है अथवा उनका *कुंठदन्तन* हो जाता है।

(ख) सक्रिय संवहनः हम प्रायः देखते हैं कि पदार्थ सांद्र ग्रेडिएन्ट के विपरीत भी ऊपर संवहित किये जाते हैं। इससे कई बार कोशिका में पदार्थों के एकत्र होने के कारण बाहर की अपेक्षा सांद्रता अधिक हो जाती है। ऐसी प्रक्रिया के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अतः इसे *सक्रिय संवहन* कहते हैं जो निष्क्रिय परासरण के विपरीत है जिसमें ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती। सक्रिय सवंहन वैद्युत रासायनिक ग्रेडिएन्ट के विपरीत भी होता है। यह प्रक्रिया परासरण से बहुत तेज होती है और प्रायः एक की दिशा में होती है। शीत, सायनाइड तथा आक्सीजन की कमी का सक्रिय पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

हमें अध्याय 6 में बताया गया था कि कुछ प्रोटीन झिल्ली अणु वाहक का कार्य करती हैं। एक विशिष्ट प्रोटीन प्रत्येक अणु अथवा आयन का संवाहक है। झिल्ली की एक सतह पर आबन्ध स्थान होते हैं। स्बस्ट्रेट से जुड़ने के बाद संवाहक में संरूपीय परिवर्तन होता है (चित्र 8.6)। यह संवाहक आबन्ध स्बस्ट्रेट को झिल्ली के दूसरी ओर ले जाता है, जहां पर स्बस्ट्रेट को छोड़ दिया जाता है और संवाहक झिल्ली में ही रह जाता है। इस प्रक्रिया में ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो ए.टी.पी. से मिलती है। इस प्रक्रिया में ए.टी.पी., ए.डी.पी. में बदल जाता है।

बहुत सी कोशिकाओं की प्लैज्मा झिल्ली में *सोडियम पोटैशियम आदान-प्रदान* पम्प होते हैं। इसे साइकिल या पानी चढ़ाने वाले पम्प के समान नहीं समझना चाहिए। बल्कि, ये पम्प दाब अथवा गुरुत्वाकर्षण के विपरीत कार्य करते हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सोडियम तथा पोटैशियम आयन
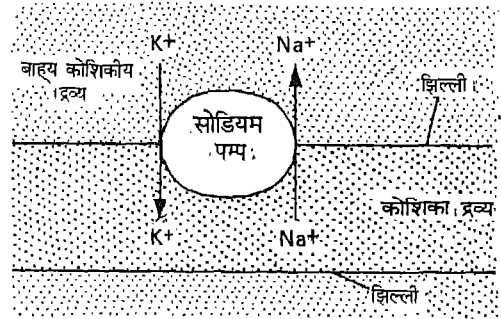
चित्र 8.7 सोडियम-पोटैशियम पम्प
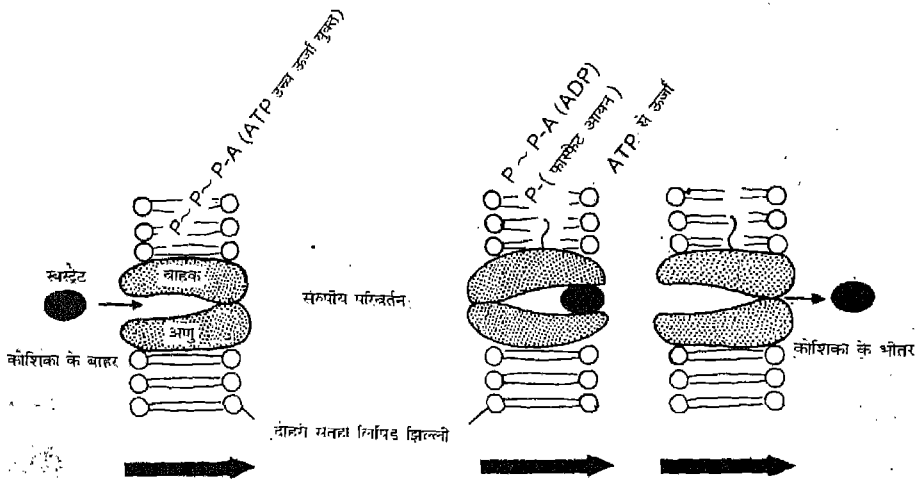
चित्र 8.6 सक्रिय झिल्ली संवहन में वाहक की भूमिका।

अपने वैद्युत रासायनिक ग्रेडिएन्ट के विपरीत स्थानान्तरित होते हैं। इस क्रिया में ऊर्जा ए.टी.पी. से मिलती है। इस पम्प में काम आने वाली समाकल प्रोटीन Na^+- K^+ पर निर्भर ए.टीप्रेज है (चित्र 8.7)। एक ए.टी.पी. के उपयोग से सोडियम के तीन आयन बाहर निकलते हैं और पोटैशियम के दो आयन अन्दर आते हैं। इसलिए कोशिका के बाहर सोडियम की सांद्रता, कोशिका के भीतर की अपेक्षा, अधिक होती है।

समुद्री पक्षी जैसे सीगल तथा पेंग्विन समुद्र का पानी पीते हैं, लेकिन वे अपने नथूनों में स्थित लवण ग्रन्थि द्वारा अधिक आये सोडियम क्लोराइड को स्रावित कर देते हैं। ग्रन्थि की कोशिका की झिल्ली में सोडियम पम्प सोडियम को जल्दी-जल्दी बाहर निकाल देता है, इसी के साथ-साथ क्लोरीन भी निष्क्रिय गति से बाहर जाती है। उनके नथूनों का स्राव, सोडियम क्लोराइड विलयन निकालता है, जो उसके रुधिर से 1.5 से 3 गुना अधिक सांद्र होता है।

सक्रिय संवहन से शीघ्र, वरणात्मक तथा अधिक पोषक पदार्थ कोशिका में जाते हैं। यह आयनी तथा पानी का संतुलन, कोशिका तथा बाह्य कोशिका तरल में,बनाए रखने में सहायता करता है। यह प्रक्रिया झिल्ली की भीतरी सतह को ऋण विद्युती बनाए रखती है जिससे झिल्ली-विभव कायम रहता है।

ऐक्सोसाइटोसिस तथा ऐन्डोसाइटोसिस

इन प्रक्रियाओं में कोशिका से ऐसे पदार्थ जो अटूट प्लैज्मा झिल्ली से नहीं गुजर सकते, क्रमशः बाहर निकलते हैं तथा अन्दर जाते हैं। ऐसे पदार्थ वृहत्, बड़ी तरल बूँदें तथा कणिकीय पदार्थ हैं। इन दोनों प्रक्रियाओं में झिल्ली में गति होती है तथा वे मुड़ती हैं जो झिल्ली की तरलता तथा गतिशीलता पर निर्भर करती हैं। इन प्रक्रियाओं में ए.टी.पी. से ऊर्जा मिलती है।

ऐक्सोसाइटोसिस में पदार्थ कोशिका से बाहर निकाले जाते हैं। स्रावित पदार्थ, कोशिका द्रव्य में स्थित झिल्ली से घिरी पुटिका में संचित हो जाते हैं। प्रत्येक पुटिका प्लैज्मा झिल्ली की ओर गति करती है और उससे जुड़ जाती है। इस जुड़ी हुई झिल्ली में पुटिका तथा कोशिका के बाहर के बीच एक चैनल बन जाता है और बहिर्गमित योग्य पदार्थ बाहर आ जाते हैं।

ऐन्डोसाइटोसिस में बाहर से पदार्थ कोशिका में अन्दर आते हैं। बाह्य कोशिकीय तरल की बूँदें तथा अति सूक्ष्मदर्शीय कणों के ऐन्डोसाइटोसिस को *कोशिकापायल* कहते हैं। *कोशिकाशन* में कोशिका ठोस पदार्थों को निगल लेती है।

कोशिकापायन सांद्र विलेय जैसे इन्सूलिन तथा लिपोप्रोटीन का अन्तर्ग्रहण करने में सहायता करता है। ऐसे बाह्य कोशिकीय विलेय झिल्ली से विशेष ग्राही भागों पर चिपक जाते हैं और एक खांच बना देते हैं (चित्र 8.8)। यह खांच अन्दर की
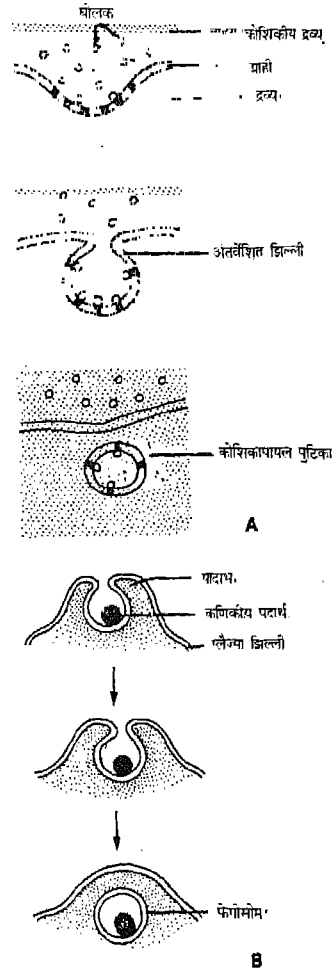
चित्र 8.8 A. झिल्ली ग्राही की सहायता से विशिष्ट विलेय का कोशिकापायन

B. कणिकीय पदार्थों का कोशिकाशन

ओर बढ़ती है और पुटिका बनाती है। अब यह पुटिका जिसमें विलेय होता है, अलग हो जाती है। कोशिकापायल पुटिका कोशिका द्रव्य में जाती है जहां इसके पदार्थ का स्वांगीकरण हो जाता है।

कोशिकाशन विधि का उपयोग प्रायः भोजन को निगलने के लिए प्रोटोजोआ जैसे *अमीबा* तथा क्षतिग्रस्त कोशिकाओं, तन्तुओं, जीवाणुओं तथा मिट्टी के कण हटाने के लिए कुछ विशेष स्तनधारी कोशिकाओं जिन्हें *भक्षकाणु* कहते है, जैसे वृहत् भक्षकाणु तथा श्वेत रूधिर कणिका, द्वारा किया जाता है। कणिकीय पदार्थ सबसे पहले वृहत् भक्षकाणु विशिष्ट झिल्ली ग्राही से जुड़ जाता है। प्रतिरक्षी जीवाणुओं को ग्राही से जोड़ देते हैं। इस जुड़ाव के कारण बहुत से जीव द्रव्यी उर्द्धव (पादाभ) निकलते हैं। ये संगलित होकर एक मुक्त तैरने वाली झिल्लीयुक्त पुटिका बनाते हैं। जिसमें पुटिका कणिकीय पदार्थ तथा **फैगोसोम** होते हैं जो बाद में *लाइसोसोम* के साथ संगलित हो जाते हैं। लाइसोसोम में पदार्थों को जल ापघटित करने के लिए एंजाइम निकलते हैं (चित्र 8.9)।

कोशिकीय गति में झिल्ली की भूमिका

कोशिकीय गति में प्लैज्मा झिल्ली दो प्रकार से भाग लेती है :

(क) *अमीबा* तथा कोशिकाएं जैसे वृहद भक्षकाणु तथा श्वेत रुधिर कणिकाएं पादाभ द्वारा गति करते हैं। गति करती हुई कोशिका के आगे बढ़ते भाग पर लगातार पादाभ बनते रहते हैं। यह आंशिक रूप से कोशिका द्रव्य के प्रवाह तथा प्लैज्मा झिल्ली के प्रसार पर निर्भर करता है (चित्र 8.9 अ। पहले से बने हुए पादाभ लुप्त होते जाते हैं और आगे नये नये पादाभ बनते जाते हैं।

(ख) कुछ स्तनधारी कोशिकाएं जैसे फिब्रोब्लास्ट, प्लैज्मा झिल्ली तरंगण द्वारा ठोस पदार्थ की सतह पर चल सकती है (चित्र 8.9 ब। इसमें कोशिका द्रव्य प्रवाह की आवश्यकता नहीं होती। झिल्ली की तरंगण के कारण सतही उर्द्धव बनते हैं जो कोशिका को अस्थायी रूप से ठोस की सतह पर चिपका देते हैं। कोशिका को चलाने के लिए उर्द्धव तरंगों में चलते हैं।
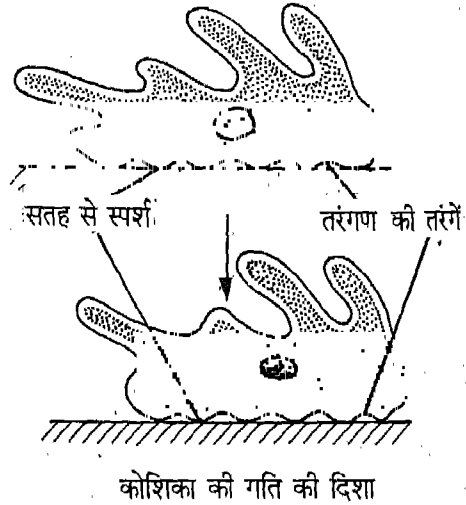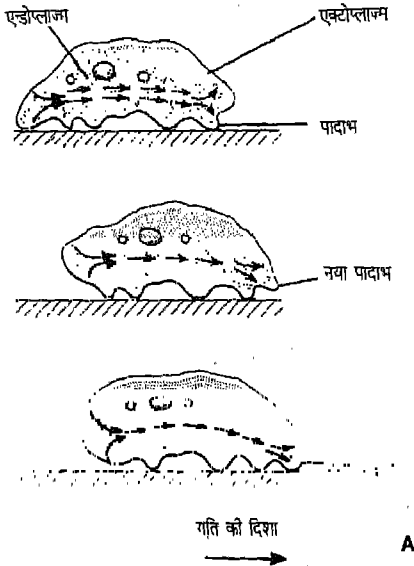
चित्र 8.9 A, कोशिका द्रव्य प्रवाह से अमीबा में गति तथा पादाभों का बनना
B लहरें सतह पर फिब्रोब्लोस्ट की गति करते हैं।

सारांश

जैव झिल्लियों में प्लैज्मा झिल्ली तथा अंगकों की झिल्ली शामिल हैं। प्लैज्मा झिल्ली कोशिका के पदार्थो को बाह्य कोशिकीय तरल से अलग करती है। अंगक झिल्लियां अपने-अपने अंगकों में कुछ विशिष्ट अभिक्रियाओं और प्रक्रियाओं का विसंयोजन करती हैं।

इकाई झिल्ली सिद्धान्त के अनुसार सभी जैव झिल्लियों की मूल रचना समान होती है। इसमें बाहरी दो परतें प्रोटीन की होती हैं तथा इन दोनों परतों के बीच में एक परत लिपिड की होती है।

फ्लूइड मोजैक मॉडल के अनुसार झिल्ली में अर्धतरलीय फास्फोलिपिड की दो परतें होती हैं जिसमें प्रोटीन धंसी रहती है। समाकल प्रोटीन दोहरी परत में धँसी रहती है। परिधीय प्रोटीन दोहरी परत की सतह पर शिथिलबंध रूप में लगी रहती है। झिल्ली में बहुत अधिक तरलता होती है।

झिल्ली पदार्थों के आदान-प्रदान में भाग लेती है। निष्क्रिय संवहन में विसरण तथा परासरण आते हैं। निष्क्रिय संवहन मुख्यतः झिल्ली के छिद्रों द्वारा होता है। विसरण लगातार कणों में गति होने के फलस्वरूप होता है। विलेय तथा गैस, विद्युत-रासायनिक तथा दाब ग्रेडिएन्ट द्वारा झिल्ली से विसरित होते हैं।

परासरण में विलायक अर्द्धपारगम्य झिल्ली में से होकर कम सांद्र से अधिक सांद्र की ओर जाता है। जब कोशिका को समपरासारी घोल में रखते हैं तो कोई भी परासारी प्रवाह नहीं होता और कोशिका की आकृति तथा माप में कोई अन्तर नहीं आता। जब किसी जन्तु कोशिका को अल्पपरासारी घोल में रखते हैं तब पानी के अन्तःपरासरण के कारण कोशिका फट जाती है और अतिपरासारी घोल में, पानी के बाह्य परासरण के कारणं, जन्तु कोशिका में कुछ कुंठदन्तन और पादप कोशिका में जीव द्रव्य कुंचन, हो जाता है।

सक्रिय संवहन में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। झिल्ली की एक प्रोटीन संवाहक का कार्य करती है। यह स्बस्ट्रेट को बाँधती है और झिल्ली के पार एक निर्दिष्ट दिशा में स्थानांतरित करती है। सक्रिय संवहन वैद्युत-रासायनिक ग्रेडिएन्ट के विपरीत भी होता है। सोडियम-पोटैशियम आधारित एटीपेज एंजाइम सोडियम को बाहर निकालते हैं तथा पोटैशियम को अन्दर ले जाते हैं।

ऐक्सोसाइटोसिस में, झिल्ली बंधित पुटिका जिसमें स्रावित पदार्थ होते हैं, प्लैज्मा झिल्ली से मिल जाती है और ये पदार्थ कोशिका से बाहर निकाल दिये जाते हैं। ऐन्डोसाइटोसिस में वृहदणु तथा कणिकीय पदार्थ कोशिका के अन्दर लिये जाते हैं। कोशिकापायन में, घुलित विलेय तथा तरल कोशिका के अन्दर जाते हैं। कोशिकाशन में ठोस पदार्थ कोशिका में जाते हैं।

कुछ झिल्ली प्रोटीन ग्राही के रूप में कार्य करती है, कुछ संवहन के रूप में तथा कुछ अन्य कोशिका को पहचानने का कार्य करती है। प्लैज्मा झिल्ली पादाभ अथवा तरंगण बनाकर कोशिका गति में भाग लेती है।

प्रश्नावली

1. प्लैज्मा झिल्ली के दो मुख्य घटक बताओ। चित्रों द्वारा बताओ कि वे कैसे सजे रहते हैं?
2. जब कोशिका को कोशिका रस से अधिक गाढ़े शक्कर वाले घोल में रखते हैं तो जीव द्रव्य-कुंचन हो जाता है:
   (क) इस संदर्भ में अधिक गाढ़े का क्या अर्थ है?
   (ख) पादप कोशिका में होने वाले जीव द्रव्य-कुंचन की प्रत्येक अवस्थाओं के चित्र बनाओ।
3. यदि पोटैशियम परमैंगनेट (KMnO4) का एक क्रिस्टल, जो बैंगनी रंग का होता है, जिलैटिन पर रखा जाए तो जिलैटिन शनैः-शनैः बैंगनी रंग की हो जाती है। क्रिस्टल के सामीप्य वाला क्षेत्र अधिक रंगीन होगा:
   (क) इस अवलोकन को समझाओ।
   (ख) यह प्रक्रम सजीव कोशिकाओं के लिए कैसे महत्वपूर्ण है?
4. प्रायः ऐसा देखा गया है जब पौधों पर कीटनाशियों की अधिक मात्रा छिड़की जाती है तो पत्तियों पर पीला सा क्षेत्र बन जाता है। अनुसंधानों से पता लगता है कि वहाँ की कोशिकाएं मर गई हैं। चूंकि कीटनाशी पौधों के लिए जहरीला नहीं है, तो कोशिका की मृत्यु के क्या कारण हो सकते हैं।
5. **ऐसा क्यों विश्वास किया जाता है कि अमीबा में कोशिकाशन विधि द्वारा लिया गया भोज्य पदार्थ कोशिका के बाहर रहता है जब तक कि उसमें पाचन आरम्भ नहीं हो जाता। समझाइये?**

6. दो जलीय घोलों, एक घोल में 3 प्रतिशत ग्लूकोज है तथा दूसरे में 8 प्रतिशत, को अर्द्धपारगम्य झिल्ली से अलग कर दिया गया है:
   (क) किस घोल में परासरी दाब अधिक होगा?
   (ख) किस दिशा में परासरण होगा?
   (ग) किस घोल का आयतन बढ़ेगा?
7. मनुष्य की लाल रुधिर कणिकाओं के लिए 9 प्रतिशत सोडियम क्लोराइड तथा 5 प्रतिशत ग्लूकोस का घोल समपरासारी है। निम्नलिखित प्रत्येक घोल को देखकर बताओ कि वे अतिसारी, अल्पपरासारी अथवा समपरासारी हैं? जब लाल रुधिर कणिकाओं को इनमें रखेंगे तो उनमें क्या परिवर्तन होंगे?
   (क) 5% NaCl (ख) 5% ग्लूकोस (ग) 0.89% NaCl (घ) 0.2% ग्लूकोस
   (ङ) 10% ग्लूकोस (च) 0.2% NaCl
8. निम्नलिखित में से कौन से सही तथा कौन से गलत हैं:
   (क) प्लैज्मा झिल्ली एक दृढ़ संरचना है।
   (ख) कोशिका में कोष्ठीयकरण के लिए झिल्ली बहुत उपयोगी है।
   (ग) कोशिका पायन से ठोस पदार्थों का अन्तर्ग्रहण होता है।
   (घ) पानी में घुलनशील सभी पदार्थ आसानी से झिल्ली से पार चले जाते हैं।
   (ङ) सक्रिय संवहन में ए.टी.पी. की आवश्यकता होती है।
   (च) सोडियम-पोटैशियम पम्प सोडियम आयन तथा पोटैशियम आयन को झिल्ली के दोनों ओर संवहन करने में सहायता करते हैं।
9. निम्नलिखित प्रक्रियाओं को आप क्या शब्द देंगे:
   (क) पानी में सूखी मुनक्का का फूलना
   (ख) श्वसन में गैसों का आदान-प्रदान
   (ग) प्लैज्मा झिल्ली की खांच से तरल पदार्थों का अन्तर्ग्रहण
   (घ) लाल रुधिर कणिकाओं का कुंठदन्तन
10. झिल्ली को "लिपिड के समुद्र में प्रोटीन" क्यों कहा गया है? उदाहरण सहित इस कथन को समझाइये।
11. कोशिका झिल्ली के पार सक्रिय संवहन का क्या अर्थ है?

अध्याय 9

कोशिका का रचनात्मक संगठन

पिछले कुछ अध्यायों में आपने कोशिका में पाए जाने वाले अणुओं तथा उनके कार्यों के विषय में पढ़ा है। संगठन के अगले स्तर में अणु एकत्र होकर कोशिका के उपकोशिकीय घटकों जैसे प्लैज्मा झिल्ली, कोशिका द्रव्य, बाह्य कंकाल तथा अंग बनाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ प्रोकैरियोट तथा यूकैरियोट कोशिका में कोशिका भित्ति भी होती है। इस अध्याय में आप इन घटकोन की इलैक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शीय रचना तथा उनके कार्यों के विषय में पढ़ेंगे जो जीवन की मूल एकता पर और प्रकाश डालेंगे।

कोशिका भित्ति

जीवाणु, कवक, शैवाल तथा पौधों की प्लैज्मा झिल्ली कोशिका भित्ति से ढकी रहती है। विभिन्न वर्गों में कोशिका भित्ति के घटक विभिन्न होते हैं। जीवाणु तथा कुछ कवक की कोशिका भित्ति में प्रोटीन तथा सैल्यूलोस रहित कार्बोहाइड्रेट होता है। कुछ कवक, अधिकांश शैवाल तथा उच्चवर्गीय हरे पौधों की कोशिका भित्ति में मुख्यतः सैल्यूलोज होता है। कोशिका भित्ति का मुख्य कार्य रक्षा करना, यान्त्रिक सहारा देना तथा भीतरी कोशिकीय तथा इसके चारों ओर के वातावरण के बीच परासरणी संतुलन रखना है।

बहुकोशिकीय पौधों में कोशिकाएँ गति नहीं करतीं क्योंकि वे एक दूसरे से अच्छी प्रकार जुड़ी रहती हैं जैसे कि किसी भवन में कमरे जुड़े रहते हैं। दो कोशिकाओं के बीच की सामान्य परत को *मध्य पटलिका* कहते हैं। इसमें कैल्शियम पैक्टेट होता है। यह कोशिका विभाजन के तुरन्त बाद बन जाती
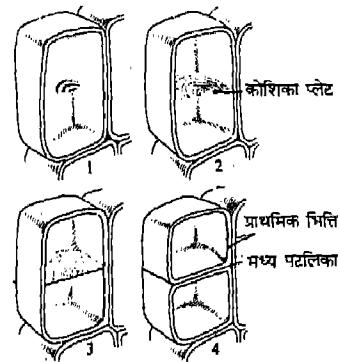
चित्र 9. 1 कोशिका भित्ति का विकास (1, 2, 3 तथा 4 से अंकित)। नई-नई बनी पादप कोशिकाओं को अलग होते दिखाया गया है।

है। इसकी तुलना हम दो कमरों के बीच की साझी दीवार से कर सकते हैं (चित्र 9.1)। *प्राथमिक भित्ति* मध्य पटलिका पर अन्दर से ही बनती है। इसमें सैल्यूलोस के *सूक्ष्म तंतुओं* का सदृढ़ जाल सा होता है जो हैमीसैल्यूलोस तथा पैक्टिन के मैट्रिक्स

चित्र 9. 2 बहुत सी परतें जो एक परिपक्व पादप कोशिका की कोशिका भित्ति को बनाती हैं।

से संचित होता है। प्राथमिक भित्ति पतली तथा लचीली होती है और शैशव कोशिकाओं की वृद्धि करने देती है। जब कोशिका परिपक्व हो रही हो तब एक मोटी *द्वितीयक भित्ति* बनती है। इस भित्ति में सूक्ष्म तंतुक की तीन परतें होती हैं जो हैमीसैल्यूलोस के मैट्रिक्स में रहती हैं (चित्र 9.2)। कुछ कोशिकाओं की द्वितीयक भित्ति में लिगनिन का जमाव होता है' जिससे काष्ठ का निर्माण होता है और कुछ कॉर्क बनाने के लिए सूबेरिन का जमाव होता है। द्वितीयक भित्ति का बनना सभी कोशिकाओं में समान नहीं है। पौधों में इसके कारण विभिन्न प्रकार की कोशिकाएं जैसे पैरेन्काइमा, स्कलैरेन्काइम, कॉलनैकाइमा, तन्तु तथा ट्रैकीड बनती हैं। प्राथमिक तथा द्वितीयक भित्ति की तुलना हम क्रमशः कमरे में प्लास्टर करने तथा रंग-रोगन करने से कर सकते हैं (चित्र 9.1 तथा 9.2)।

कोशिका भित्ति पादप कोशिका को बिल्कुल अलग नहीं करती है। इसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इन छिद्रों में कोशिका द्रव्य की पतली-पतली नलियाँ सी होती हैं जो बराबर वाली कोशिकाओं से सम्पर्क बनाए रखती हैं। इन्हें *प्लैज्मा-डेस्मा* तन्तुक या *प्लाज्मोडेसमेटा* कहते हैं। इनसे कोशिकाओं में पदार्थों का आदान-प्रदान होता है (चित्र 4.8)।

कोशिका आवरण

बहुत से प्रोटिस्टो तथा जन्तुओं में कोशिका झिल्ली के चारों ओर सैल्यूलोस की भित्ति नहीं होती। बल्कि ओलिगोसैकेराइड का एक तन्तुमयी वाह्य आवरण होता है (चित्र 9.3)। यह प्लैज्मा झिल्ली की रक्षा करता है। यह ऊतक बनाने के समय कोशिका की पहचान भी करता है। यह कैल्शियम, लवण,
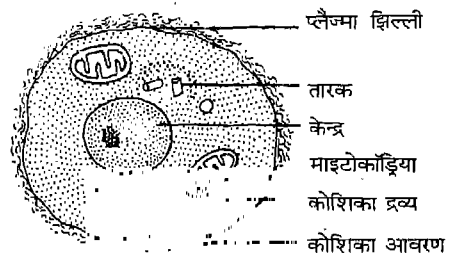
चित्र 9. 3 कोशिका आवरण

सिलीकॉन या अन्य पदार्थों के कारण कठोर हो जाता है।

कोशिका द्रव्य

कोशिका द्रव्य एक जैली की तरह, जीव-द्रव्य का तरल पदार्थ है। इसमें केन्द्रक शामिल नहीं होता। इसमें बहुत से कोशिकांग होते हैं। कोशिका द्रव्य के चारों ओर प्लैज्मा झिल्ली का आवरण होता है। कोशिका द्रव्य में न्यूक्लिओटाइड, विटामिन, आर. एन. ए., एंजाइम, बहुत से लवण, शक्कर तथा एमीनोएसिड होते हैं। इसमें प्रोटीन की कोलायड अवस्था होती है।

कोशिका द्रव्यीय प्रवाह : यूकैरियोटिक कोशिकाओं में कोशिका द्रव्य की गति होती है। प्रवाह से अमीबा में पादाभ बनते हैं तथा कोशिकांगों की गति होती है। कोशिका द्रव्य मध्य रिक्तिका के चारों ओर एक ही दिशा में अथवा बहुत सी रिक्तिकाओं के चारों ओर बहुत सी दिशाओं में प्रवाह करता है। कोशिका द्रव्य प्रवाह कोशिका द्रव्य की श्यानता तथा तापक्रम पर निर्भर करता है।

क्रियाकलाप : पानी में एक शैशव ताजी *हाइड्रिला* की पत्ती रखिए और माइक्रोस्कोप की उच्चशक्ति से मध्यशिरा के पास वाली कोशिकाओं को देखिए। आप देखेंगे कि क्लोरोप्लास्ट एक ही दिशा में गति कर रहा है। यही क्रियाकलाप आप *ट्रेडेकैन्शिया* के पुतंतु की रोम कोशिका से भी कर सकते हैं लेकिन इसमें आप देखेंगे कि गति बहुत सी दिशाओं में हो रही है।

कोशिका द्रव्य में क्या क्या मुख्य कार्य अथवा प्रक्रियाएं होती हैं? कोशिका द्रव्य पोषकों, उपापचयी पदार्थों, तथा एंजाइम को कोशिका के भीतर ही बाँटता है और अंगकों के बीच पदार्थों का आदान-प्रदान भी करता है। ग्लाइकोलिसिस अथवा ग्लुकोस का टूटना, वसीय अम्ल, न्यूक्लिओटाइड तथा बहुत सी प्रोटीन का संश्लेषण कोशिका द्रव्य में ही होता है।

केन्द्रक

केन्द्रक कोशिका का मुख्य अंग है। यह सघन गोलाकार अथवा अनियमित आकृति वाला हो सकता है। बहुत सी कोशिकाओं में केवल एक ही केन्द्रक होता है, किसी में दो केन्द्रक होते हैं, जैसे कुछ प्रोटोजोआ में तथा अन्यों में बहुकेन्द्रक होते हैं। कुछ जीवों के वृहत् शरीर में बहुत से केन्द्रक होते हैं जो कोशिकाओं में विभाजित नहीं होते। ऐसे जीवों को *संकोशिकी* जीव कहते हैं (उदाहरणतः कवक जैसे *राइजोपस* तथा शैवाल जैसे *वोचेरिया*)।

जब किसी अरंजित सजीव कोशिका को प्रकाश सूक्ष्मदर्शी से देखें तो ऐसा लगेगा कि केन्द्रक में कुछ नहीं है। जब कोशिका को किसी उचित रसायन से भर देते हैं और उसे किसी उचित रंग से रँगते हैं तो केन्द्रक में बहुत सी संरचनाएँ दिखाई पड़ेंगी। अन्तरावस्था कोशिका के अर्द्धतरलीय पदार्थ जिसे *केन्द्रक द्रव्य* कहते हैं, में एक या अधिक गोलाकार संरचनाएँ होती हैं जिसे *केन्द्रिका* कहते हैं। केन्द्रक द्रव्य में काले से तन्तुओं का जाल सा दिखाई देगा जिसे *क्रोमेटिन* कहते हैं। केन्द्रक विभाजन से पहले, क्रोमेटिन के तन्तु संघनित होकर निश्चित धागों का रूप ले लेते हैं, इन धागों को *क्रोमोसोम* कहते हैं। क्रोमोसोम मुख्यतः प्रोटीन तथा डी. एन. ए. के बने होते हैं और उन पर जीन होते हैं। जीव में आनुवंशिक सूचनाएं होती हैं। प्रत्येक क्रोमोसोम में एक खांच होती है जिसे *सेंट्रोमियर* कहते हैं।

इलैक्ट्रान माइक्रोग्राफ से पता लगेगा कि केन्द्रक
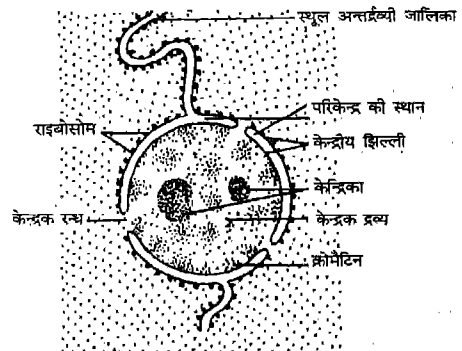
चित्र 9. 4 केन्द्रक

के चारों ओर एक दोहरी झिल्ली होती है जिसे *केन्द्रकीय आवरण* कहते हैं (चित्र 9.4)। इसमें दो केन्द्रकीय झिल्लियाँ होती हैं जिनके बीच में एक तरल पदार्थ भरा रहता है। इस स्थान को *परिकेन्द्र का स्थान* कहते हैं। बीच में भरा तरल पदार्थ स्थूल एंडोप्लाज्मिक जालिका की गुहिकाओं में भी बहता है। केन्द्रकीय आवरण में बहुत से केन्द्रकीय छिद्र होते हैं। छिद्र के सिरों तक दोनों केन्द्रकीय झिल्लियाँ अछिन्न होती रहती हैं। अविभाजित कोशिका (*अन्तरावस्था केन्द्रक*) में केन्द्रकीय आवरण दिखाई देता है। कोशिका विभाजन के समय यह लुप्त हो जाती है और यह दो पुत्री केन्द्रिकाएं बनने के बाद पुनः आ जाती है।

केन्द्रक के दो मुख्य कार्य हैं। इसमें जनन, विकास, उपापचय तथा जीव के व्यवहार के लिए आनुवंशिकी सूचनाएं रहती हैं। यह इस सूचना को द्विगुणित कर सकता है और इसे पुत्री कोशिकाओं में भेज सकता है। केन्द्रक का दूसरा कार्य यह है कि ये कोशिका के कार्यों को नियंत्रित करता है। यह आर. एन. ए. बनाकर बताता है कि कौन सा एंजाइम कब बनाना है। इसके अतिरिक्त केन्द्रिका राइबोसोम बनाने में भाग लेती है।

माइटोकॉन्ड्रिया

इन झिल्ली युक्त अंगकों को कोशिका का "ऊर्जा घर" कहते हैं। ये वायवीय श्वसन के लिए बहुत आवश्यक है। माइटोकॉन्ड्रिया तश्तरी के आकार के होते हैं। इनकी लम्बाई कई मिली-माइक्रोन होती है तथा व्यास कई सौ नैनो मीटर होता है। माइटोकॉन्ड्रिया गोलाकार, अंडाकार, बेलनाकार तथा तन्तुमयी भी होते हैं। कोशिकीय क्रिया कलाप के आधार पर माइटोकॉन्ड्रिया की आकृति भी विभिन्न होती है। कोशिका क्रियाकलाप के बढ़ने से माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या भी बढ़ जाती है। उदाहरणतः अंकुरित बीजों की कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या प्रसुप्त बीज की अपेक्षा अधिक होगी।

कुछ कोशिका के कोशिका द्रव्य में माइटोकॉन्ड्रिया अनियमित रूप से फैले रहते हैं। ऊर्जा उत्पादन में कार्यरत कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया अधिक होते हैं। उदाहरणतः *सिलिया* के आधार पर माइटोकॉन्ड्रिया एकत्र हो जाते हैं ताकि वे उसकी गति के लिए ऊर्जा दे सकें। माइटोकॉन्ड्रिया पेशी तन्तु के हल्के बैन्ड में भी एकत्र रहते हैं ताकि संकुचन के लिए ऊर्जा दे सकें।

> यकृत में पाई जाने वाली कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या लगभग 500-1000 तक होती है; एक रेखित पेशी में इनकी संख्या कई हजार होती है; कुछ अंडकों में इनकी संख्या 30,000 होती है। पादप कोशिका में जन्तु कोशिका की अपेक्षा माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या कम होती है।

माइटोकॉन्ड्रिया *अर्द्ध स्वायत्त अंगक* हैं। उनमें डी. एन. ए., तथा *राइबोसोम* होते हैं और ये अपने लिए कुछ प्रोटीन भी बनाते हैं। यद्यपि, इसकी बहुत सी प्रोटीन कोशिका द्रव्य से ही आती है। कोशिका विभाजन के समय प्रत्येक पुत्री कोशिका में मातृ

चित्र 9.5 इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से देखने पर माइटोकॉन्ड्रिया की रचना। इसमें क्रिस्टी को देखिए।

कोशिका से माइटोकॉन्ड्रिया आता है। कोशिका में निश्चित संख्या बनाए रखने के लिए ये माइटोकॉन्ड्रिया पुनः विभाजित होते हैं।

माइटोकॉन्ड्रिया की विस्तृत रचना इलैक्ट्रान माइक्रोस्कोप से देखी जा सकती है (चित्र 9.5)। माइटोकॉन्ड्रिया के चारों ओर दोहरी परत का आवरण होता है (चित्र 9.6)। आवरण की दोनों झिल्लियों के बीच तरल पदार्थ से भरा स्थान होता है। इस स्थान को *बाह्य कोष्ठक* कहते हैं। *बाह्य झिल्ली* चिकनी होती है। इसमें से छोटे अणु भीतर जा सकते हैं। इसमें एंजाइम होते हैं लेकिन इसमें *भीतरी झिल्ली* की अपेक्षा प्रोटीन कम मात्रा में होता है। भीतरी झिल्ली तरल पदार्थ से भरी मध्यगुहिका अथवा मैट्रिक्स (*भीतरी कोष्ठक*) के बाहर होती है। भीतरी झिल्ली वरणात्मक पारगम्य होती है। इसमें बहुत से एंजाइम शव वाहक होते हैं। भीतरी झिल्ली पर अन्दर की ओर बहुत से उर्द्धव निकले होते हैं जो मैट्रिक्स में अधूरे कोष्ठक बनाते हैं। इन उर्द्धवों को क्रिस्टी कहते हैं। क्रिस्टी से भीतरी झिल्ली का क्षेत्रफल बढ़ जाता है। क्रिस्टी की झिल्ली के बीच का स्थान बाह्य कोष्ठक स्थान से जुड़ा रहता है।

तरल पदार्थ से भरे मैट्रिक्स में बहुत से एंजाइम होते हैं। ये एंजाइम विशेषतः क्रेब्स की ट्राईकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र से सम्बन्ध रखते हैं। मैट्रिक्स में एक गोलाकार दोहरा स्तम्भ वाला डी. एन. ए. अणु तथा बहुत से छोटे छोटे राइबोसोम के कण भी होते हैं।

भीतरी झिल्ली तथा क्रिस्टी पर बहुत से (लगभग 10 तक) कण होते हैं जिनमें एक स्तम्भ तथा गोलाकार सिर होता है (चित्र 9.6)। प्रत्येक कण का गोलाकार भाग अथवा F_1 उप *इकाई* मैट्रिक्स में
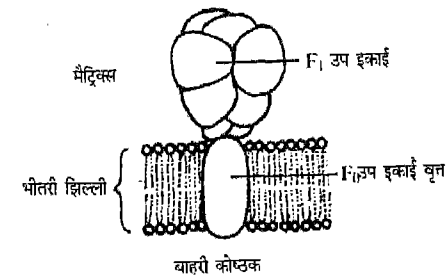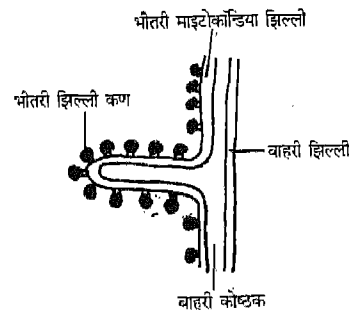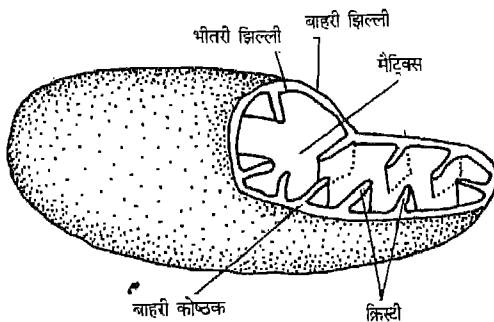
चित्र 9. 6 माइटोकॉन्ड्रिया की विस्तृत भीतरी रचना।

होती है (चित्र 9.7)। यह बेलनाकार स्तम्भ द्वारा आधार अथवा F_0 इकाई से जुड़ा रहता है। F_1 उप इकाई समाकल प्रोटीन है जो झिल्ली की लिपिड में धँसी रहती है। F_0-F_1 का मिश्रण ए. टी. पी. *सिन्थेज* नामक एंजाइम की तरह कार्य करता है। यह एंजाइम ए. टी. पी. का संश्लेषण करता है।

माइटोकॉन्ड्रिया के प्रमुख कार्य हैं वायवीय श्वसन में भाग लेना तथा ए. टी. पी. संश्लेषण करना। वे विभिन्न प्रकार के होते हैं। उनके माप, आकृति, रंग तथा कार्य भी भिन्न भिन्न होते हैं। आप इनके कार्य के बारे में अगले अध्याय में पढ़ेंगे।

प्लैस्टिड

प्लैस्टिड के चारों ओर एक दोहरी झिल्ली होती है। यह केवल पादप कोशिका में ही पाया जाता है। इनका आकार, माप, रंग तथा कार्य विभिन्न होते हैं। *क्लोरोप्लास्ट* हरे रंग के प्लैस्टिड होते हैं जिनमें क्लोरोफिल होता है। ये हरे पौधों में प्रकाश संश्लेषण करने वाले अंग हैं। क्लोरोप्लास्ट लैन्स के आकार, अंडाकार, गोलाकार, कण, डिस्क, बहु कोणीय अथवा रिबन के आकार हो सकते हैं। एक पत्ती की पैरेन्काइमा कोशिका में लगभग 20-40 क्लोरोप्लास्ट होते हैं।

प्रत्येक क्लोरोप्लास्ट के चारों ओर एक दोहरी झिल्ली (*आवरण झिल्ली*) होती है (चित्र 9.7)। इसमें रंगहीन प्रोटीनो मैट्रिक्स भरा रहता है जिसे *स्ट्रोमा* कहते हैं। इसकी दोनों झिल्लियां चिकनी होती हैं। भीतरी झिल्ली बाह्य झिल्ली की अपेक्षा कम पारगम्य है। भीतरी झिल्ली में बहुत प्रोटीन होता है और कुछ संवाहक प्रोटीन भी होती है।

स्ट्रोमा में एक छोटा चक्राकार दोहरे स्तम्भ वाला डी. एन. ए., राइबोसोम तथा अनेक एंजाइम होते हैं। मैट्रिक्स में कुछ चपटी झिल्लियों की संरचनाएँ भी होती हैं जिन्हें *थैलेकॉइड* कहते हैं (चित्र 9.8)। लगभग 20-50 थैलेकॉइड एक दूसरे के ऊपर सिक्कों के ढेर के समान रखे रहते हैं, इन्हें *ग्रेना* कहते हैं। एक क्लोरोप्लास्ट में लगभग 40-100 ग्रैना हो सकते हैं। बहुत सी झिल्ली युक्त नलिकाएँ होती हैं जो सभी थैलेकॉइड को जोड़े रखती हैं। इन्हें *स्ट्रोमा पटलिका* कहते हैं।

क्लोरोप्लास्ट का मुख्य कार्य है सूर्य को पकड़ना और उसे प्रकाश संश्लेषण के समय रासायनिक ऊर्जा में बदलना। इसके विषय में अधिक जानकारी आपको पांचवी इकाई में देंगे।

ल्यूकोप्लास्ट रंगहीन प्लैस्टिड होते हैं। ये अंडाकार,
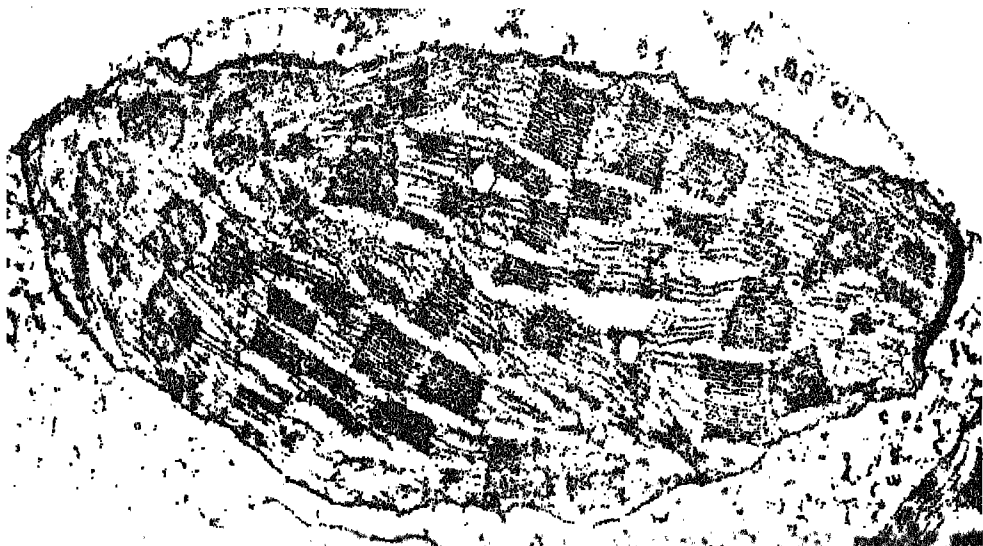
चित्र 9.7 क्लोरोप्लास्ट का इलेक्ट्रान ग्राफचित्र।

चित्र 9. 8 क्लोरोप्लास्ट का वृहत् चित्र।

गोलाकार, छड़ाकार अथवा तन्तुमयी होते हैं। ये फलों, बीजों, कन्द तथा राइजोम (प्रकन्द) की कोशिकाओं में बहुत होते हैं। ये पोषक पदार्थों को संचित करते हैं। जैसे आलू के एमाइलोप्लास्ट स्टार्च को सचंय करते हैं।

क्रोमोप्लास्ट रंगीन प्लैस्टिड होते हैं। इसमें वसा में घुलने वाले पीले, संतरी तथा लाल रंग के वर्णक मुख्यतः कैरोटीनाइड्स होते हैं। ये प्रायः फूलों तथा फलों में पाए जाते हैं।

अंतर्द्रव्यी जालिका (E.R.)

अंतर्द्रव्यी जालिका झिल्ली युक्त थैलियों *(सिस्ट्रनी)*, पुटिकाओं तथा संकरी नलिकाओं का बना होता है। नलिकाएँ केन्द्रक के पास से निकलती हैं। ये सारा जाल सा एक दूसरे से जुड़ा रहता है ताकि एक दूसरे
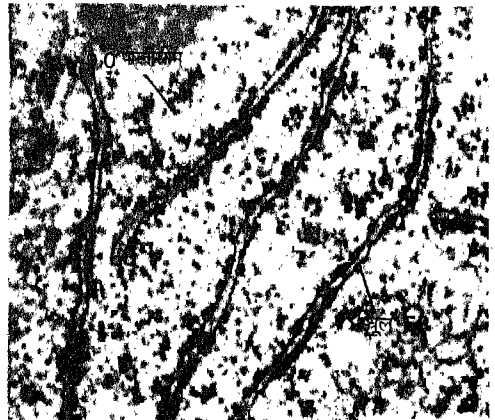
चित्र 9. 9 स्थूल अन्तर्द्रव्यी जालिका तथा पॉलिराइबोसोम का इलैक्ट्रान रेखाचित्र।

को सूचना दे सकें। उनकी गुहिका में तरल पदार्थ भरा रहता है। इसका नाम कोशिका द्रव्य में स्थित सिस्ट्रनी तथा नलिकाओं के जाल के आधार पर दिया गया है (चित्र 9.9)। ये स्रावी पदार्थों तथा झिल्ली के कारक बनाती है।

अंतर्द्रव्यी जालिका में बहुत से एंजाइम तथा अन्य प्रोटीन होती है। कोशिका में दो प्रकार की अंतर्द्रव्यी जालिका (E.R.) होती हैं। (1) *चिकने* SER तथा स्थूल RER। स्थूल ER पर राइबोसोम लगे रहते हैं (चित्र 9.10)। इससे सतह स्थूल हो जाती है। इस स्थूल की दो शीट से नलिकाएँ बन जाती हैं जिसमें स्थूल स्तर बाहर की ओर होती है। चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका की सतह चिकनी होती है और उस पर राइबोसोम नहीं होते। इस पर नलिकाएँ तथा पुटिकाएँ होती हैं। स्थूल ER में थैलियां तथा कुछ नलिकाएं होती हैं। स्थूल ER की झिल्ली चिकनी ER झिल्ली तथा केन्द्रकीय आवरण की बाहरी झिल्ली से जुड़ी रहती है। चिकनी ER की झिल्ली गाल्जीकाय, सिस्ट्रनी तथा प्लैज्मा झिल्ली से जुड़ी रहती है।

स्थूल ER तथा चिकनी ER के कुछ विशेष कार्य होते हैं तथा दोनों कुछ सामान्य कार्य भी करते हैं। बहुत से चपटे स्थूल ER के सिस्ट्रनी प्रोटीन स्रावी कोशिकाओं जैसे फिब्रोब्लास्ट, पैंक्रियाज़
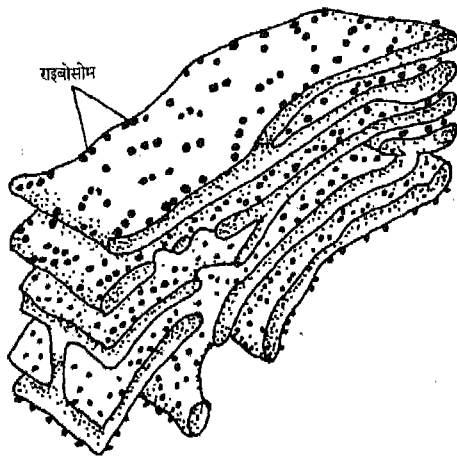
चित्र 9.10 स्थूल अन्तर्द्रव्यी जालिका का त्रीविमीय चित्र।
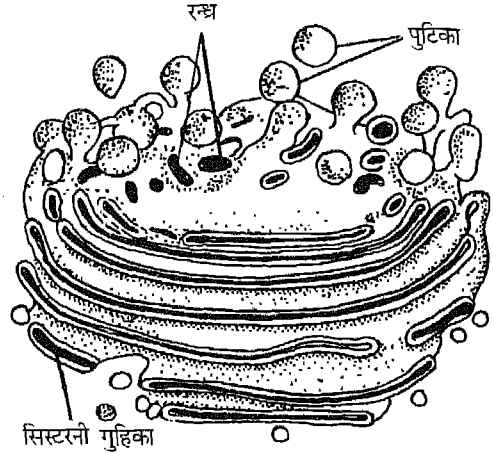
चित्र 9.11 गाल्जीकॉय

कोशिकाओं तथा चक्रतंत्रों स्रावी प्रोटीन तथा झिल्ली प्रोटीन का संश्लेषण करती है, में पाए जाते हैं। चिकनी ER लिपिड तथा स्टीरोल स्रावी कोशिकाओं जैसे यकृत, एड्रिनल,कोर्टिकल तथा वसा कोशिकाओं में बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है। चिकनी ER का कार्य लिपिड तथा स्टीरोल का संश्लेषण करना है। इसके साथ साथ वे स्रावी प्रोटीन लिपिड तथा स्टीरोल संवहन का मार्ग भी बनाते हैं।

गाल्जीकाय

गाल्जीकाय (पौधों में इसे डिक्टीयोसोम कहते हैं) एक मुख्य अंगक है। इसमें एक या अधिक चपटे, फैले हुए सिस्ट्रनी के गट्ठे होते हैं (चित्र 9.11)। सिस्ट्रनी की गुहिका में तरल पदार्थ भरा रहता है और इसमें केवल एक झिल्ली होती है। इस प्रकार के गट्ठे पैंक्रियाज़ अथवा गोब्लेट कोशिकाओं में बहुत होते हैं। गट्ठे प्रायः अन्तर्द्रव्यी जालिका तथा प्लैज्मा झिल्ली के बीच होते हैं (चित्र 4.6, 4.8)। सिस्ट्रनी मुड़े हुए कम गहरे प्याले की तरह होती है। गाल्जी की सिस्ट्रनी की गुहिकाएँ एक दूसरे से तथा चिकनी ER की नलिकाओं से जुड़ी रहती हैं। स्रावी पदार्थ इन भागों द्वारा गाल्जीकाय में पहुँचते हैं। स्रावी पदार्थ *संक्रामी पुटिका* द्वारा भी जाते हैं जो चिकनी ER से टूट जाते हैं और गाल्जी सिस्ट्रनी से जुड़ जाते हैं।

सिस्ट्रनी तथा नलिकाओं की गुहिका गाल्जीसिस्ट्रनी से जुड़ी रहती है जिसमें से स्रावी प्रोटीन, लिपिड

तथा स्टीरोल आ सकते हैं। ER की झिल्ली तथा गाल्जी सिस्ट्रनी भी परस्पर जुड़ी रहती हैं जिससे कि झिल्ली प्रोटीन तथा लिपिड झिल्ली के साथ-साथ बह सके।

गाल्जीकाय का प्रमुख कार्य है स्राव करना। स्रावी प्रोटीन तथा लिपिड सांद्र हो जाते हैं और *स्रावी पुटिका* में एकत्र हो जाते हैं। ये सिस्टरनी से टूट कर अलग हो जाते हैं और ये कोशिका द्रव्य में एक सघन *स्रावी* अथवा *जाइमोजिन दाने* की तरह दिखाई देते हैं। अन्ततः पुटिका अपने पदार्थ को बहिर्गमन द्वारा बाहर निकाल देती है।

गाल्जीकाय प्लैज्मा झिल्ली के पुनः चक्रण में भाग लेती है। रिक्तिकाएं अथवा पुटिकाएं गाल्जी सिस्टरनी से टूट कर अलग हो जाती हैं और प्लैज्मा झिल्ली से जुड़ जाती हैं। इस प्रकार झिल्ली की नई विततियां बन जाती हैं। प्लैज्मा झिल्ली की विततियां टूट कर अलग हो जाती हैं और पुटिका बनाती हैं जो गाल्जी सिस्टरनी से जुड़ जाती हैं। गाल्जी पुटिका पौधों में कोशिका विभाजन के बाद कोशिका प्लेट बनाती है।

लाइसोसोम

ये झिल्ली युक्त पुटिकाएं पौधों तथा जन्तुओं दोनों में पाई जाती हैं। ये गोलाकार अथवा अनियमित आकार की हो सकती हैं। इसके माप में भी विभिन्नता होती है। लाइसोसोम में एक झिल्ली होती है। लाइसोसोम गाल्जीकाय की सिस्टरनी अथवा ER नलिकाओं से बनते हैं। लाइसोसोम की गुहिका में बारीक दानेदार तरल पदार्थ भरा रहता है जिसमें पाचक एंजाइम *ऐसिड हाइड्रोलेसिस* होता है। लाइसोसोम एक अंतः पुटि *(फेगोसोम)* अथवा क्षतिग्रस्त अंगक अथवा स्रावी दाने से जुड़ जाता है। इसके एंजाइम संगलन पुटी में स्थित पदार्थ को जलअपघटित कर देते हैं। इसके उत्पाद नये पदार्थों के पुनः बनने के लिए कोशिका द्रव्य में आ जाते हैं। कुछ समय के बाद लाइसोसोम की गुहिका में अजल अपघटित अवशेष बच जाते हैं। जिन्हें *अवशेषकाय* कहते हैं। यह या तो इन अवशेषों को अपने से अलग रखते हैं या कोशिका से बाहर निकाल देते हैं।

लाइसोसोम हाइड्रोलेज को क्षतिग्रस्त अथवा जरा कोशिकाओं को पचाने के लिए उनमें छोड़ देता है *(आत्मलयन)*। कोशिका विज्ञानी लाइसोसोम को "आत्म हरा का थैला" भी कहते हैं। लाइसोसोम के एंजाइम कोशिका से बाहर भी निकलते हैं और बाह्य कोशिकीय पदार्थों पर क्रिया करते हैं। जब टैडपोल, लार्वा से व्यस्क मेंढ़क अथवा टोड बन रहा होता है तब उसकी पूंछ लुप्त हो जाती है। ऐसा लाइसोसोम की क्रिया के कारण होता है जो पूंछ के ऊतकों में स्थित पदार्थों को जलअपघटित कर देता है और उसे मेंढ़क के विकास में उपयोग होने के लिए उपलब्ध करता है।

सूक्ष्मकाय

ये गोलाकार अथवा अंडाकार होते हैं। इसके चारों ओर एक झिल्ली होती है और इसमें एक तरल पदार्थ भरा होता है। यकृत कोशिकाओं तथा पत्तियों की पेरेन्काइमा कोशिकाओं में ***परआक्सिसोम*** होते हैं। इनका माप 0.5-1 मिली. माइक्रोन होता है। परआक्सिसोम के मैट्रिक्स में परऑक्साइड को नष्ट करने वाले (कैटालेस) तथा बनाने वाले एंजाइम होते हैं। वे परऑक्साइड को कोशिकीय पदार्थों पर क्रिया करने से रोकते हैं। ग्लाइआक्सिसोम सूक्ष्म-काय हैं जो अंकुरित वसीय बीजों जैसे मूंगफली तथा अरंड की कोशिकाओं में पाए जाते हैं। ये वसा को तोड़ देते हैं।

राइबोसोम

इन दानेदार अंगकों के चारों ओर झिल्ली नहीं होती। प्रत्येक राइबोसोम में आर.एन.ए. तथा प्रोटीन दो असमान उपइकाइयां होती हैं। युकैरियोटिक कोशिकाओं में विभिन्न आकार के राइबोसोम होते हैं। कोशिका द्रव्य तथा स्थूल ER की झिल्ली में स्थित राइबोसोम होते हैं। कोशिका द्रव्य तथा स्थूल ER की झिल्ली में स्थित राइबोसोम का व्यास 20-25 नैनोमीटर (nm) होता है। क्लोरोप्लास्ट के स्ट्रौमा तथा माइटोकोन्ड्रिया के मैट्रिक्स में स्थित राइबोसोम का माप और भी छोटा होता है। लगभग 6-8 राइबोसोम दूत आर.एन.ए. (mRNA) पर जुड़ जाते हैं जिससे दानेदार धागा बन जाता है जिसे

पोलिसोम अथवा *पॉलिराइबोसोम* कहते हैं (चित्र 9.9)। राइबोसोम में प्रोटीन संश्लेषित होता है। आप प्रोटीन संश्लेषण की विधि के विषय में बाद में पढ़ेंगे।

कोशिकीय कंकाल (साइटोपंजर) की संरचना

यूकैरियोटिक कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य में सूक्ष्म नलिकाओं तथा जन्तुओं का विस्तृत जाल सा बिछा रहता है जिन्हें सूक्ष्म नलिका तथा सूक्ष्म तन्तु कहते हैं। ये कोशिका का रचनात्मक ढांचा बनाते हैं और कोशिका तथा इसके उर्द्धवों की आकृति बनाए रखते हैं। ये अंगकों के स्थानों को भी बनाए रखते हैं।

सूक्ष्म तन्तु

ये लम्बे, पतले, छड़ाकार (व्यास 6 से 10 नैनोमीटर) होते हैं। इनमें एक्टिन तथा मायोसिन दो पोलिमर प्रोटीन होती हैं। सूक्ष्म तन्तु कोशिका द्रव्य में विस्तृत जाल सा बिछाते हैं। इनमें से कुछ कोशिका द्रव्य की ओर प्लैज्मा झिल्ली से जुड़ते रहते हैं, तथा अन्य सूक्ष्मोर्द्धव (माइक्रोविलाई) के कोशिका द्रव्य से। सूक्ष्म तन्तु कोशिका गति तथा ऐन्डोसाइटोसिस पेशी तन्तु के संकुचन तथा सूक्ष्मोर्द्धव की गति के समय प्लैज्मा झिल्ली की गति करते हैं।

> *सूक्ष्मोर्द्धव* अवशोषी कोशिकाओं जैसे आंत की कोशिकाएं, की सतह पर धागे की तरह के जीवद्रव्यी उर्द्धव होते हैं। प्रत्येक सूक्ष्मोर्द्धव प्लैज्मा झिल्ली से घिरे रहते है। बहुत से सूक्ष्म तन्तु इसी क्रोड में लम्बाई के साथ साथ रहते हैं और इसकी चोटी की प्लैज्मा झिल्ली से जुड़ जाते हैं। सूक्ष्मोर्द्धव कोशिका की मुक्त सतह को बढ़ाते हैं जिससे कि अवशोषण अधिक हो सके। सूक्ष्म तन्तुओं के संकुचन से सूक्ष्मोर्द्धव गतिशील हो जाते हैं जिससे कि बाह्य माध्यम प्रवाह करता है और इस प्रकार बड़े से क्षेत्रफल से पदार्थ अवशोषित हो जाते हैं।

सूक्ष्मनलिकाएँ

ये लम्बी, अशाखीय तथा पतली नलियां होती हैं जिनका व्यास 25 नैनोमीटर (nm) होता है। प्रत्येक नलिका के बीच में एक हल्का क्रोड होता है जिसका व्यास 15 नैनोमीटर (nm) होता है (चित्र 9.12)। सूक्ष्मनलिका की दीवार 13 लम्बे तन्तुओं से बनी होती है। प्रत्येक तन्तु *ट्यूब्यूलिन* के पोलिमर की एक श्रृंखला होती है। सूक्ष्मनलिका कोशिका द्रव्य में अकेली अथवा गट्ठे के रूप में होती है। ये *तारक* केन्द्र से निकल कर बाहर की ओर जाती हैं। सूक्ष्म नलिकाएं सिलिया तथा फ्लैजिला और कोशिका विभाजन के समय तर्कु का कंकाल बनाती हैं। सूक्ष्मनलिकाएं कोशिका के आकार, उसकी तथा क्रोमोसोम की गति को बनाए रखने में सहायता करती हैं। सूक्ष्म नलिकाओं का सबसे अद्भुत गुण यह है कि वे आसानी से टूट जाती हैं और कोशिका के अन्य भागों में पुनः एकत्रित हो जाती हैं।
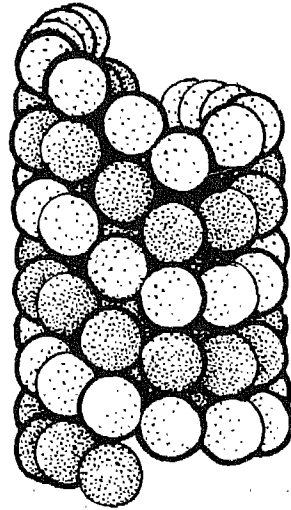
चित्र 9.12 सूक्ष्म नलिका की रचना।

सिलिया तथा फ्लैजिला

ये बाल की तरह की संरचनाएं हैं जो कुछ कोशिका की सतह पर गतिमान होते हैं। ये रचना की दृष्टि से समान होते हैं लेकिन लम्बाई, संख्या तथा गति में भिन्न होते हैं। सिलिया छोटे तथा अधिक संख्या में होते हैं और नाव के चप्पू की तरह गति करते

हैं। फ्लैजिला की संख्या एक या उससे कुछ अधिक होती है। ये सिलिया अथवा फ्लैजिला से लंम्बे होते हैं, उनमें तरंगों के समान गति होती है। सिलिया तथा फ्लैजिला के चारों ओर प्लैज्मा झिल्ली होती है (चित्र 9.13)। फ्लैजिला की अनुप्रस्थ काट में सतह पर सूक्ष्म नलिका के 9 जोड़े तथा मध्य में 2 दिखाई देंगे (चित्र 9 + 2 क्रम)। सूक्ष्म नलिकाओं के गतिशील होने से सिलिया तथा फ्लैजिला में गति होती है। कोशिका के कोशिका द्रव्य में प्रत्येक सिलिया तथा फ्लैजिला के नीचे एक *आधारीकाय* होती है। आधारीकाय की अनुप्रस्थ काट में एक छत्ता सा दिखाई देगा जिसमें सूक्ष्मकाय की 9 त्रिक होती हैं लेकिन मध्य में पाए जाने वाले 2 सूक्ष्मकाय दिखाई नहीं देते (9 + 0 क्रम)। आधारीकाय सिलिया तथा फ्लैजिला के बनने का प्रथम चरण है।

सिलिया के चलने में दो स्ट्रॉक होते हैं (चित्र 9.14)। *शक्तिशाली स्ट्रॉक* से सिलिया माध्यम के विपरीत बल लगाकर चलती है इससे स्ट्रॉक की दिशा में गति होती है और कोशिका में इसके विपरीत दिशा में। लेकिन *रिकवरी* स्ट्रॉक से सिलिया अपनी पुरानी अवस्था में वापिस आ जाता है। इस प्रक्रिया की तुलना नाव के चप्पू से चलाने के समान कर सकते हैं। शक्तिशाली स्ट्रॉक में नाव आगे बढ़ती
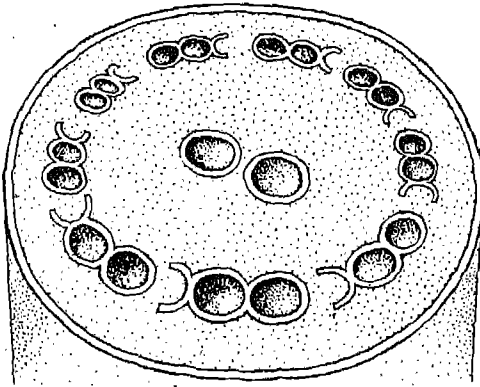
चित्र 9.13 सिलिया या फ्लैजिला में सूक्ष्म नलिकाओं (9 + 2) के सजने के क्रम को दिखाने का चित्र। सूक्ष्म नलिकाएँ जीवद्रव्यी झिल्ली से ढकी हुई हैं।

श्वसन तथा श्वसनिका कोशिकाओं में स्थित सिलिया अन्दर लिए गए धूल के कणों को ग्रसनी की ओर ले जाते हैं। इससे ये कण फेफड़ों में नहीं जा पाते। धूम्रपान में सिलिया की गति अस्थायी रूप से रुक जाती है या कम हो जाती है। धूम्रपान करने वालों के फेफड़ों में धूल के कण, धूम्रपान न करने वालों की अपेक्षा, आसानी से चले जाते हैं।

है क्योंकि चप्पू पीछे की ओर स्ट्रॉक करते हैं। चप्पू को पानी से ऊपर उठा कर वापस लाना पड़ता है। बहुकोशिकीय जीवों में सिलिया की गति से सतह पर स्थित सिलिया के ऊपर पानी शक्तिशाली स्ट्राक की दिशा में बहता है।

फ्लैजिला में आधार से चोटी तक बहुत सी तरंगें उठती हैं (चित्र 9.14)। ये जीव को विपरीत दिशा में ले जाती हैं। शुक्राणु फ्लैजिला गति द्वारा मादा जनन पथ में स्थित तरल माध्यम में सिर के द्वारा आगे बढ़ता है।

तारक केन्द्र

ये झिल्ली रहित अंगक होते हैं जो जन्तु कोशिका तथा फ्लैजिलायुक्त पादप कोशिकाओं जैसे गतिशील शैवाल तथा कुछ आदिम स्थलीय पौधों की गतिशील लैंगिक कोशिकाओं में पाए जाते हैं। ये केन्द्रक के एक ध्रुव के समीप एक जोड़े में रहते हैं। ये एक दूसरे के समकोण बनाते हैं (चित्र 4.6)। प्रत्येक तारक केन्द्र में सूक्ष्म वाहिका के 9 त्रिक होते हैं और उसमें वही प्रबन्ध होता है जैसे आधारीकाय में होता है (चित्र 9.15)।

जन्तु कोशिका में कोशिका विभाजन के समय तारक केन्द्र अलग होकर विपरीत ध्रुवों पर चले जाते हैं जहाँ से वे तर्कु बनाते हैं। दो कोशिका विभाजनों के मध्य अन्तरावस्था के समय पूर्वगामी तारककेन्द्र दो में विभक्त हो जाता है। तारक केन्द्र सिलिया तथा फ्लैजिला के बनाने में भी सहायता करता है। तारक केन्द्र कोशिका के बाह्य किनारों पर आ जाता है
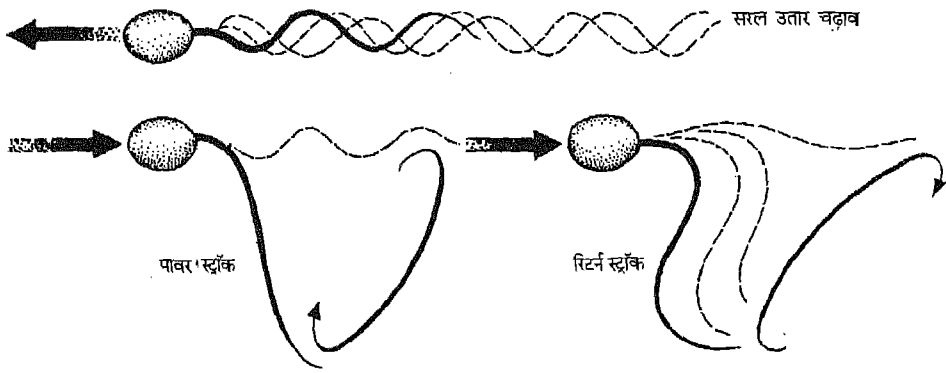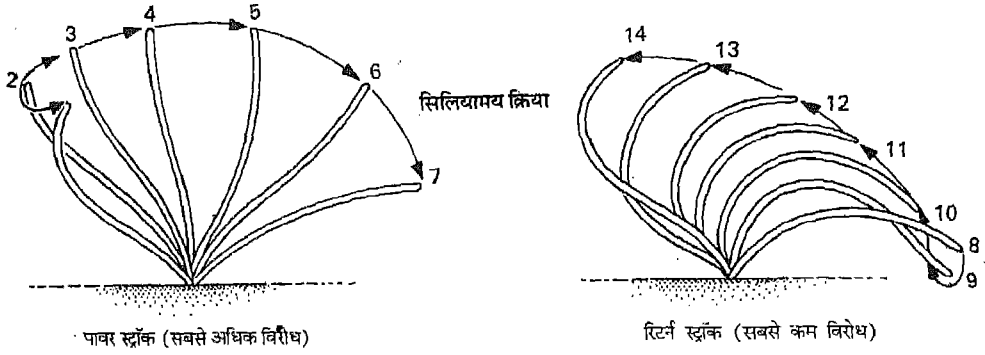
चित्र 9.14 सिलिया तथा फ्लैजिला की गति।

और आधारीकाय बन जाता है। सिलिया में तारक केन्द्र बहुत बार बँटता है और अपने को कोशिका की सतह पर सजा लेता है जिससे बहुत सी आधारीकाय बन जाती हैं।

रिक्तिकाएँ या रसधानियाँ

आप जानते हैं कि रिक्तिका कोशिका द्रव्य में रसभरी संरचनाएं होती हैं। इसके चारों ओर एक झिल्ली होती है जिसे टोनोप्लास्ट कहते हैं। रिक्तिका के रस में खनिज लवण, शक्कर, ऐमीनो एसिड, ऐस्टर, जल में घुलनशील पिग्मेंट, घोल में अवशेष पदार्थ होते हैं। जन्तु कोशिका तथा बड़ी पादप कोशिकाओं में कुछ, इधर उधर बिखरी हुई रिक्तिकाएं होती हैं।
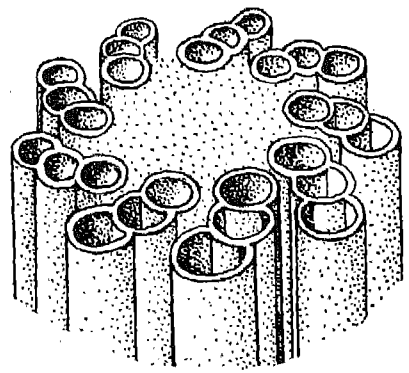
चित्र 9.15 तारक केन्द्र में सूक्ष्म नलिकाओं (9 + 0) के सजने का क्रम।

परिपक्व पादप कोशिकाओं में रिक्तिकाएं जुड़ जाती हैं जिससे मध्य में एक बड़ी रिक्तिका बन जाती है। कुछ प्रोटोजोआ की कोशिका में *संकुचनशील रिक्तिकाएं* होती हैं। इनमें तरल पदार्थ भरने से ये फैल जाती हैं और जब तरल पदार्थ शरीर से बाहर निकल जाता है तब ये सिकुड़ जाती हैं।

टोनोप्लास्ट अर्धपारगम्य झिल्ली है। यह रिक्तिका में पोषक पदार्थों तथा अपशिष्ट पदार्थों के संग्रह करने में, अलग करने में तथा सांद्र करने में सहायता करती है। बड़ी रिक्तिका फैल जाती है, इसलिए कोशिका द्रव्य की एक पतली सतह बन जाती है। इससे कोशिका द्रव्य तथा आस-पास स्थित तरलों में विलेय तथा गैस का आदान-प्रदान आसानी से होता है।।

कोशिकीय अन्तर्विष्ट

इसमें कार्बनिक संचित पदार्थ तथा अकार्बनिक कण दोनों ही होते हैं।

(क) पादप कोशिकाओं में विशेषतः संचय करने वाले अंग जैसे कन्द तथा प्रकन्द में *स्टार्च के कण*, होते हैं। ये गोलाकार, अंडाकार दीर्घ वृत्तीय या बहुतलीय हो सकते हैं। प्रत्येक कण में प्रोटीन से बने हाइलम के चारों ओर स्टार्च का केन्द्री अथवा विकेन्द्री छल्ला होता है।

(ख) *ग्लाइकोजन कण* छोटे, गोलाकार अथवा बड़े पुष्पाकार कण होते हैं। ये यकृत तथा देशी कोशिका के चिकने ER के पास होते हैं।

(ग) *वसा बिन्दु* जन्तु की वसीय कोशिकाओं में होते हैं। एक या अधिक बड़े वसीय बिन्दु कोशिका में भरे होते हैं। इससे कोशिका द्रव्य तथा अन्य अंग एक ओर हो जाते हैं। वसा बिन्दु अरंड तथा नारियल की भ्रूणपोष की कोशिकाओं तथा मूंगफली एवं सरसों के बीजों के बीजपत्रों में भी होते हैं।

(घ) *एल्यूरोन कण* पादप कोशिकाओं में प्रोटीन को संचित करते हैं। ये मक्का, गेहूँ तथा जौ के भ्रूणपोष की बाहरी कोशिकाओं में सुस्पष्ट होते हैं।

(ङ) पादप कोशिका में बहुत से रासायनिक यौगिकों के *क्रिस्टल* होते हैं। इनमें से कैल्शियम (*कैल्शियम आक्जेलेट*, *कैल्शियम* कार्बोनेट तथा कैल्शियम सल्फेट) तथा सिलिका के क्रिस्टल प्रमुख हैं। कार्बनिक पदार्थों के कण सामान्यतः नहीं पाए जाते हैं। क्रिस्टल विभिन्न आकार के होते हैं।

क्रियाकलाप : आलू की पतली परत लो। उस पर मक्का अथवा गेहूँ के थोड़े से स्टार्च रखो। इन्हें स्लाइड पर रखो। उस पर पानी की कुछ बूंदें डाल दो। अब इसे कवर स्लिप से ढक कर सूक्ष्मदर्शी की उच्चशक्ति से देखो। तुम्हें विभिन्न आकार तथा माप के स्टार्च कण दिखाई देंगे। हाइलम को देखने का प्रयत्न करो। आयोडीन के इस घोल से रँगने के बाद स्टार्च कण काले नीले रंग के हो जाएंगे।

क्रियाकलाप : किसी तालाब से लेमना के पौधे लीजिए। इन्हें कुछ दिन तक 75% एल्कोहल में रखिए। इससे ये रंगहीन हो जाएंगे। एक पौधे को स्लाइड पर रख कर ग्लिसरीन की एक बूंद डालिए और इसे उच्चशक्ति वाले सूक्ष्मदर्शी से देखिए। आपको सूई की तरह के क्रिस्टल के बहुत से पूल (गट्ठे) दिखाई देंगे।

सारांश

छोटी से छोटी कोशिका की भी भीतरी रचना बहुत जटिल होती है। इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से बहुत से कोशिकीय अवयवों का पता लग सका है। अब हमें विभिन्न संरचनाओं की रचना तथा कार्य का ज्ञान हो गया है। सभी यूकैरियोटिक कोशिकाओं के चारों ओर प्लैज्मा झिल्ली होती है। पादप कोशिका के चारों ओर इसके अतिरिक्त एक दृढ़, संरधित सेल्यूलोज की कोशिका भित्ति होती है। कोशिका भित्ति कोशिका को यांत्रिक सहारा देती है और उसे परासरण के कारण अधिक फूलने नहीं देती। कुछ प्राणी कोशिकाओं की सतह पर तन्तुमयी परत होती है जिसे कोशिका आवरण कहते हैं। यह परत कोशिकाओं को पहचानने तथा जोड़ने का कार्य करती है।

कोशिका द्रव्य एक जैली की तरह का प्रोटोप्लाज्मा है। कोशिका द्रव्य में केन्द्रक शामिल नहीं होता। कोशिका द्रव्य में अंगक, घुलित कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ, प्रोटीन तथा कोशिकीय अंतर्विष्ट होते हैं। साइक्लोसिस से पादाभ बनते हैं और अंगकों में गति होती है। कोशिका द्रव्यी एंजाइम ग्लाइकोलिसिस तथा बहुत सी प्रोटीन तथा वसीय एसिड का जैव संश्लेषण करते हैं।

केन्द्रक कोशिका का प्रमुख अंगक है। यह दोहरी झिल्ली से ढका रहता है जिसे केन्द्रक आवरण कहते हैं और इसमे बहुत से रंध होते हैं। इसमें केन्द्रक द्रव्य होता है। केन्द्रक द्रव्य में एक या अधिक केन्द्रिकाएं तथा क्रोमेटिन पदार्थ होता है। क्रोमेटिन तन्तु डी.एन.ए. तथा प्रोटीन के बने होते हैं। विभाजन से पहले क्रोमेटिन संघनित हो जाता है और सुस्पष्ट धागों-से बन जाते हैं जिसे क्रोमोसोम कहते हैं। क्रोमोसोम पर जीन होते हैं। केन्द्रक कोशिका की सभी क्रियाओं को नियंत्रित करता है।

माइटोकॉन्ड्रिया को कोशिका को 'ऊर्जाघर' कहते हैं। उसके चारों ओर दोहरी झिल्ली होती है और इसमें मैट्रिक्स भरा रहता है। भीतरी झिल्ली में बहुत से वलय बनते हैं जिन्हें क्रिस्टी कहते हैं। क्रिस्टी मैट्रिक्स के अन्दर तक चली जाती है। भीतरी झिल्ली तथा क्रिस्टी पर बहुत से प्रोटीन के कण होते हैं और ये इलैक्ट्रान संवहन एंजाइम तन्त्र को बनाते हैं। माइटोकॉन्ड्रिया में आक्सीश्वसन और ए.टी.पी. का संश्लेषण होता है।

क्लोरोप्लास्ट वर्णक है जिसमें क्लोरोफिल होता है। इसके चारों ओर दोहरी झिल्ली होती है। इसके भीतर स्ट्रोमा होता है जिसमें बहुत सी झिल्लीयुक्त संरचनाएं होती हैं जिन्हें थैलेकाइड कहते हैं, एक गट्ठा सा बनाती हैं। इस गट्ठे को ग्रेना कहते हैं। क्लोरोफिल थैलेकाइड की झिल्ली में स्थित होता है जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया करता है। पौधों में पाए जाने वाले अन्य वर्णक हैं ल्युकोप्लास्ट , एमाइलोप्लास्ट तथा क्रोमोप्लास्ट।

अन्तर्द्रव्यी जालिका (ER) में झिल्लीयुक्त सिस्ट्रनी तथा वाहिकाएं कोशिका द्रव्य में आपस में जुड़ी रहती हैं। स्थूल ER की सतह पर राइबोसोम होते हैं और वे स्रावी तथा झिल्लीयुक्त प्रोटीन का संश्लेषण करते हैं। चिकनी ER पर राइबोसोम नहीं होते और वे लिपिड तथा स्टेरॉल को संश्लेषित करते हैं

गाल्जीकाय में चपटी, झिल्लीयुक्त सिस्ट्रनी का गट्ठा होता है। यह स्रावी पदार्थों को एकत्र करके स्रावी पुटिकाओं में बन्द करने में सहायता करता है।

लाइसोसोम को कोशिका का 'आत्म हत्या का थैला' कहते हैं। ये झिल्लीयुक्त पुटिका हैं। इसके तरल में एसिड हाइड्रोलेज का संग्रह रहता है। वे अन्तःपुटिका अथवा क्षतिग्रस्त अंगकों से जुड़ जाते हैं और इन्हें जलअपघटित कर देते हैं।

परऑक्सीसोम तथा ग्लाइऑक्सीसोम सूक्ष्मकाय हैं। ये झिल्ली पुटिकाएं हैं जिनमें परआक्साइड को उत्पन्न तथा नष्ट करने वाले एंजाइम होते हैं। वे परआक्साइड से होने वाली हानि से कोशिका की रक्षा करते हैं।

राइबोसोम दानेदार होते हैं जो rRNA तथा प्रोटीन के बने होते हैं। वे कोशिका द्रव्य,माइटोकॉन्ड्रिया तथा क्लोरोप्लास्ट में प्रोटीन संश्लेषण में भाग लेते हैं। राइबोसोम कोशिका द्रव्य में तथा स्थूल ER की झिल्ली पर अकेले अथवा पॉलिसोम होते हैं।

सूक्ष्म तन्तु तथा सूक्ष्म नलिकाएं कोशिका की रचना का ढाँचा तथा उसकी प्रणाली को बनाते हैं। वे सूक्ष्मोर्द्धव, सिलिया तथा फ्लैजिला की गति में सहायता करती हैं। सूक्ष्मोर्द्धव कोशिका की मुक्त सतह पर पतले जीवद्रव्यी उर्द्धव होते हैं। ये तरल माध्यम में कोशिका गति में सहायता करते हैं। सिलिया से कोशिका की सतह पर पदार्थ भी गति करते हैं।

तारक केन्द्र एक जोड़ी बेलनाकार रचना है जो केन्द्रक के ध्रुव पर स्थित होते हैं। उनकी भित्ति में सूक्ष्म नलिका त्रिक के 9 सेट होते हैं। ये प्रमुखतः जन्तु कोशिका में पाए जाते हैं। ये कोशिका विभाजन के समय

तर्कु बनाते हैं और सिलिया तथा फ्लैजिला के लिए 'आधारीकाय' बनाते हैं। रिक्तिकाएं कोशिका द्रव्य में होती हैं और उनमें तरल भरा रहता है। परिपक्व पादप कोशिका में केवल एक बड़ी रिक्तिका होती है, जो कोशिका द्रव्य को एक पतली परीधीय परत में फैला देती है।

स्टार्च कण, ग्लाइकोजन कण तथा वसीय बिंदु जैसे निर्जीव आंतरंगक कोशिका द्रव्य में संचित रहते हैं। बहुत से कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ के कण भी कुछ कोशिकाओं में पाए जाते हैं।

प्रश्नावली

1. निम्नलिखित में भिन्नता बताइए :
   (क) कोशिका द्रव्य तथा केन्द्रक द्रव्य
   (ख) क्रोमेटिन तथा क्रोमोसोम
   (ग) सूक्ष्मवाहिकाएं तथा सूक्ष्मतन्तु
   (घ) ल्यूकोप्लास्ट तथा क्रोमोप्लास्ट

2. निम्नलिखित के प्रमुख कार्य बताइए :
   (क) राइबोस (ख) लाइसोसोम (ग) क्रोमोसोम (घ) परआक्सिसोम

3. कोशिका में निम्नलिखित रचनाएं कहां मिलती हैं :
   (क) सूक्ष्मनलिकाएं (ख) थैलेकॉइड (ग) F_0–F_1 जटिल (घ) राइबोसोम
   (ङ) केन्द्रिका

4. गाल्जीकॉय तथा चिकनी एवं स्थूल अन्तर्द्रव्यी जालिका के कार्यों की एक सूची बनाइए।

5. केन्द्रक के दो प्रमुख कार्य क्या हैं? इन कार्यों को करने के लिए कौन से जैव अणु उत्तरदायी हैं?

6. सिलिया, फ्लैजिला तथा तारककाय की रचना तथा कार्य में क्या समानता है?

7. निम्नलिखित में से कौन सा केवल पादप कोशिकाओं में तथा कौन सा केवल जन्तुओं में पाया जाता है तथा कौन सा जन्तु तथा पादप दोनों कोशिकाओं में ही पाया जाता है :
   (क) केन्द्रक (ख) सैन्ट्रोसोम (ग) गाल्जीकाय (घ) ल्यूकोप्लास्ट
   (ङ) कोशिका आवरण

8. स्तम्भ I में दिए गए शब्दों को स्तम्भ II में दिए गए शब्दों से मिलाइए -

स्तम्भ I	*स्तम्भ II*
(क) पालिसोम	1. स्थूल अन्तर्द्रव्यी जालिका
(ख) एसिड हाइड्रोलेसेज	2. प्रोटीन संश्लेपण
(ग) चिकनी अन्तर्द्रव्यी जालिका	2. लाइसोसोम
(घ) थैलेकाइड	4. ग्रैना
(ङ) क्रिस्टी	5. माइटोकॉन्ड्रिया
	6. स्टेरॉयड संश्लेषण

9. निम्नलिखित में से कौन सा भिन्न वर्ग से सम्बन्ध रखता है ?

(क)	1. केन्द्रक	2. रिक्तिका	3. कोशिका भित्ति	4. क्लोरोप्लास्ट
(ख)	1. केन्द्रक	2. केन्द्रिका	3. तारक केन्द्र	4. क्रोमोसोम
(ग)	1. तारक केन्द्र	2. आधारीकाय	3. फ्लैजिला	4. सूक्ष्मोर्द्वव

10. प्रत्येक में सही उत्तर के आगे सही का निशान (√) लगाइए :
   (क) *पादप कोशिका जन्तु कोशिका से भिन्न होती है क्योंकि उसमें होता है :*
      (i) माइटोकॉन्ड्रिया
      (ii) कोशिका भित्ति
      (iii) राइबोसोम
      (iv) गॉल्जीकाय

(ख) कुछ कवकों की कोशिका भित्ति बनी होती है :
- (i) लिग्निन
- (ii) सूबेरिन
- (iii) काइटिन
- (iv) पैक्टिन

(ग) ऑक्सीश्वसन की क्रिया कौन सा अंगक करता है?
- (i) ग्लाइआक्सीसोम
- (ii) माइटोकॉन्ड्रिया
- (iii) लाइसोसोम
- (iv) क्लोरोप्लास्ट

(घ) क्लोरोप्लास्ट में थैलेकाइड रूप में होते हैं :
- (i) परस्पर जुड़ी हुई थैलियां
- (ii) परस्पर जुड़ी हुई नलिकाएं
- (iii) मुक्त डिस्क
- (iv) डिस्क का गट्ठा

(ङ) अन्तरावस्था केन्द्र के चारों ओर होती है :
- (i) एक रन्ध्रहीन दोहरी झिल्ली
- (ii) एक रन्ध्रहीन अकेली झिल्ली
- (iii) एक रन्ध्रयुक्त दोहरी झिल्ली
- (iv) बहुत सी झिल्लियां

11. पहले दो शब्दों में सम्बन्ध देखिए और चौथे खाली स्थान में उचित शब्द लिखिए :
- (क) तारक केन्द्र : 9 + 0 : : सिलिया : ____________
- (ख) माइटोकॉन्ड्रिया : क्रिस्टी : : क्लोरोप्लास्ट : ____________
- (ग) क्लोरोप्लास्ट : प्रकाश संश्लेषण : : एमाइलोप्लास्ट : ____________
- (घ) केन्द्रक : प्रकाश सूक्ष्मदर्शी : : अंतर्द्रव्यी जालिका : ____________

12. निम्नलिखित के वैज्ञानिक शब्द लिखिए :
- (क) कोशिका द्रव्य में पाया जाने वाला राइबोसोम का समूह
- (ख) माइटोकॉन्ड्रिया की भीतरी झिल्ली का अन्तर्वलयन
- (ग) थैलेकॉइड के गट्ठे
- (घ) माइटोकॉन्ड्रिया की भीतरी झिल्ली पर वृत्तयुक्त कण

अध्याय 10

कोशिकीय श्वसन

कोशिकीय अवयवों के संश्लेषित करने तथा विभिन्न प्रकार के कार्यों जैसे पदार्थों का ग्रहण करना, वृद्धि, विकास तथा गति आदि करने के लिए सभी सजीव कोशिकाओं को ऊर्जा की आवश्यकता होती है। शरीर को गर्म रखने तथा गति करने के लिए भी कुछ जीवों को ऊर्जा को आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा जटिल कार्बनिक यौगिकों के *आक्सीकरण* से प्राप्त होती है। आक्सीकरण की क्रिया कोशिकीय श्वसन द्वारा सम्पन्न होती है। यहाँ तक कि हरे पौधे, जो प्रकाश संश्लेषण में सौर ऊर्जा प्राप्त करते हैं और इसे कार्बनिक पदार्थों में संचित करते हैं, वे भी लगातार ऊर्जा प्राप्त करने के लिए श्वसन पर ही निर्भर रहते हैं।

पोषण के रूप में प्राप्त कार्बनिक यौगिक का आक्सीकरण चरणों में होता है ताकि नियंत्रित रूप से ऊर्जा निकल सके। श्वसन में प्राप्त कुल ऊर्जा का 50 प्रतिशत भाग जैव अणु बनाने में तथा अन्य जैव प्रक्रियाओं में प्रयुक्त हो जाता है। इसके विपरीत निर्जीव तन्त्र में जलने से प्राप्त ऊर्जा मुख्यतः ऊष्मा तथा कुछ आंशिक रूप से प्रकाश में निकलती हैं। इसकी तुलना में सजीव तन्त्र में ऊर्जा सोपान में (शनैः-शनैः) निकलती है और प्रत्येक ऊर्जा विमुक्त करने वाले पद का संबंध ए. टी. पी. के संश्लेषण से है। जैविक ऑक्सीकरण में आक्सीजन के एक परमाणु के अपचयन से 100 कि. कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। इस ऊर्जा का उपयोग 6 ए. टी. पी. के परमाणु बनाने में होता है। आप इसी अध्याय के बाद में पढ़ेंगे कि श्वसन क्रिया के विभिन्न चरण किस प्रकार निष्कासित ऊर्जा का उपयोग अधिक क्षमता से करने के लिए आवश्यक हैं।

सभी कोशिकाओं में छोटे-छोटे सोपानों में आक्सीकारक प्रक्रियाएं करने के लिए आवश्यक रचनात्मक संगठन तथा एंजाइम होते हैं। इस प्रक्रिया में कार्बनिक यौगिक मुख्यतः कार्बोहाइड्रेट का, आक्सीकरण होता है जिसमें हाइड्रोजन को हटाने से कार्बनडाइआक्साइड बनती है। अधिकांश जीवों में आक्सीकरण क्रिया के लिए बाहरी आक्सीजन के परमाणु की आवश्यकता होती है। अन्ततः आक्सीजन अपचयित होकर पानी में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार कार्बोहाइड्रेट के आक्सीकरण से ऊर्जा के निर्मुक्त होने के अतिरिक्त पानी तथा कार्बन डाइआक्साइड भी बनते हैं।

श्वसन प्रक्रिया में उत्पन्न कार्बन डाइआक्साइड को कोशिका से बाहर निकालना अति आवश्यक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि श्वसन में कोशिका तथा वातावरण में गैसों का आदान-प्रदान ठीक उसी

प्रकार होता है जैसे किसी जीव तथा वातावरण में। लेवोजियर ने प्रदर्शित किया था कि जन्तु हवा से आक्सीजन लेते हैं और कार्बन डाइआक्साइड तथा पानी छोड़ते हैं। एक बहुकोशिकीय जीव, अपने आवास के अनुसार, श्वसनी गैसों का आदान-प्रदान तरल या गैसीय माध्यम में करता है। लेकिन कोशिका में गैसों का आदान-प्रदान तरल माध्यम में ही होता है।

कोशिकीय श्वसन में उपयोग होने वाला स्बस्ट्रेट मुख्यतः ग्लूकोस है। कुछ सीमा तक वसीय अम्ल तथा ऐमीनो एसिड का उपयोग भी होता है। लेकिन इनके पहले आक्सीकरण होकर मध्यवर्गी यौगिक बनते हैं, जो शर्करा आक्सीकरण से बनने वाले यौगिक के समरूप होते हैं। तीनों स्रोतों से प्राप्त मध्यवर्ती उपापचयी पदार्थों का आक्सीकरण अन्ततः एक सामान्य आक्सीकारक मार्ग जिसे *क्रेब्स* या *ट्राईकार्बोक्सिलिक एसिड चक्र (टी. सी. ए. चक्र)* कहते हैं, से होता है।

आक्सीजन की निर्भरता के अनुसार कोशिकीय श्वसन को दो वर्गों में रख सकते हैं। *आक्सी श्वसन* में आक्सीजन की आवश्यकता होती है और यह क्रिया माइटोकॉन्ड्रिया में सम्पन्न होती है। *अनाक्सी श्वसन* में आक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती तथा ये कोशिका द्रव्य में स्थित एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित होती हैं। दोनों प्रकार के श्वसनों में आरम्भिक चरण एक जैसे होते हैं जिसे *ग्लाइकोलिसिस* कहते हैं। ग्लाइकोलिसिस का अर्थ है शर्करा का टूटना। यह प्रक्रिया कोशिका द्रव्य में होती है। इसमें ग्लुकोस के टूटने से *पायरूविक ऐसिड* बनता है जिसमें कार्बन के तीन अणु होते हैं।

ग्लाइकोलिसिस

ग्लाइकोलिसिस (चित्र 10.1) में ग्लुकोस ($C_6H_{12}O_6$) से ग्लुकोस – 6 – फास्फेट बनता है। ग्लूकोस-6-फास्फेट से फ्रक्टोज-1, 6-डाइफास्फेट बनता है, जिसमें ए. टी. पी. के अणुओं का उपयोग होता है। इस क्रिया को फास्फोरिलेशन कहते हैं। इसमें शर्करा (उत्तेजित) सक्रिय हो जाती है और कोशिका से बाहर नहीं जा पाती। फ्रक्टोज-1, 6-डाइफास्फेट, एंजाइम की क्रिया
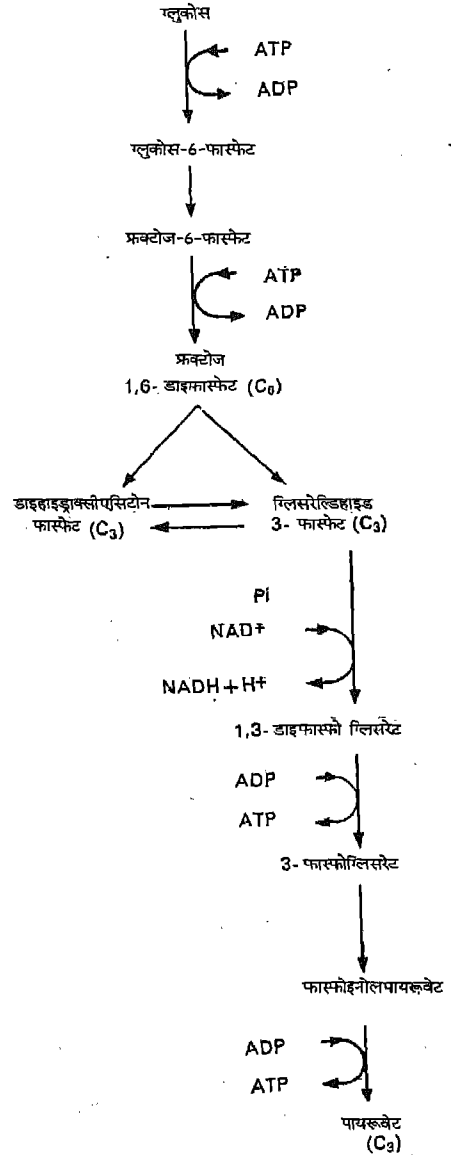
चित्र 10.1 ग्लाइकोलिसस

से ट्रियोज-फास्फेट (3 कार्बन वाली शर्करा) के दो परमाणु बनाता है। ये अणु हैं — ग्लिसरेल्डिहाइड-3-फास्फेट (पी. जी. ए. एल.) तथा डाइहाइड्राक्सि ऐसिटोन फास्फेट। बाद में डाइहाइड्राक्सि ऐसिटोन फास्फेट भी पी. जी. ए.

एल. में परिवर्तित हो जाता है। प्रत्येक पी. जी. ए. एल. से एक मध्यंवर्ती यौगिक 1, 3-डाइ फास्फोग्लिसरेट (डी. पी. जी. ए. एल.) बनता है। यह यौगिक फास्फोरिक एसिड (H_3PO_4) से प्राप्त अकार्बनिक फास्फोरस के मिलने से बनता है। इस प्रकार डी. पी. जी. ए. से डी. पी. जी. ए. एल. बनने में ए. टी. पी. का उपयोग नहीं होता। इसके बाद डी. पी. जी. ए. एल. के आक्सीकरण से पायरूविक एसिड ($CH_3CO.COOH$) बनता है जिसमें तीन कार्बन होते हैं। इस प्रक्रिया में 2 प्रोटोन (H^+) तथा 2 इलैक्ट्रान (e^-) निकलते हैं। एक प्रोटोन तथा दो इलैक्ट्रान के मिलने से एन. ए. डी.$^+$ से एन. ए. डी. एच. बन जाता है। इसके साथ साथ ए. टी. पी. के दो अणु भी बनते हैं। इस प्रकार ग्लूकोस से प्राप्त ट्रियोज फास्फेट के दो अणु बनते हैं। इस प्रकार ग्लूकोस से प्राप्त फास्फेट के दो अणुओं से ए. टी. पी. के 4 अणु बने। आपने पढ़ा है कि ग्लूकोस से फ्रक्टोज 1, 6-डाइफास्फेट बनने में ए. टी. पी. के दो अणुओं का उपयोग हुआ तब भी ग्लूकोस के एक अणु के उपापचयन से ए. टी. पी. के दो अणुओं का शुद्ध लाभ होता है।

अनाक्सी श्वसन

पास्चर ने सन् 1860 में पता लगाया कि यीस्ट ग्लूकोस पर किण्वन क्रिया करके एल्कोहल बनाता है तथा यह आक्सीजन की अनुपस्थिति में श्वसन कर सकता है। ऐसे श्वसन को *अनाक्सी श्वसन* कहते हैं। बाद में यह सिद्ध हुआ कि अनाक्सी श्वसन में अक्सीकरण के समय स्बस्ट्रेट से इलैक्ट्रान निकल जाते हैं, लेकिन अंतिम रूप से आक्सीजन के अणु स्थानान्तरित नहीं होते। इलैक्ट्रान को ग्रहण करने वाले यौगिक बहुधा पायरूविक एसिड अथवा एसिटेल्डिहाइड हैं जो अनाक्सी श्वसन के मार्ग के भाग हैं। आखिरी उत्पाद लैक्टिक एसिड अथवा इथानोल होता है न कि पानी।

पेशियों में ग्लाइकोलिसि द्वारा बना एन. ए. डी. एच. पुनः आक्सीकृत हो जाता है और उससे एन. ए. डी.$^+$ बन जाता है। इस प्रक्रिया में वह एक प्रोटोन तथा दो इलैक्ट्रान, पायरूविक एसिड को दे देता है जिससे लैक्टिक एसिड बन जाता है। कंकाली पेशियां प्रायः अनाक्सी श्वसन से ऊर्जा प्राप्त करती हैं। अधिक व्यायाम के बाद लैक्टिक एसिड एकत्र हो जाता है जिसके कारण पेशियां थक जाती हैं। आराम के समय लैक्टिक एसिड पुनः पायरूविक एसिड में बदल जाता है जो

> अध्याय 5 में (छोटे जैव परमाणु) आपने आक्सीजन को संचित करने वाले वर्णक कंकाल पेशी तन्तु के मायोग्लोबिन के विषय में पढ़ा है। लाल (गहरे रंग) पेशी तन्तुओं में मायोग्लोबिन की मात्रा श्वेत (पीले रंग) पेशी तन्तुओं की अपेक्षा अधिक होती है। इसलिए लाल तन्तु ग्लूकोस के आक्सी श्वसन के द्वारा लम्बे समय तक ऊर्जा उत्पादन बनाए रखने के लिए मायोग्लोबिन में संचित आक्सीजन का उपयोग कर सकते हैं। इससे ये लम्बे समय तक कार्य कर सकते हैं। इसके विपरीत *श्वेत तन्तु ग्लाइकोलिसिस* द्वारा बहुत तीव्र तथा कठिन कार्य करने के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि ऐसे कार्यों के लिए उन्हें तुरन्त काफी मात्रा में आक्सीजन नहीं मिलती। लेकिन श्वेत तन्तुओं में लैक्टिक एसिड संचित हो जाता है और वे शीघ्र ही थक जाते हैं। इसलिए ऐसे एथलीट जिनमें लाल तन्तु अधिक होते हैं उनकी पेशियाँ शरीर क्रियाविज्ञान की दृष्टि से अधिक सक्षम होती हैं। वे खिलाड़ी लम्बे समय तक लम्बी दूरी तक दौड़ अथवा तैर सकते हैं। जिन एथलीटों की पेशियों में श्वेत तन्तु अधिक होते हैं वे अधिक तेज तथा फुर्तीले होते हैं लेकिन वे छोटे तथा कम समय में होने वाले खेल, जैसे "शाट पुट" के लिए अधिक उपयुक्त है।

फिर से आक्सी श्वसन मार्ग में आ जाता है।

यीस्ट में पायरूवेट से पुनः एसिटेल्डिहाइड बन जाता है (चित्र 10.2)। एसिटेल्डिहाइड एन. ए. डी. एच. को पुनः आक्सीकृत करता है और स्वयं इथानोल में बदल जाता है। इस प्रक्रिया में कार्बन डाइआक्साइड भी बनती है। इस प्रकार के अनाक्सी श्वसन को *किण्वन* कहते हैं। यीस्ट के संवर्धन में किण्वन से बने इथानोलों के संचय होने से गुणन रुक सकता है और कोशिका की मृत्यु हो जाती है। यद्यपि आक्सीजन की उपस्थिति में यीस्ट आक्सी श्वसन कर सकती है।

अनाक्सी श्वसन, आक्सी श्वसन की अपेक्षा कम ऊर्जा उत्पन्न करती है। इसके दो कारण हैं — (I) श्वसन के अंतिम उत्पादों का ऊर्जा के लिए और आक्सीकरण हो सकता है, (II) एन. ए. डी. के पुनः बनने से ए. टी. पी. नहीं बनता, क्योंकि इलैक्ट्रान आक्सीजन की ओर स्थानान्तरित नहीं होते।
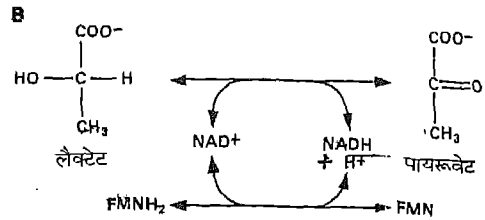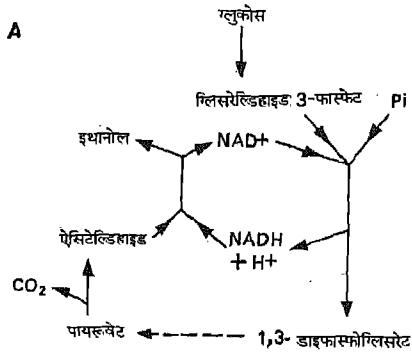
चित्र 10.2 अनाक्सी श्वसन का पथ — (A) यीस्ट में (B) पेशी कोशिका में

क्रियाकलाप : आप दो सरल प्रयोगों द्वारा आक्सी श्वसन का प्रदर्शन कर सकते हैं —
1. एक परखनली "अ" में 10 प्रतिशत वाला 10 मि. ली. ग्लुकोस का घोल लीजिए। पानी में एक चुटकी यीस्ट का घोल बनाइए और इस घोल की कुछ बूंदें "अ" परखनली में डाल दीजिए। इसके तरल की सतह पर कुछ बूंदें तेल की डाल दो जिससे कि परखनली में हवा न जा सके (चित्र 10.3)। परखनली को रबर की कॉर्क से अच्छी प्रकार बन्द कर दीजिए। मुड़ी हुई कांच की एक छोटी नली के एक सिरे को कार्क द्वारा परखनली में पहुँचाइए। इससे परखनली में हवा जा सकेगी। काँच की नली के दूसरे सिरे को कार्क में लगी अन्य मुड़ी हुई कांच की नली से रबर की नली की सहायता से जोड़िए। कांच की नली के खुले सिरे को चूने के पानी में डुबाइए जो एक अन्य परखनली "ब" में है जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। दोनों परखनलियों में कस कर कार्क लगाइए जिससे कि कोई गैस बाहर या भीतर न जा सके। पहली परखनली को बीकर में गरम पानी (37-38°

चित्र 10.3 यीस्ट का एल्कोहल किण्वन
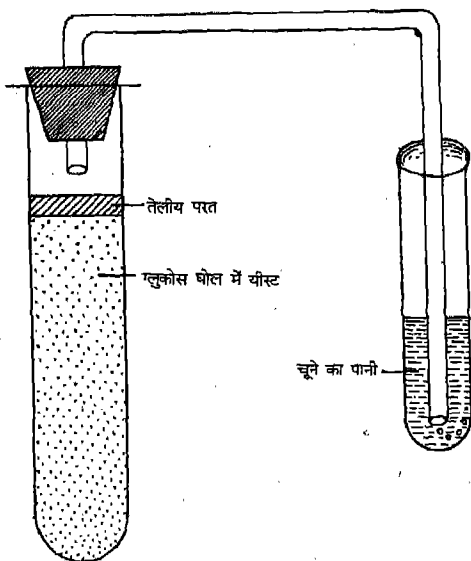
चित्र 10.4 अंकुरित बीजों में अनाक्सी श्वसन
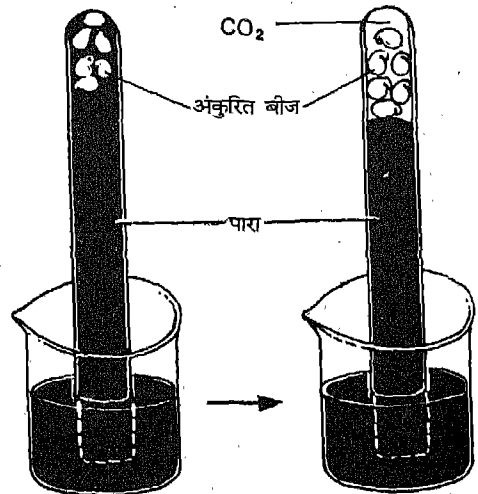
सें.) में रखिए। चूने का पानी धीरे-धीरे दूधिये रंग का हो जाता है। इससे यह पता लगता है कि यीस्ट के कारण कार्बन डाइआक्साइड बन रही है। निकास नली में चूने के पानी का स्तर नहीं बढ़ता। इससे पता चलता है कि "अ" परखनली में गैस का आयन कम नहीं हुआ है और यह सिद्ध करता है कि यीस्ट ने आक्सीजन का उपयोग नहीं किया है। इस उपकरण को एक या दो दिन रखा रहने दीजिए। जब आप "अ" परखनली का कार्क खोलेंगे तो आपको एल्कोहल की गन्द आएगी। इससे पता चलता है कि इथानोल बन गया है। इस क्रियाकलाप से यह भी सिद्ध होता है कि यीस्ट ग्लुकोस के किण्वन द्वारा इथानोल तथा कार्बन डाइआक्साइड बनाने के लिए अनाक्सी श्वसन करता है।

2. कुछ अंकुरित बीजों (मटर, सेम अथवा चना) के बीजावरण को हटाइए। इन बीजों को परखनली में भरे पारे में रखिए। अंगूठे से परखनली के मुंह को बन्द करके किसी चौड़े बर्तन में रखे पानी में उल्टा करके रख दीजिए और ध्यान से अपने अंगूठे को हटा लीजिए (चित्र 10.4)। पारे से हल्के होने के कारण बीज परखनली के ऊपरी भाग में आ जाएंगे। जब अकुंरण होगा तब गैस परखनली में स्थित पारे के ऊपर एकत्र हो जाएगी। परखनली में पोटेशियम हाइड्रोक्साइड के कण डालिए। ये कण पारे के ऊपर जायेंगे और गैस को अवशोषित कर लेंगे। परखनली में पारा फिर ऊपर चढ़ जाता है। पोटेशियम हाइड्रोक्साइड कार्बन डाइआक्साइड गैस के साथ क्रिया करके पोटेशियम कार्बोनेट तथा पानी बनाता है। इसलिए गैस लुप्त हो जाती है। इससे यह सिद्ध होता है कि अंकुरित बीज आक्सीजन की अनुपस्थिति में पारे के स्तम्भ में अनाक्सी श्वसन द्वारा कार्बन डाइआक्साइड बनाते हैं।

आक्सी श्वसन

आक्सीश्वसन में स्वस्ट्रेट द्वारा छोड़े गए इलैक्ट्रान तथा प्रोटोन को अन्ततः आक्सीजन के अणु ग्रहण करते हैं। इसके लिए कोशिका वातावरण से ग्रहण की गई आक्सीजन का उपयोग करती है। आक्सी श्वसन मैट्रिक्स तथा माइटोकॉन्ड्रिया की भीतरी झिल्ली में स्थित एंजाइम द्वारा होता है। इस प्रक्रिया में बनी कार्बन डाइआक्साइड गैस कोशिका से बाहर निकाल दी जाती है।

आक्सी श्वसन में दो स्पष्ट परन्तु परस्पर निर्भर प्रक्रियाएँ होती हैं। *क्रेब्स ट्राई कार्बोक्सिलक एसिड चक्र (क्रेब्स चक्र अथवा टी. सी. ए. चक्र)* में कार्बन डाइआक्साइड उत्पन्न होती है और अपचयित को-एंजाइम बनते हैं, *इलैक्ट्रॉन संवहन श्रृंखला,* जिसमें अपचयित को-एंजाइम पुनः निर्मित हो जाते हैं और आक्सीजन का अपचयन जल में हो जाता है।

क्रेब्स टी. सी. ए. चक्र : ग्लाइकोलिसिस में बने

क्रियाकलापः ऑक्सी श्वसन में कार्बन डाइआक्साइड के उत्पन्न होने को प्रदर्शित करने के लिए निम्न क्रियाकलाप कर सकते हैं —

1. यीस्ट में आक्सी श्वसन के लिए वही उपकरण ले सकते हैं जो अनाक्सी श्वसन में लिए थे। (चित्र 10.3)। केवल इसमें दो मुख्य परिवर्तन करने पड़ेंगे। यीस्ट संवर्धन का बर्तन काफी बड़ा होना चाहिए जिससे कि ग्लुकोस के घोल के ऊपर बहुत सा स्थान खाली हो। घोल की सतह तेल से नहीं ढकनी चाहिए इससे घोल का सम्पर्क वायु से बना रहेगा। इस प्रयोग में चूने का पानी दूधिया हो जाएगा जिससे कार्बन डाइआक्साइड के उत्पन्न होने का पता चलेगा। आप देखेंगे कि "ब" परखनली में पानी का स्थर ऊंचा हो जाता है। इससे पता चलता है कि "अ" परखनली में गैस का आयतन कम हो गया है। ऐसा इसलिए होता
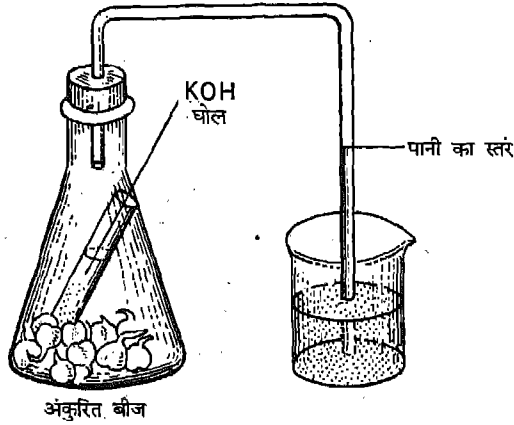
चित्र 10.5 अंकुरित बीजों में आक्सी श्वसन

है कि यीस्ट परखनली में स्थित आक्सीजन का उपयोग कर लेती है। आपको "अ" परखनली को खोलने पर एल्कोहल की गन्ध नहीं आएगी।

2. इसके लिए एक दूसरे प्रकार का उपकरण भी बना सकते हैं और प्रयोग कर सकते हैं। इसमें मूलतः क्रियाकलाप-1 में उपयोग किए गए ही उपकरण हैं। एक कॉनिकल फ्लास्क लीजिए। इसमें कोई सजीव (कलियां, अंकुरित बीज, कीट अथवा केंचुआ) रखिए। इसे रबर की कार्क से बन्द कर दीजिए। एक कांच की निकास नली लो जो दो स्थानों पर मुड़ी हो। इसे कार्क में लगा दीजिए (चित्र 10.5)। एक छोटी नली लीजिए। इसमें 20 प्रतिशत पोटैशियम हाइड्रोक्साइड का घोल भर कर फ्लास्क में लटका दीजिए। यह ध्यान रखें कि यह सजीवों पर न गिरे। कार्क को वायुरोधी करिए। निकास नली के खुले सिरे को बीकर में स्थित रंगीन पानी में डुबाइए। एक नियंत्रक उपकरण भी लगाइए जिसमें सजीव न हों। सजीव वाले उपकरण में रंगीन पानी निकास नली में ऊपर चढ़ जाता है। इससे पता लगता है कि श्वसन होने तथा कार्बन डाइआक्साइड के अवशोषण के कारण फ्लास्क में गैस का आयतन कम हो गया है। नियंत्रित उपकरण में कोई परिवर्तन नहीं आया।

पायरूविक एसिड का आक्सीकरण होता है। यह प्रक्रिया टी. सी. ए. चक्र द्वारा माइटोकॉन्ड्रिया के मैट्रिक्स में सम्पन्न होती है। यह चक्र कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन जैसे उपापचयी उत्पादों के लिए एक सामान्य आक्सीकारक मार्ग है (चित्र 10.6)। चक्र के कुछ मध्यवर्ती उत्पादों का उपयोग ग्लूटामेट तथा ऐस्पार्टेट जैसे जैव-अणुओं के संश्लेषण में हो जाता है।

चक्र में जाने से पूर्व पायरूविक एसिड माइटोकॉन्ड्रिया में जाता है। यहां पर इसमें से कार्बन का एक अणु कम हो जाता है और कार्बन के शेष अवयव को-एंजाइम से जुड़ जाता है जिसके कारण एसिटिल को. ए. (CoA) बनता है। यह अभिक्रिया एक आक्सीकारक-अपचयन प्रक्रिया है और इसमें हाइड्रोजन आयन, इलैक्ट्रॉन तथा कार्बन डाइआक्साइड बनती है। इस प्रक्रम में एन. ए. डी. के अपचयन से एन. ए. डी. एच. बनता है। वसीय एसिड के बीटा-आक्सीकरण से भी एसिटिल को. ए. (CoA) एक अन्तिम उत्पाद के रूप में बनता है। दोनों स्रोतों से प्राप्त एसिटिल को. ए., ओक्जैलो
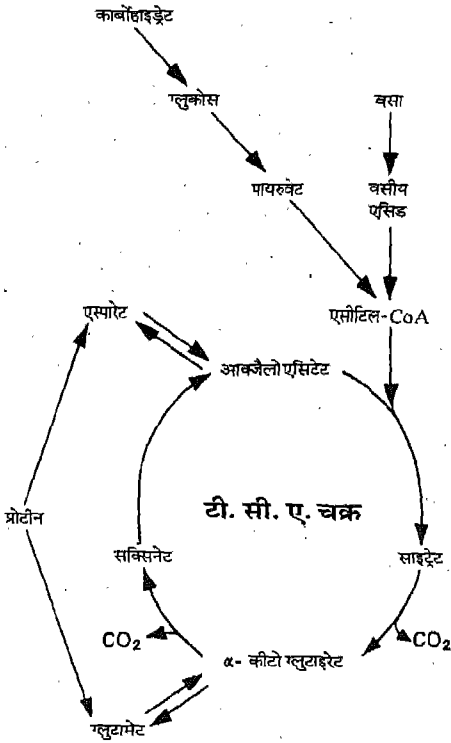
चित्र 10.6 टी. सी. ए. चक्र कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन का सामान्य उपापचय मार्ग।

एसिटिक एसिड के साथ संघनित होकर सिट्रिक एसिड बनता है (चित्र 10.7)। माइटोकॉन्ड्रिया में स्थित एंज़ाइम सिट्रिक एसिड का शनैः शनैः सोपान में आक्सीकरण करते हैं जिससे कार्बन डाइआक्साइड निकलती है। इससे अन्ततः औक्जैलो एसिटिक एसिड पुनः प्राप्त हो जाता है और चक्र पूर्ण हो जाता है। चक्र में ऑक्सीकरण चार सोपानों में होता है। आक्सीकरण की क्रिया डिहाड्रोजिनेस एंजाइम से होती है जिसमें एन. ए. डी. अथवा एफ. ए. डी. को-एंजाइम के रूप में उपयोग में आते हैं। को-एंजाइम इसके परिणामस्वरूप क्रमशः एन. ए. डी. एच. अथवा एफ. ए. डी. एच. में उपचयित हो जाते हैं। ये अपने इलैक्ट्रॉनों को माइटोकॉन्ड्रिया श्वसनी शृखंला में पुनः आक्सीकृत होने के लिए स्थानान्तरित कर देते हैं। प्रति सिट्रिक एसिड के आक्सीकरण से ए. टी. पी. का एक अणु बनता है (चित्र 10.7)।
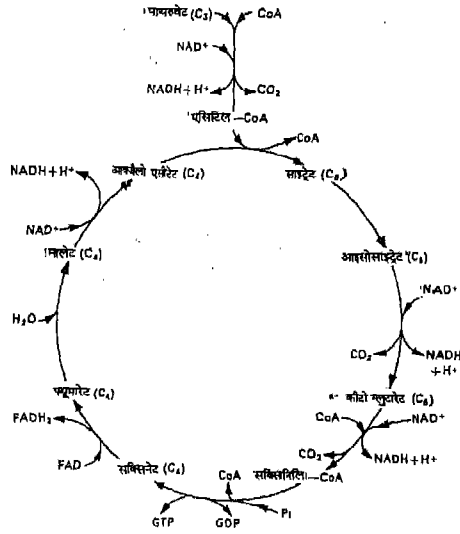
चित्र 10.7 क्रेब्स का टी. सी. ए. चक्र

इलैक्ट्रॉन संवहन शृंखला

आप पढ़ चुके हैं कि आक्सीकरण क्रिया में सब्सट्रेट से निकले H आयन तथा इलैक्ट्रॉन सीधे ही आक्सीजन से क्रिया नहीं करते हैं। बल्कि ये ग्राही अणु को अपचयित करते हैं जैसे एन. ए. डी. तथा एफ. ए. डी. को क्रमशः एन. ए. डी. एच. तथा एफ. ए. डी. एच.$_2$ में। ये अणु अपने इलैक्ट्रॉनों को इलैक्ट्रॉन ग्राही तथा *स्थानान्तरित तंत्र में स्थानान्तरित कर देते हैं। आपको याद होगा* कि माइटोकॉन्ड्रिया की भीतरी झिल्ली के कुछ प्रोटोन, इलैक्ट्रॉन स्थानान्तरित एंजाइम की तरह कार्य करते हैं। वे झिल्ली पर क्रम में सजे रहते हैं और विशेष क्रम में कार्य करते हैं। इलैक्ट्रॉन स्थानान्तरण एंजाइम के इस समूह को माइटोकॉन्ड्रिया श्वसनी शृंखला अथवा इलैक्ट्रॉन संवहन शृंखला कहते हैं (चित्र 10.8)। इस शृंखला के विशेष एंजाइम ग्लाइकोलिसिस तथा टी. सी. ए. चक्र में बने एन. ए. डी. अथवा एफ. ए. डी. जैसे अपचयित प्रास्थैटिक वर्ग से इलैक्ट्रॉन ग्रहण करते हैं। इसके बाद इलैक्ट्रॉन एक एंजाइम से दूसरे एंजाइम पर स्थानान्तरित होते हैं और ऊर्जा उत्पन्न होती है। शृंखला के अन्त में इलैक्ट्रॉन तथा प्रोटोन आक्सीजन से मिलकर पानी बनाते हैं। इस प्रकार आप देखते हैं कि माइटोकॉन्ड्रिया श्वसनी शृंखला में आक्सीजन शीर्षस्थ इलैक्ट्रॉन ग्राही है।

इलैक्ट्रान संवहन में बहुत से साइटोक्रोम — c, c_1, b, a तथा a_3 शामिल होते हैं। इन सबमें आयरन-पोरफाइरिन प्रोटीन होता है। श्रृंखला में आयरन-सल्फर प्रोटीन तथा यूबीक्विनेन (को-एंजाइम Q) भी होता है। श्रृंखला में इलैक्ट्रान प्रवाह का एक उदाहरण है: NADH → FMN(NADH डीहाइडोजिनेस) → FeS प्रोटीन → CoQ → Cyb → Fes प्रोटीन → Co Q(?) → Cy c_1 → Cy c → Cy a-a_3 → O

इलैक्ट्रॉन स्थानान्तरण के प्रत्येक चरण पर इलैक्ट्रॉन ग्राही में इलैक्ट्रॉन दाता (donor) की अपेक्षा इलैक्ट्रॉन बंधुता (acceptor) अधिक होती है। ऐसे इलैक्ट्रॉन स्थानान्तरण से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग मैट्रिक्स से प्रोटीन (H^+) को, भीतरी झिल्ली से बाहर की ओर निकालने में, किया जाता है। इससे मैट्रिक्स की अपेक्षा भीतरी झिल्ली के बाहर की ओर प्रोटीन की उच्च सान्द्रता हो जाती है। भीतरी झिल्ली के पार प्रोटोन् की सान्द्रता को *प्रोटोन ढलान* (Proton gradient) कहते हैं।

आक्सीकारक फॉस्फोरिलेशन

भीतरी झिल्ली के बाहर की ओर प्रोटोन सान्द्रता अधिक होने के कारण प्रोटोन मैट्रिक्स में वापिस चले जाते हैं। यह प्रक्रम ठीक उसी प्रकार होता है जैसे पानी उच्च स्तर से नीचे की ओर जाता है जिससे हाइड्रोइलैक्ट्रिक टरबाइन चलाए जाते हैं। प्रोटीन की इस गति में ऊर्जा निकलती है जो ए. टी. पी. के संश्लेषण में उपयोगी हो जाती है।

प्रोटोन की वापसी भीतरी झिल्ली के कणों द्वारा होती है। F_0-F_1 सम्मिश्रण में, F_1 शीर्ष भाग *ए. टी. पी. संश्लेषण* का कार्य करता है। यह प्रोटोन ग्रेडिएन्ट से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग करके ए. डी. पी. तथा अकार्बनिक (चित्र 10.9) फास्फोरस से ए. टी. पी. बना देता है।

इलैक्ट्रॉन संवहन श्रृंखला में एन. ए. डी. एच. से प्राप्त दो इलैक्ट्रॉन प्रोटोन के 3 जोड़ों को बाहर के कोष्ठ की ओर स्थानान्तरित करते रहते हैं। भीतरी झिल्ली के कणों से मैट्रिक्स में वापिस आने वाले
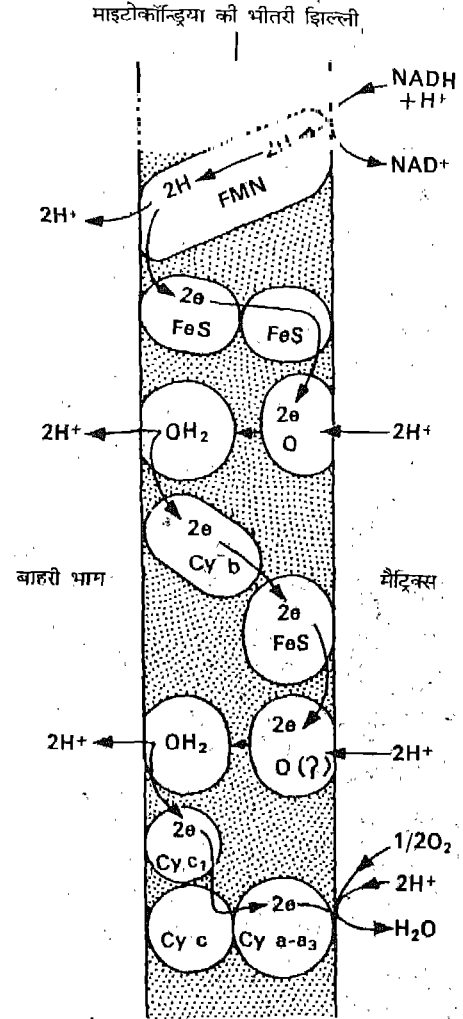
चित्र 10.8 माइटोकॉन्ड्रिया में इलैक्ट्रॉन संवहन श्रृंखला

प्रोटोन के प्रत्येक जोड़ों से एक उच्च ऊर्जा आबन्ध वाला ए. टी. पी. बनता है। इसलिए आक्सीकारक फॉस्फोरिलेशन में एन. ए. डी. एच. के एक अणु के आक्सीकरण से 3 ए. टी. पी. के अणु बनते हैं। एफ. ए. डी. एच.$_2$ भी अपने इलैक्ट्रॉन श्रृंखला में देता है। इससे ए. टी. पी. के केवल 2 अणु बनते हैं।

ए. टी. पी. के उत्पादन को ध्यान में रखते हुए *आक्सीश्वसन का क्या परिणाम हुआ?* आप जानते हैं कि ग्लाइकोलिसिस तथा टी. सी. ए. चक्र में

प्रत्येक ग्लुकोस के एक अणु से एन. ए. डी. एच. के 10 तथा 2 एफ. ए. डी. एच.$_2$ बनते हैं जो ए. टी. पी. के 34 अणुओं के बराबर हैं। इस प्रकार ग्लुकोस के एक अणु के आक्सीकरण से कुल 38 ए. टी. पी. के अणु बनते हैं। अधिकांश यूकेरियॉटिक कोशिका में एन. ए. डी. एच. जो ग्लाइकोलिसिस में बनता है, को माइटोकॉन्ड्रिया में स्थानान्तरित करने में ए. टी. पी. के दो अणुओं का उपयोग हो जाता है। इस प्रकार यूकैरियोट्स में ए. टी. पी. का शुद्ध लाभ 36 होता है।

चित्र 10.9 माइटोकॉन्ड्रिया का भीतरी झिल्ली के कणों द्वारा ए. टी. पी. संश्लेषण

सोपान क्रम में होने वाले आक्सीकरण की उपयोगिता

आपने देखा है कि अनाक्सी श्वसन तथा आक्सी श्वसन कई चरणों में होता है। आप सोचेंगे कि इतने चरणों में प्रक्रिया के होने से क्या लाभ हैं? चरणों में उपापचयन होने से बहुत लाभ हैं — (1) चरणों में निकली रासायनिक आबन्ध ऊर्जा का उपयोग ए. टी. पी. संश्लेषण में अपेक्षाकृत अधिक होता है। (2) विभिन्न चरणों में एंजाइम की क्रिया विशेष यौगिकों द्वारा कम या अधिक हो सकती है। इससे यह श्वसन मार्ग को नियंत्रित करता है और कोशिका की आवश्यकता के अनुसार ऊर्जा निर्मुक्त करता है। (3) इसी मार्ग से मध्यवर्ती यौगिक भी बनते हैं जिनका उपयोग ऐमीनो एसिड जैसे अन्य जैव अणुओं के बनाने में होता है।

सारांश

कोशिकीय श्वसन में कोशिका में आक्सीजन का परासरण होता है। इसका उपयोग ग्लुकोस के आक्सीकरण में होता है जिससे कार्बन डाइआक्साइड उत्पन्न होती है और वह कोशिका से परासरण विधि द्वारा बाहर निकल जाती है।

कोशिकीय श्वसन आक्सी अथवा अनाक्सी हो सकता है। दोनों श्वसनों में आरंभिक चरण में ग्लाइकोलिसिस की क्रिया एकसमान होती है। ग्लाइकोलिसिस में ग्लुकोस पायरूविक एसिड में बदल जाता है। इस प्रक्रिया में ए. टी. पी. के दो अणु बनते हैं।

अनाक्सी श्वसन में आक्सीजन अणु की आवश्यकता नहीं होती है। सब्स्ट्रेट से निकले इलैक्ट्रॉन आक्सीजन से जुड़ने की बजाय इलैक्ट्रॉन ग्राही से जुड़ जाते हैं। अनाक्सी श्वसन कोशिका-द्रव्य में होता है। इसके अन्तिम उत्पाद लैक्टिक एसिड अथवा इथानॉल होते हैं।

आक्सी श्वसन माइटोकान्ड्रिया में होता है और इसमें आक्सीजन अणु की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रम दो चरणों में होता है। ये चरण परस्पर निर्भर होते हैं। ये चरण हैं क्रेब्स, ट्राइ कार्बोक्सिलिक एसिड चक्र तथा इलैक्ट्रान संवहन श्रृंखला। माइटोकॉन्ड्रिया में पायरूविक एसिड आक्सीकृत होकर ऐसिटिल CoA बनाता है। ऐसिटिल CoA आक्सीकरण के लिए टी.सी.ए. चक्र में आ जाता है। जहां पर कार्बन डाइऑक्साइड तथा अपचयित को-एंजाइम (NADH & $FADH_2$) बनते हैं। इलैक्ट्रॉन संवहन श्रृंखला में अपचयित को-एंसीटिल एंजाइम पुनः प्राप्त हो जाता है। माइटोकॉन्ड्रिया की भीतरी झिल्ली के इलैक्ट्रान संवहन एंजाइम इलैक्ट्रानों को सजे हुए क्रम में आक्सीजन अणु तक ले जाते हैं जिससे पानी बनता है। इसके साथ ये एंजाइम प्रोटीन को मैट्रिक्स से भीतरी झिल्ली के बाहर की ओर भी स्थानान्तरित करते हैं जिससे एक प्रोटीन ग्रेडिएण्ट बन जाता है। बाद में प्रोटीन भीतरी झिल्ली के कणों द्वारा मैट्रिक्स में वापिस परासरित हो जाता है। इससे ऊर्जा संश्लेषित होती है जिसका उपयोग F_0F_1 सम्मिश्रण की उपस्थिति में ए. टी. पी.

सिंथेज द्वारा ए. टी. पी. बनने में होता है। इस प्रक्रिया को आक्सीकारक फॉस्फोरिलेशन कहते हैं। ए. टी. पी. के उच्च ऊर्जा आबन्ध में स्थित ऊर्जा का उपयोग अन्य जैव प्रक्रियाओं में होता है।

ऑक्सी श्वसन में ग्लुकोस के एक परमाणु से ए. टी. पी. का शुद्ध लाभ 36 परमाणु होता है।

प्रश्नावली

1. निम्नलिखित प्रत्येक सही उत्तर के आगे सही का चिह्न (√) लगाइए।

   (क) टी. सी. ए. चक्र होता है

   (i) राइबोसोम में

   (ii) प्रैना में

   (iii) माइटोकॉन्ड्रिया में

   (iv) अन्तर्द्रव्यी जालिका में

   (ख) ग्लुकोस के एक अणु के पूर्ण आक्सीकरण के बाद यूकैरियोट में ए. टी. पी. के अणु का शुद्ध लाभ होता है :

   (i) 2

   (ii) 36

   (iii) 4

   (iv) 38

   (ग) ग्लाइकोलिसिस तथा टी. सी. ए. चक्र के बीच मध्यवर्ती है :

   (i) पायरूविक एसिड

   (ii) ग्लुकोस-1-6-डाइफास्फेट

   (iii) ओक्जैलो ऐसीटेट

   (iv) एसिटिल CoA

   (घ) माइटोकॉन्ड्रिया को "ऊर्जा ग्रह" कहते हैं। निम्नलिखित में से कौन सा अवलोकन इस कथन की पुष्टि करता है :

   (i) माइटोकॉन्ड्रिया में ए. टी. पी. होता है।

   (ii) माइटोकॉन्ड्रिया में दोहरी झिल्ली होती है।

   (iii) माइटोकॉन्ड्रिया में क्रेब्स चक्र के एंजाइम तथा साइटोक्रोम होते हैं।

   (iv) माइटोकॉन्ड्रिया में लगभग सभी पादप जन्तु कोशिकाओं में पाए जाते हैं।

2. उचित शब्दों से खाली स्थान भरिए :

   (क) एसिटिल CoA, को-एंजाइम A तथा ________ से मिलकर बनता है।

   (ख) प्रोकैरियोट में ग्लुकोस के एक अणु के आक्सीकरण से ए. टी. पी. के ________ अणु बनते हैं।

   (ग) ग्लाइकोलिसिस ________ में सम्पन्न होता है।

   (घ) F_1-F_0 कण ________ के संश्लेषण में भाग लेते हैं।

   (ङ) ग्लाइकोलिसिस के समय एन. ए. डी. एच. के ________ अणु बनते हैं।

3. (i) मनुष्य तथा यीस्ट में कब और कहां अनाक्सी श्वसन होता है?

   (ii) अनाक्सी श्वसन में आक्सी श्वसन की अपेक्षा कम ऊर्जा क्यों उत्पन्न होती है?

   (iii) कोशिका में श्वसनी इलैक्ट्रॉन संवहन तंत्र कहां पर स्थित है?

   (iv) ऑक्सी श्वसन में अन्तस्त इलैक्ट्रॉन ग्राही कौन सा यौगिक है?

4. निम्नलिखित का वर्णन करिए —
   (क) इलैक्ट्रॉन संवहन शृंखला
   (ख) यीस्ट द्वारा किण्वन
   (ग) ग्लाइकोलिसिस
5. आक्सी श्वसन के मुख्य सोपानों (चरण) का वर्णन करिए।
6. ग्लाइकोलिसिस, क्रेब्स टी. सी. ए. चक्र तथा इलैक्ट्रान संवहन शृंखला में क्या संबंध है?
7. आप यह कैसे दिखाएँगे कि यीस्ट आक्सी श्वसन तथा अनाक्सी श्वसन दोनों ही कर सकता है?
8. श्वसन में सोपानों में ऊर्जा निकलने के क्या लाभ हैं?

अध्याय 11
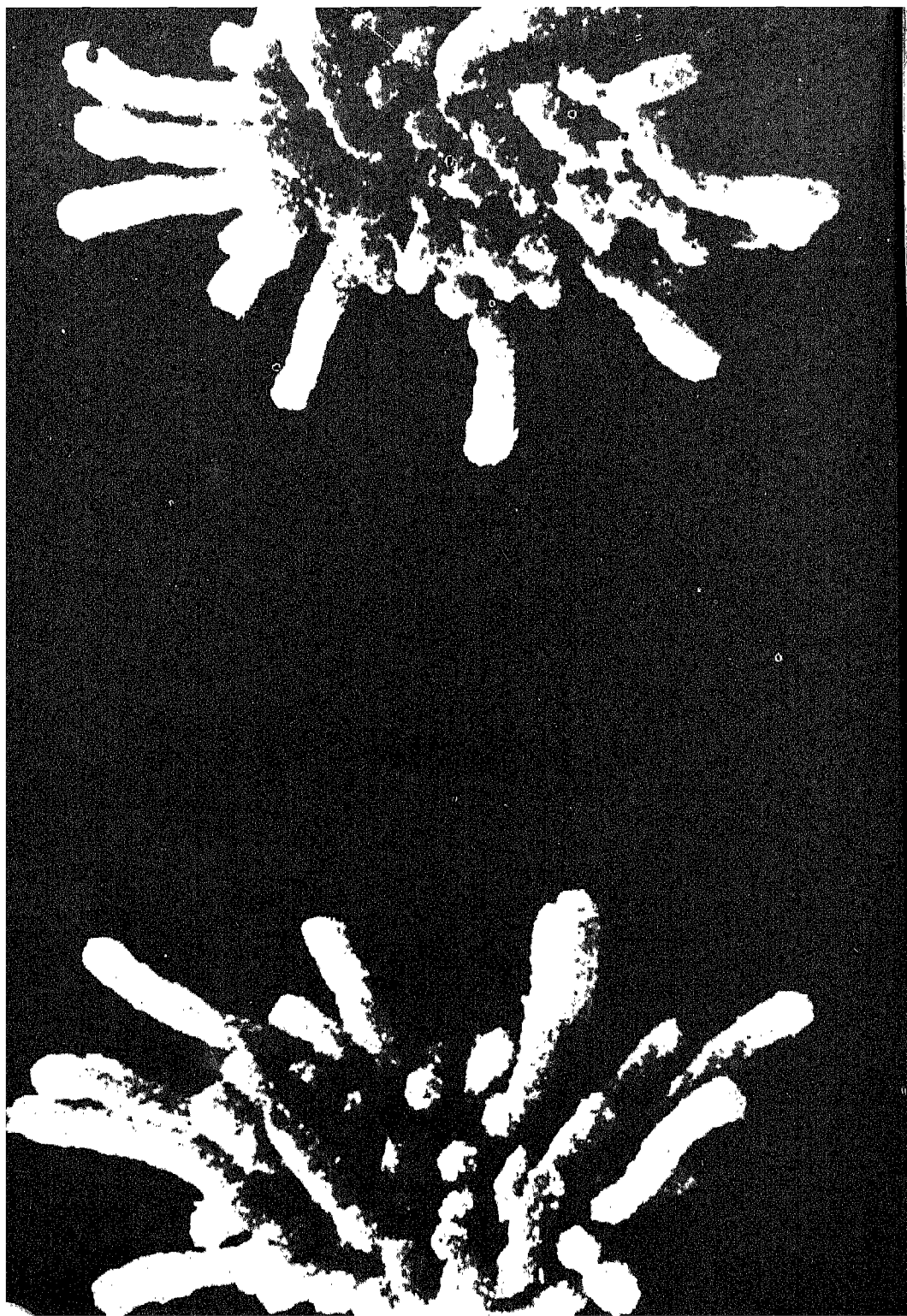
कोशिका जनन

प्रत्येक बहुकोशिकीय जीव चाहे वह सूक्ष्मदर्शी शैवाल हो, आम का वृक्ष हो अथवा मनुष्य हो, सभी अपना जीवन एक एकल कोशिका-अंडे से आरम्भ करते हैं। आप अनुमान लगा सकते हैं कि ह्वेल तथा हाथी में अरबों कोशिकाएं बनाने के लिए जीव में कोशिका गुणन की लगभग सुचारू प्रणाली होगी। सभी जीवों में कोशिका विभाजन की प्रणाली आधारभूत रूप से एक ही होती है और इससे जीव में एकता प्रदर्शित होती है। इस अध्याय में आप पढेंगे कि कोशिका में जनन कैसे होता है।

सभी कोशिकाएं पूर्ववर्ती कोशिकाओं के विभाजन से उत्पन्न होती हैं। जीवन की निरन्तरता कोशिका विभाजन पर निर्भर करती है। कायिक कोशिकाएँ माइटोसिस विधि से विभाजित होती हैं। कुछ अपवादों के अतिरिक्त जिसके विषय में आप तीसरी इकाई में पढेंगे, जनन कोशिकाएँ मिआसिस विधि से विभाजित होती हैं और उनसे युग्मक बनते हैं

कोशिका चक्र

विभाजन में सक्षम प्रत्येक कोशिका को *कोशिका चक्र* में से गुजरना पड़ता है। कायिक कोशिका चक्र में प्रायः एक लम्बी *अन्तरावस्था* होती है जिसके बाद एक छोटी सी माइटोटिक अथवा *"एम" (M phase) अवस्था* होती है (चित्र 11.1)। अन्तरावस्था के पहले चरण को *जी$_1$ अवस्था* कहते हैं। इस अवस्था के दौरान कोशिका के माप में वृद्धि होती है और उसमें सक्रिय आर. एन. ए. तथा प्रोटीन का संश्लेषण होता है। इस अवस्था में कोशिका में बहुत सी शरीर क्रियात्मक प्रक्रियाएं होती हैं और ऐसी प्रणाली उत्पन्न हो जाती है जिससे कि कोशिका में अगला चरण आरम्भ हो सके। लेकिन उसके डी एन. ए. की मात्रा में कोई अन्तर नहीं आता। कोशिका चक्र के अगले चरण जिसे *संश्लेषी अथवा "एस" (S phase) अवस्था* कहते हैं, में प्रत्येक क्रोमोसोम के डी. एन. ए. से एक नई डी. एन. ए. की प्रतिकृति बनती है। इस प्रकार प्रत्येक क्रोमोसोम में दो साथी क्रोमैटिड हो जाते हैं जो आपस में *सैंट्रोमियर* से जुड़े रहते हैं। इस प्रकार कोशिका में द्विगुणित क्रोमोसोम की संख्या बनी रहती है लेकिन अब उसमें जीन के द्विगुणित सैट होते हैं। कोशिका के तीसरे चरण को *जी$_2$ (G_2 phase) अवस्था* कहते हैं। इस अवस्था में भी आर. एन. ए. तथा प्रोटीन संश्लेषण होता है और कोशिका स्वयं को *माइटोटिक अवस्था* के लिए तैयार करती है। जी$_2$ अवस्था के दौरान

कोशिका में द्विगुणित कोशिका 2n से दोगुने क्रोमोसोम 4n हो जाते हैं। 'जी' अक्षर का उपयोग माइटोटिक तथा 'एस' अवस्था के अन्तराल को प्रदर्शित करता है।

माइटोसिस

कायक कोशिका में माइटोटिक विभाजन द्वारा दो समान संतति (पुत्री) कोशिकाएँ बनती हैं। पुत्री कोशिका के बनने से कुछ पहले ही क्रोमैटिड आपस में अलग होते हैं। जी$_2$ (G_2phase) अवस्था के बाद केन्द्रक विभाजन तथा कोशिका द्रव्य विभाजन होता है।

माइटोसिस चार अवस्थाओं — प्रोफेज, मेटाफेज, ऐनाफेज तथा टेलोफेज — में पूरा होता है (चित्र 11.2)। *प्रोफेज* में क्रोमोसोम छोटे तथा मोटे हो जाते हैं और सैंट्रोमियर से जुड़े रहते हैं। केन्द्रिका तथा केन्द्रक आवरण लुप्त हो जाते हैं। ज्यों-ज्यों प्रोफेज अवस्था आगे बढ़ती रहती है, सूक्ष्म नालिकाओं से एक द्विध्रुवीय तर्कु बनता है। प्रोफेज की बाद की अवस्था में क्रोमोसोम तर्कु के भूमध्य रेखा में आ जाते हैं (प्रोमेटाफेज)। मेटाफेज में क्रोमोसोम तर्कु के भूमध्य रेखा पर सज जाते हैं। इस अवस्था में क्रोमोसोम की आकारिकी का अध्ययन सबसे अच्छी
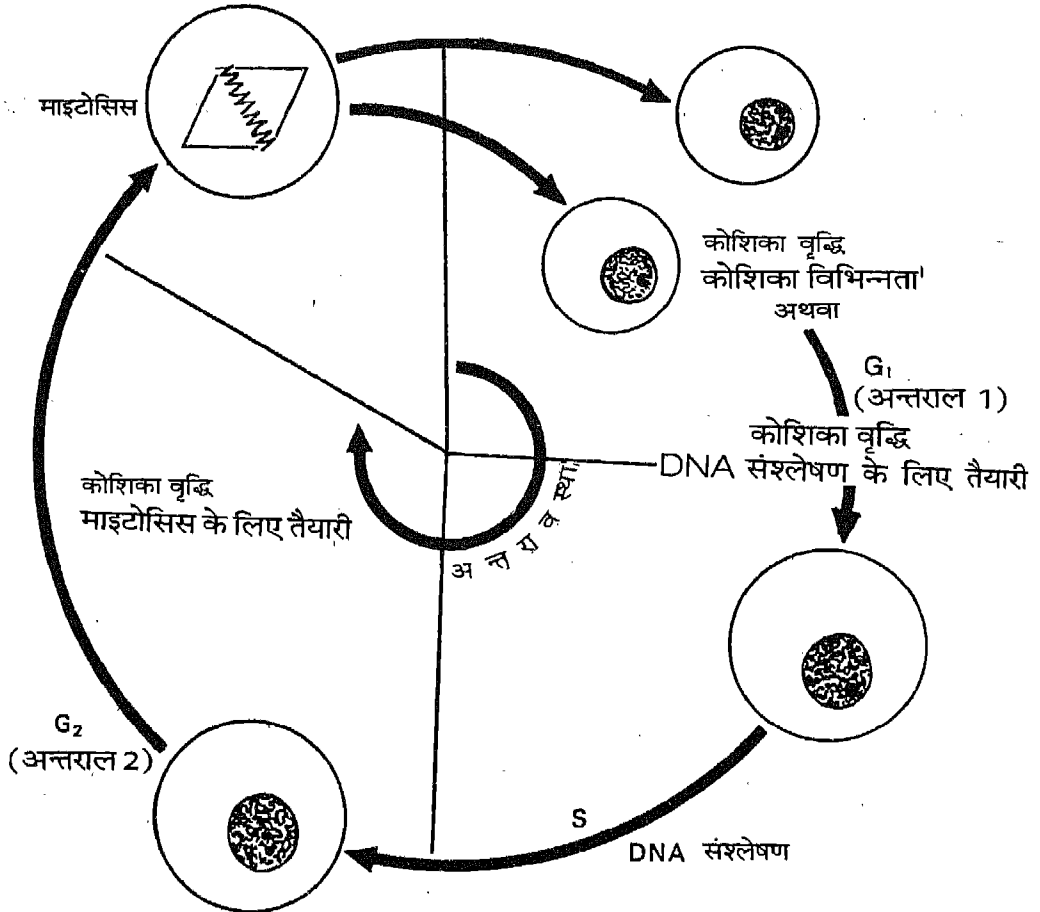
11.1 एक कायिक कोशिका का कोशिका चक्र
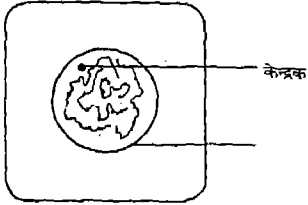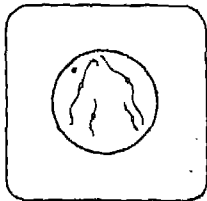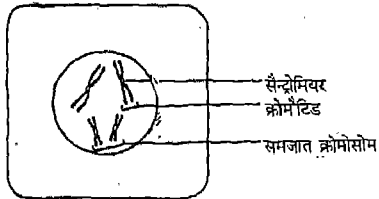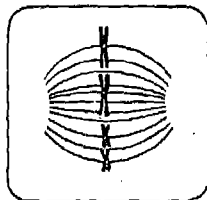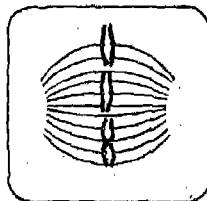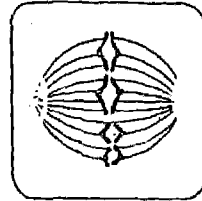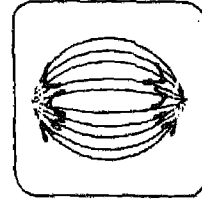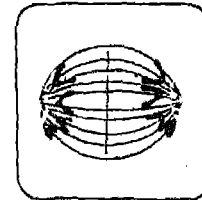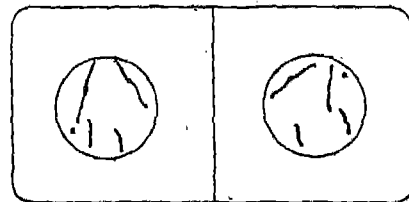
11.2 माइटोसिस के समय एक पादप कोशिका में परिवर्तन

प्रकार से किया जा सकता है क्योंकि क्रोमोसोम बहुत ही मोटे तथा छोटे होते हैं। प्रत्येक क्रोमोसोम सैंट्रोमियर की सहायता से तर्कु तन्तु से जुड़ा रहता है। *ऐनाफेज* अवस्था में प्रत्येक क्रोमोसोम के दो साथी क्रोमैटिड एक दूसरे से अलग हो जाते हैं और तर्कु के विपरीत ध्रुवों पर पुत्री क्रोमोसोम के रूप में चले जाते हैं। ऐसा सैंट्रोमियर के विभाजन तथा तर्कु तन्तु के सिकुड़ने से सम्भव होता है। इस प्रकार विकासशील दोनों पुत्री केन्द्रिकाओं में क्रोमोसोम की निश्चित द्विगुणित संख्या रहती है। *टेलोफेज* में केन्द्रक आवरण तथा केन्द्रक पुनः प्रकट हो जाते हैं। तर्कु लुप्त हो जाता है और क्रोमोसोम अकुंडलित हो जाते हैं और पुनः क्रोमैटिन तन्तु बन जाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक पुत्री कोशिका का केन्द्रक पुनः बन जाता है।

कोशिका द्रव्य विभाजन टेलोफेज में आरम्भ होता है। प्राणी कोशिका में एक खांच बनती है जो गहरी होती जाती है और अन्ततः कोशिका दो पुत्री कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है। पादप कोशिका में कोशिका द्रव्य विभाजन के समय खांच नहीं बनती बल्कि उसमें एक कोशिका प्लेट बनती है।

क्रिया-कलाप : एक प्याज लीजिए। इसके आधार से तेज ब्लैड की सहायता से पुरानी जड़ें काट दीजिए। प्याज को पानी से भरे कोनीकल फ्लास्क अथवा बोतल पर इस प्रकार रखिए कि इसका कटा हुआ आधार पानी में डूबा रहे। कुछ दिनों बाद आपको असंख्य नई जड़ें दिखाई देंगी। जड़ की चोटी से पांच मिलीमीटर के टुकड़े काटिए और उन्हें 1 : 3 की एसिटिक एसिड तथा मीथानॉल के मिश्रण में रखिए। इसे एक घण्टा रखा रहने दीजिए। इस प्रक्रिया को स्थिरीकरण कहते हैं। दो या तीन जड़ के टुकड़े लीजिए और उसे 15 मिनट तक हाइड्रोक्लोरिक एसिड में रखकर 60° सेंटीग्रेड तक गर्म करिए। जड़ की चोटियों को निकाल लीजिए और उसे पानी से अच्छी प्रकार साफ कर लीजिए। एक स्लाइड लीजिए और उस पर एक बूंद एसिटो कारमीन के घोल की डालिए। इसमें जड़ की चोटी को रख दीजिए और इसे कवर स्लिप से ढक दीजिए फिर धीरे-धीरे पैन्सिल या ग्लास की छड़ से कवर स्लिप को थोड़ा-थोड़ा दबा-दबा कर कोशिकाओं को अलग कर लीजिए। ये ध्यान रखिए कि उसमें कोई हवा के बुलबुले न रहें। पहले कम शक्ति वाले सूक्ष्मदर्शी से विभाजित कोशिकाओं को देखिए। विभाजित कोशिकाओं में क्रोमोसोम गहरे रंग के हुए होंगे। माइटोसिस की विभिन्न अवस्थाओं को सूक्ष्मदर्शी में आयल इमरसन लैंस की सहायता से देखिए। आप मेटाफेज अवस्था में क्रोमोसोम की संख्याओं को गिन सकेंगे।
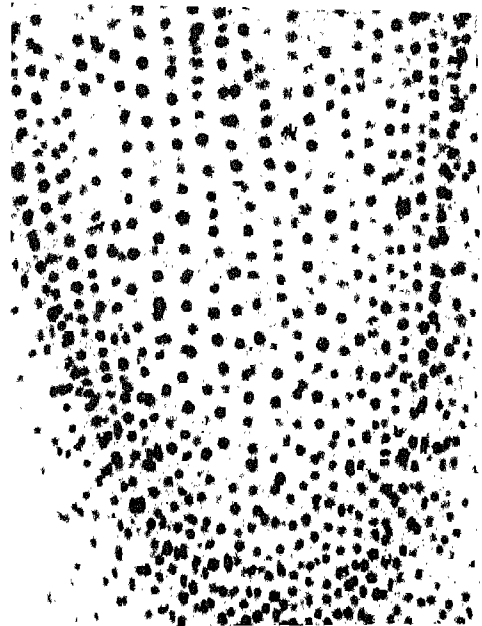
11.3 माइटोसिस में कुछ कोशिकाओं को दिखाने के लिए प्याज की जड़ की चोटी की अनुदैर्ध्यकाट

माइटोसिस की सार्थकता

आपने पढ़ा है कि माइटोसिस में डी. एन. ए. कोशिका में द्विगुणित हो जाता है और पुत्री कोशिकाओं में जनक कोशिका के समान एकसमान ही जीनी संघटन तथा समान संख्या में क्रोमोसोम वशांगत होते हैं।

एक बहुकोशिकीय जीव की कायिक कोशिकाएं माइटोटिक विभाजन द्वारा बनती है। बहुकोशिकीय जीवों की कायिक वृद्धि और इसके हानिकृत कोशिकाओं की जगह नई कोशिकाएं बनना भी माइटोसिस विधि द्वारा होता है। पैतृक कोशिकाओं के माइटोसिस विभाजन द्वारा नई-नई रुधिर कोशिकाएं, आंत कोशिकाएं तथा त्वचा की कोशिकाएं नियमित रूप से बनती रहती हैं।

कॉल्चिसिन — माइटोटिक विष

एल्केलाइड कॉल्चिसिन जिसे *क्रोकस-कॉल्चिकम आटमनेल* से प्राप्त किया जाता है, कौशिका विभाजन के लिए एक विष है। यह माइटोटिक तर्कु को नहीं बनने देता। क्रोमोसोम द्विगुणित होते हैं लेकिन वे उसी कोशिका में रह जाते हैं जिससे कि क्रोमोसोम कि संख्या बढ़ जाती है। ऐसी कोशिकाओं को बहुगुणित कोशिका कहते हैं। पादप प्रजनकों ने कॉल्चिसिन प्रेरित बहुगुणन का उपयोग कृषि तथा बागबानी की नई-नई फसलें उत्पन्न करने में किया है।

मिओसिस

लैंगिक जनन करने वाले सभी द्विगुणित जीवों में नर तथा मादा युग्मक बनाने के लिए नर तथा मादा जनन कोशिकाओं में मिओसिस विभाजन होता है। मिओसिस विभाजन की प्रक्रिया दो चरणों मिओसिस-1 तथा मिओसिस-2 में पूरी होती है जिसके कारण चार पुत्री कोशिकाएं बनती हैं (चित्र 11.4)। आपने पढ़ा है कि माइटोटिक विभाजन में केवल दो पुत्री कोशिकाएं बनती हैं।

मिओसिस-1 को न्यूनीकरण विभाजन भी कहते हैं क्योंकि इसमें क्रोमोसोम की संख्या आधी रह जाती है। इसमें प्रोफेज-1, मेटाफेज-1, एनाफेज-1, टेलोफेज-1 अवस्थाएं होती हैं।

प्रोफेज I : इस अवस्था में पांच उपविभाजन होते हैं (चित्र 11.4) —

(क) लेप्टोनीमा : इस अवस्था में क्रोमेटिन तन्तु कुंडलित हो जाते हैं और बहुत अधिक सिकुड़ जाते हैं। प्रारम्भ में क्रोमोसोम एक अकेले धागे की तरह दिखाई देते हैं। वे फिर सिकुड़ कर मोटे हो जाते हैं।

(ख) युग्मसूत्र (जाइगोनीमा) : प्रत्येक द्विगुणित केन्द्रक में एक जोड़ी समान गुणसूत्र होते *(समजात गुणसूत्र)* हैं। लैंगिक जनन के समय एक एक क्रोमोसोम नर तथा मादा से आता है। समजात गुणसूत्र में प्रत्येक गुण सूत्र की लम्बाई बराबर होती है तथा उनके सैंट्रोमियर की स्थिति भी समान होती है।

(ग) स्थूलसूत्र (पेकीनीमा) : युगल क्रोमोसोम को अब 'युग्ली' कहते हैं।वे और भी छोटे तथा मोटे हो जाते हैं। इस अवस्था में प्रत्येक समजात के दो साथी क्रोमैटिड सुस्पष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार चार क्रोमैटिड का एक 'चतुष्ठ' बन जाता है। समजात में स्थित दो विपरीत क्रोमैटिडों में आनुवंशिक पदार्थों का आदान-प्रदान होता है। इस प्रक्रिया में पहले क्रोमैटिड टूटते हैं फिर वे जुड़ जाते हैं। इस प्रक्रिया को *जीन-विनिमय* कहते हैं। जिस क्षेत्र में जीन-विनिमय होता है उसे *काईऐज्मेटा* कहते हैं।

(घ) द्विसूत्र (डिप्लोनीमा): समजात गुणसूत्रों में सिकुड़न होती रहती है। प्रत्येक युग्ली के दोनों क्रोमोसोम एक दूसरे से दूर चले जाते हैं और अन्ततः काइऐज्मेटा लुप्त हो जाते हैं।

(ङ) पारगतिक्रम (डायकाइनेसिस) : इस अवस्था के अन्त में केन्द्रिक तथा केन्द्रक का आवरण लुप्त हो जाता है और तर्कु बनना आरम्भ हो जाता है।

मेटाफेज I: इस अवस्था में तर्कु बनना पूरा हो जाता है और युग्ली तर्कु की भूमध्य रेखा पर सज जाते हैं।

मिआसिस ।
E पारगतिक्रम
F मेटाफेज ।
G ऐनाफेज ।
D द्विसूत्र
प्रथम मिआटिक
प्रोफेज,
(प्रोफेज ।)
C स्थूलसूत्र
B युग्मसूत्र
A लेप्टोनीमा
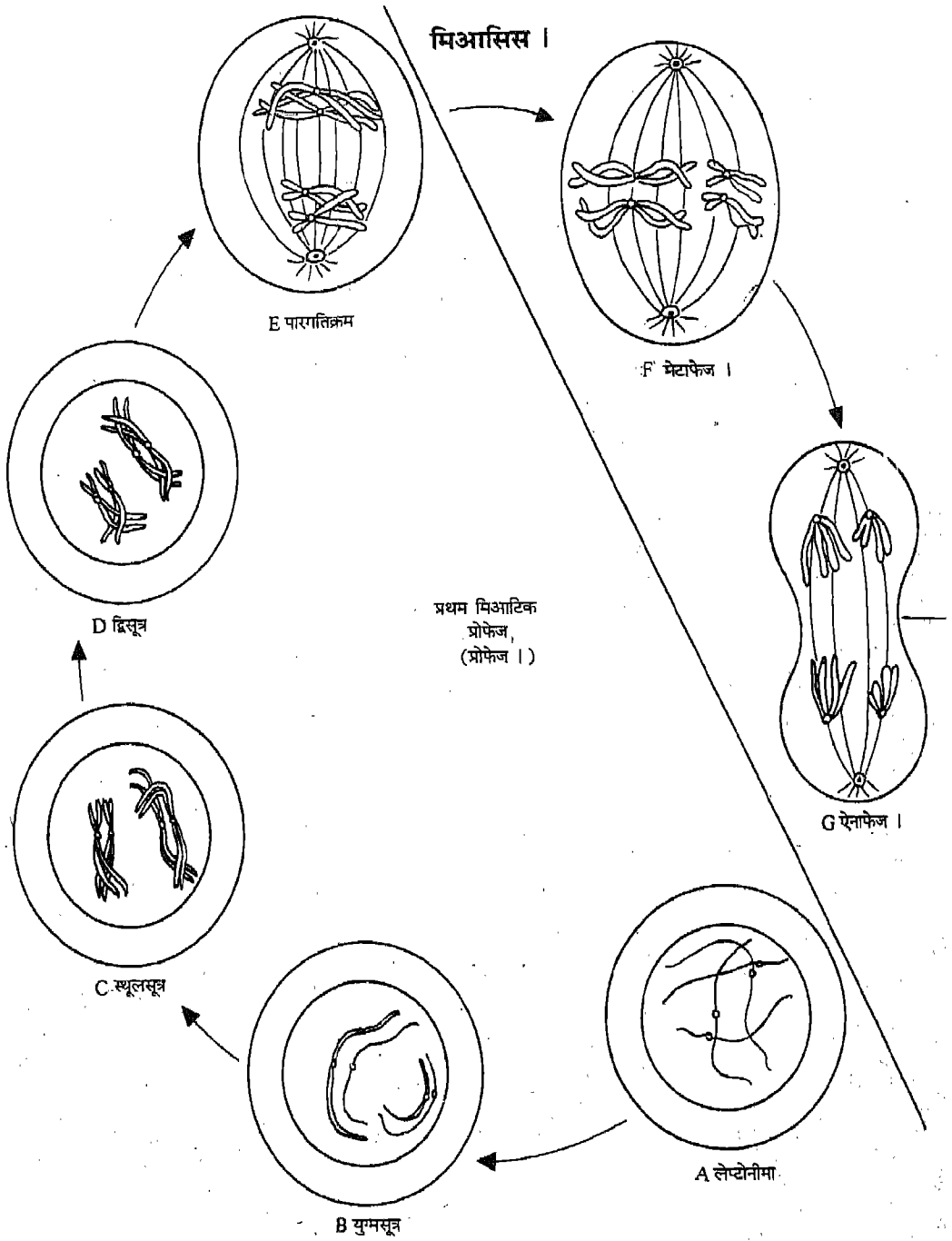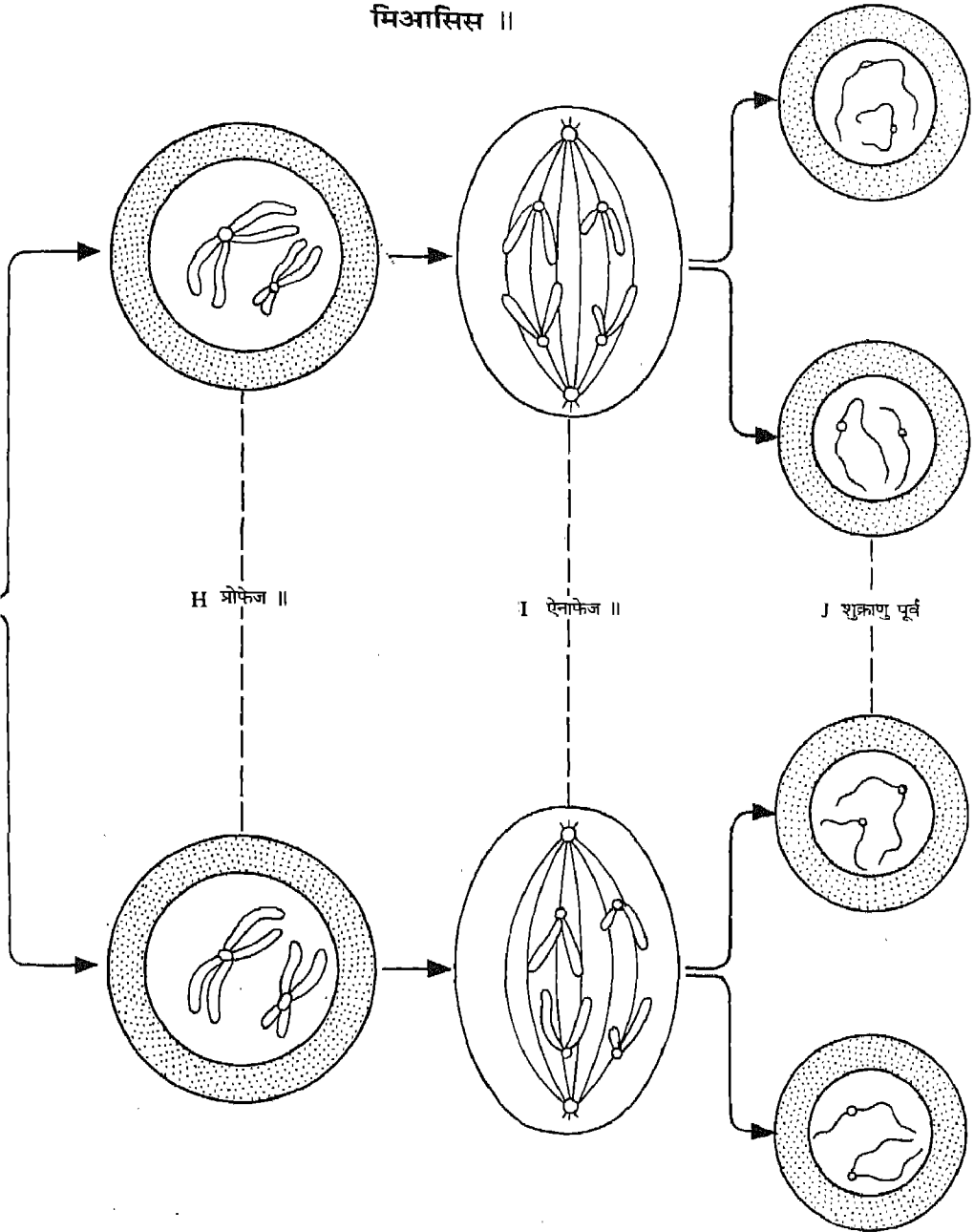
'11.4 पुमणु जनन कोशिका की मिआसिस । तथा ॥ की अवस्थाएं। चार अगुणित शुक्राणुपूर्व बनते हैं।

ऐनाफेज I: प्रत्येक युग्ली के क्रोमोसोम के दोनों क्रोमैटिड अभी तक भी सैंट्रोमियर की सहायता से जुड़े रहते है। इस प्रकार समजात क्रोमोसोम का एक क्रोमोसोम ही प्रत्येक ध्रुव पर जाता है। परिणामस्वरूप,प्रत्येक पुत्री कोशिका के केन्द्रक में वास्तविक कोशिका के केन्द्रक से आधे क्रोमोसोम होते हैं।

टेलोफेज I: प्रत्येक ध्रुव पर क्रोमोसोम के चारों ओर केन्द्र आवरण पुनः बन जाता है। इसके बाद कोशिका द्रव्य विभाजन से दो अगुणित पुत्री कोशिकाएँ (द्वियक) बन जाती हैं।

मिओसिस I तथा मिओसिस II के बीच अल्पकाल के लिए एक *अन्तरावस्था* जिसे अन्तरालावस्था कहते हैं, बनती है। इस अवस्था में यद्यपि डी. एन. ए. की प्रतिकृति नहीं बनती है। कभी कभी टेलोफेज I में पुत्री केन्द्रक पूर्ण विकसित नहीं होते। बल्कि प्रत्येक ध्रुव पर पहुँचने वाले क्रोमोसोम सीधे ही प्रोफेज II की अवस्था में पहुंच जाते हैं।

मिओसिस II : यह माइटोसिस के समान होता है और इसे समसूत्री विभाजन भी कहते हैं। इसमें *प्रोफेज, मेटाफेज, एनाफेज तथा टेलोफेज अवस्थाएँ* होती हैं।

प्रोफेज II : प्रत्येक क्रोमोसोम के साथी क्रोमैटिड सिकुड़ने आरम्भ हो जाते हैं।

मेटाफेज II : एक द्विध्रुवीय तर्कु बन जाता है। क्रोमोसोम की अगुणित संख्या तर्कु की भूमध्य रेखा पर सज जाती है। प्रत्येक क्रोमोसोम में दो क्रोमैटिड होंगे जो सैंट्रोमियर से जुड़े होंगे।

ऐनाफेज II: सैंट्रोमियर अलग हो जाते हैं और मेटाफेज-II के साथी क्रोमैटिड एक पुत्री क्रोमोसोम के रूप में दो ध्रुवों पर चले जाते हैं।

टेलोफेज II : क्रोमोसोम अकुंडलित हो जाते हैं। केन्द्रिका तथा केन्द्रकीय आवरण पुनः बन जाते हैं।

कोशिका द्रव्य विभाजन से दो केन्द्रक अलग अलग हो जाते हैं। इस प्रकार मिओसिस I की प्रत्येक पुत्री कोशिका से मिओसिस II के बाद दो अगुणित पुत्री कोशिकाएं बनती हैं अर्थात् मिओसिस में एक द्विगुणित कोशिका से चार अगुणित कोशिकाएं (युग्मक) बनती हैं।

मिओसिस की सार्थकता

लैंगिक जनन के लिए अगुणित नर तथा मादा युग्मक बनते हैं। निषेचन के समय एक नर युग्मक (शुक्राणु) एक मादा युग्मक (अंडा) से संगलित हो जाता है। केन्द्रकीय संगलन से युग्मनज में पुनः क्रोमोसोम की वास्तविक संख्या दो गुनी हो जाती है। युग्मनज से संतति बढ़ती है। इस प्रणाली से किसी भी स्पीशीज की क्रोमोसोम की संख्या पीढ़ी बनी रहती है।

मिओसिस में क्रोमोसोम के विनिमय से चार पुत्री कोशिकाएं बनती हैं जो आपस में तथा पैतृक कोशिका से अपने आनुवंशिक गुणों में भिन्न होती हैं। इस प्रकार मिओसिस से संतति के आनुवंशिक गुणों में कुछ भिन्नता आ जाती है।

कैंसर — एक पहेली

कोशिका विभाजन को नियमित करने वाले कारकों का ठीक ढंग से पता नहीं है। ऐसा समझा जाता है कि शरीर किसी प्रकार कोशिका गुणन को नियमित करता है। कुछ ऊतकों तथा अंगों (अस्थिमज्जा, फेफड़ों, छाती आदि) में अनियंत्रित कोशिका विभाजन होने से कैंसर हो जाता है। कुछ प्रकार के विकिरण, धूम्रपान से बने रसायन, वाहनों द्वारा उत्पादित विषैले पदार्थ एवं रासायनिक उद्योग कैंसर के कारक समझे जाते हैं। मनुष्य के आहार के अवयव, कुछ विषाणु तथा पूर्व संचित आनुवंशिक पदार्थ भी कैंसर को बढ़ावा देते हैं। अब ऐसे स्पष्ट प्रमाण हैं कि विशेष जीव ("ऑनकोजीन") कैंसर के लिए उत्तरदायी होता है। कैंसर को प्रारम्भिक अवस्था में ही रोकने के लिए रेडियोथिरैपी, कीमोथिरैपी तथा शल्य चिकित्सा का सहारा लिया जाता है। हालांकि कैंसर का कोई भी उपचार अभी तक विकसित नहीं हुआ है। सम्भवतः जीव वैज्ञानिकों तथा वैज्ञानिकों का ध्यान किसी भी मानव रोगों

पर इतना नहीं गया जितना कि कैंसर पर। कैंसर को समझना तथा उसका उपचार करना विज्ञान के इतिहास में एक सबसे कठिन क्षेत्र होने का उदाहरण है। आधुनिक वैज्ञानिक विधियों तथा यन्त्रों के उपयोग के बावजूद भी कैंसर एक चुनौती है।

सारांश

कोशिका विभाजन से कोशिका की प्रतिकृतियां बनती हैं। कायिक कोशिकाएं माइटोसिस द्वारा विभाजित होती हैं। एक द्विगुणित जीव में मिओसिस द्वारा युग्मक बनते हैं। प्रत्येक अन्तरावस्था केन्द्रक में माइटोसिस से पहले "एस" चरण में डी.एन.ए. की प्रतिकृतियां बनती हैं। "एस" चरण से पहले जी$_1$ तथा बाद में जी$_2$ चरण आते हैं। इन दोनों चरणों में आर.एन.ए. तथा प्रोटीन का संश्लेषण होता है। जी$_2$ के बाद माइटोटिक अवस्था आती है। माइटोसिस के दौरान केन्द्रकीय आवरण लुप्त हो जाता है और माइटोटिक तर्कु बनता है। प्रत्येक क्रोमोसोम के दोनों क्रोमैटिड सैंट्रोमियर से जुड़े रहते हैं। क्रोमोसोम तर्कु की भूमध्य रेखा पर सज जाते हैं। उसके बाद दोनों क्रोमैटिड एक दूसरे से अलग हो जाते हैं और तर्कु के विपरीत ध्रुवों पर चले जाते हैं और पुत्री क्रोमोसोम बन जाते हैं। प्रत्येक ध्रुव पर पुनः केन्द्रक बन जाता है। जन्तु कोशिका में कोशिका द्रव्य विभाजन खांच बनने से होता है। पादप कोशिका में कोशिका द्रव्य विभाजन कोशिका प्लेट के बढ़ने से होता है। माइटोसिस का महत्व यह है कि इसके द्वारा एक कोशिकीय जीव अपनी संख्या बढ़ाते हैं तथा बहुकोशिकीय जीव समान आनुवंशिका वाली कोशिकाओं की संख्या बढ़ाते हैं जो उसकी कायिक रचना करते हैं। यह टूटी फूटी (विकृत) कोशिकाओं को भी बदलने में सहायता करती है।

जनन कोशिकाएं मिओसिस द्वारा युग्मक बनाती हैं। अन्तरावस्था में डी.एन.ए की मात्रा दोगुनी हो जाती है। मिआसिस-I अथवा न्यूनीकरण विभाजन के दौरान समजात क्रोमोसोम युग्ल बन्दी करते हैं जिससे युग्ली कहते हैं। समजात क्रोमोसोमों के साथी क्रोमैटिडों में आपस में काइएज्मा बनने तथा विनिमय द्वारा आनुवंशिक पदार्थों का आदान-प्रदान होता है। इसके बाद दोनों क्रोमोसोम अलग हो जाते हैं और तर्कु के विपरीत ध्रुवों पर चले जाते हैं। इस प्रकार एक द्विगुणित कोशिका से दो अगुणित कोशिकाएं बन जाती हैं। इसके बाद एक अल्पकालीन अन्तरालावस्था आती है जिसमें डी.एन.ए. की प्रतिकृति नहीं बनती। मिओसिस II माइटोसिस के समान होता है और इसे समासूत्री विभाजन कहते हैं। निषेचन के समय अगुणित युग्मकों के संगलन से पुनः द्विगुणित अवस्था आ जाती है। मिओसिस की सार्थकता यह है कि इससे आनुवंशिक विभिन्नता आ जाती है। यह पीढ़ी क्रोमोसोम की संख्या निश्चित करती है।

प्रश्नावली

1. उचित शब्दों से रिक्त स्थानों को भरिए:
   (क) कायिक कोशिकाओं में गुणन__________ द्वारा होता है।
   (ख) माइटोसिस से केन्द्रकों में क्रोमोसोम की संख्या __________ रहती है।
   (ग) मिओसिस के दूसरे विभाजन को__________ विभाजन कहते हैं।
   (घ) तर्कु तन्तु से क्रोमोसोम के जुड़ने वाले भाग को__________ कहते हैं।
   (ङ) मिओसिस में अगुणित अवस्था__________ अवस्था से आती है।
2. निम्नलिखित में से कौन सा कथनः (अ) प्रोफेज, (ब) मेटाफेज, (स) ऐनाफेज, (द) टेलोफेज
   (य) माइटोसिस, की अन्तरावस्था से सबंधित है?
   (क) केन्द्रकीय झिल्ली पुनः बनती है।
   (ख) क्रोमोसोम सबसे मोटे तथा सबसे छोटे होते हैं।

(ग) क्रोमोसोम कुंडलित होना आरम्भ करते हैं।
(घ) सैन्ट्रोमियर दो में विभक्त हो जाता है।
(ङ) केन्द्रक सक्रिय होता है लेकिन क्रोमोसोम स्पष्ट नहीं होते।
(च) इसके बाद कोशिका द्रव्य विभाजन होता है।
(छ) प्रत्येक क्रोमोसोम में दो क्रोमैटिड होते है।

3. निम्नलिखित प्रत्येक के लिए एक वैज्ञानिक शब्द बताइए :
(क) दो माइटोटिक विभाजनों के बीच का समय।
(ख) विभाजन की वह प्रक्रिया जिससे क्रोमोसोम की संख्या आधी रह जाती है।
(ग) ऐसा बिन्दु जिस पर दो साथी क्रोमैटिड जुड़े रहते हैं।
(घ) कोशिका चक्र की वह अवस्था जिसमें आर.एन.ए. तथा प्रोटीन का संश्लेषण होता है।
(ङ) केन्द्रकीय विभाजन

4. निम्नलिखित प्रत्येक सही उत्तर के आगे सही का चिन्ह ($\surd$) लगाइए :
(क) मिओटिक विभाजन से चार पुत्री कोशिकाएँ एक के बाद एक अर्थात् विभाजन होने से बनती हैं जिसमें –
(i) प्रथम विभाजन समसूत्री, दूसरा न्यूनीकरण।
(ii) प्रथम विभाजन न्यूनीकरण तथा दूसरा समसूत्री।
(iii) दोनों विभाजन न्यूनीकरण।
(iv) दोनों विभाजन समसूत्री।
(ख) माइटोसिस से बनी दोनों पुत्री कोशिकाओं में होता है –
(i) डी.एन.ए. की समान मात्रा लेकिन क्रोमोसोम का एक सैट पैतृक कोशिका से भिन्न होता है।
(ii) डी.एन.ए. की समान मात्रा और पैतृक कोशिकाओं के समान क्रोमोसोम का सैट।
(iii) डी.एन.ए. की आधी मात्रा और पैतृक कोशिकाओं के समान क्रोमोसोम का सैट।
(iv) डी.एन.ए. की दोगुनी मात्रा और पैतृक कोशिकाओं से भिन्न क्रोमोसोम का सैट।

5. अन्तरावस्था से संबंधित कोशिका चक्र के तीनों चरणों के नाम बताइए और उनका वर्णन करिए।
6. माइटोसिस के प्रोफेज़ के समय केन्द्रक में होने वाले परिवर्तनों का वर्णन करो।
7. माइटोसिस तथा मिओसिस में मुख्य अतंर क्या है?
8. मिओसिस की सार्थकता का वर्णन करिए।
9. 'X'पौधे में $2n=8$ क्रोमोसोम के बराबर है। इस पौधे में मिओसिस की विभिन्न अवस्थाओं के चित्र बनाइए।
10. समजात क्रोमोसोम क्या होते हैं? मिओसिस के दौरान समजात क्रोमोसोमों में क्या होता है?
11. मिओसिस की ऐनाफेज अवस्था माइटोसिस की ऐनाफेज अवस्था से एक आवश्यक बात में भिन्न होती है। इस भिन्नता का वर्णन करिए और स्पष्ट करिए कि यह किस प्रकार पुत्री कोशिकाओं को प्रभावित करती है?
12. बहुकोशिकीय जीवों में दो प्रकार का कोशिका विभाजन क्यों आवश्यक है? इन दोनों में से कौन से विभाजन द्वारा कोशिकाओं की संख्या अधिक बढ़ती है?
13. एक सुप्रसिद्ध जीव वैज्ञानिक ने कहा था कि किसी भी जीव के जीवन इतिहास का सारांश ''युग्मक संगलन, समसूत्री विभाजन तथा न्यूनीकरण विभाजन है''। टिप्पणी कीजिए।

पठनीय पुस्तकें

1. एम्बरॉस, इ.जे. तथा डी. एम. ईस्टी, 1979, *सेल बायोलोजी,* इंगलिश लैंग्वेज बुक सोसायटी/ नेल्सन, वाल्टन ऑन-थेम्स।
2. बायोलोजिकल साइंस कुरीकुलुम स्टडी (बी.एस.सी.एस) 1980, *बायोलोजिकल साइंस, एन इंक्वायरी इन टु लाइफ,* हारकोर्ट ब्रेस जोवानोविच, न्यूयार्क।
3. बेरस, एम. डब्ल्यु. 1983, *सेल*, सौंडर्स।
4. ब्रेसचर, एम.एस. 1985, दि मॉलेक्युल्स ऑफ दि सेल मेम्ब्रेन, *साइंस अमेरिकन,* 253, 100-
5. डारनेल, जे.ई. जूनियर, 1985, आर.एन.ए., *साइंस अमेरिकन,* 253, 68 -
6. दास, डी. 1985, *बायोकैमिस्ट्री,* एकाडैमिक पब्लिशर्स, कलकत्ता।
7. डी रोबर्टीस, इ.डी.पी. तथा इ.एम.एफ.डी रोबर्टीस जूनियर, 1980, सेल एंड मॉलेक्यूलर बायोलोजी, सौंडर्स।
8. डूलिटिल, आर.एफ. 1985 प्रोटीन , *साइंस अमेरिकन,* 253, 88-
9. फेलसनफेल्ड, जी. 1985, डी.एन.ए., *साइंस अमेरिकन,* 253, 58
10. गीज़, ए.सी. 1979, *सेल फिजियोलॉजी,* सौंडर्स।
11. हिन्कले, पी.सी. तथा आर.ई. मैककार्टी, 1978, हाऊ सेल मेक ए.टी.पी., *साइंस अमेरिकन,* 238, 104-23
12. होम, जे.आर. 1986, *फंडामेन्टल ऑफ जनरल, आर्गेनिक एंड बायोलोजिकल कैमिस्ट्री,* जोन विले एन्ड सन्स, न्यूयार्क।
13. फावसेट, डी. डब्ल्यू. 1981, *दि सेल : इट्स आर्गेनल एंड इन्कुलुजन,* सौंडर्स।
14. कार्प, जी. 1984, *सेल बायोलोजी,* मैकग्रा हिल।
15. किन्ना, बी. (सम्पादन) 1986, *सेल बायोलोजी,* एलन एन्ड अनविन
16. लेक, जे.ए. 1981, दि राइबोसोम, *साइंस अमेरिकन,* 245, 84-97
17. लेहनिंजर, ए.एल. 1982, *प्रिंसिपल ऑफ बायोकैमिस्ट्री,* वर्थ पब्लिशर्स इंक. न्यूयार्क।
18. माजिया, डी 1974, दि सैल साइकिल, *साइंस अमेरिकन,* 230, 55-64
19. नोस्टॉग, के. एंड ए.जे. मैरिक्स, 1985, *बायोलोजी,* चार्ल्स मेरिल पब्लिशिंग कं. कोलम्बास ओहियो।
20. शारॉन, एन. 1980, कार्बोहाइड्रेट, *साइंस अमेरिकन* 243, 90-
21. सिम्पकिन, जे. एंड जे.आई. विलियम्स 1984, एडवांस्ड *बायोलोजी,* इंगलिश लैंग्वेज बुक सोसायटी/ बेल एन्ड हायमैन, लन्दन।
22. स्टरीर, एल. 1981, *बायोकैमिस्ट्री,* डब्ल्यू.एच. फ्रीमैन एन्ड कं., सेन फ्रांसिस्को।
23. वालेस, आर.ए., जे.एल. किंग एंड जी.पी. सौंडर्स, 1984, *बायोस्फियर दि रिआल्म ऑफ लाइफ,* स्कोल फोर्समैन एंड कं. ~~ग्लेनबीओ III~~